# हिमज्योति

## 2021

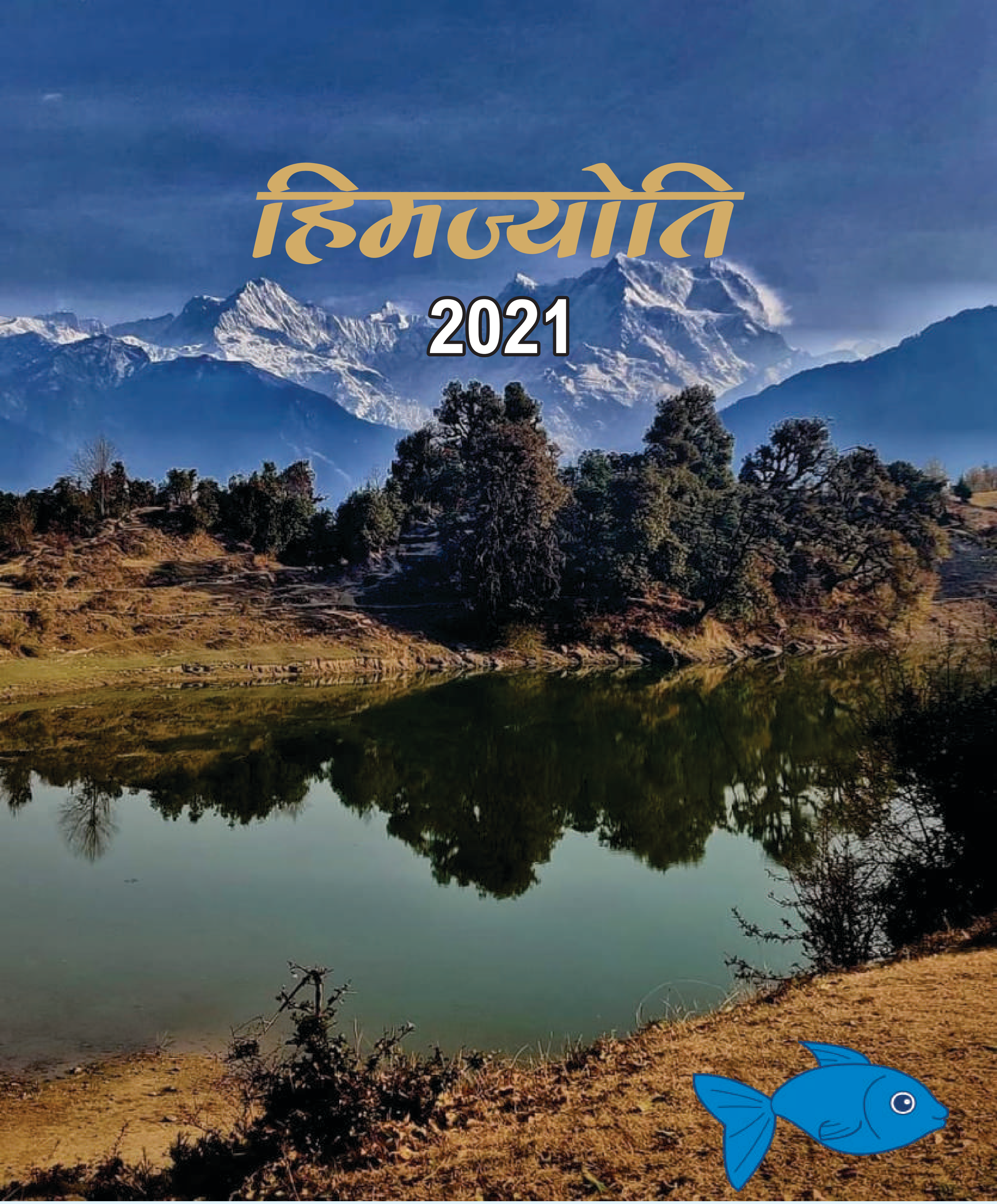


भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल-263 136, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

# हिमज्योति

शुभकमानाओं सहित

**डॉ. प्रमोद कुमार पाण्डेय**

निदेशक

भाकृअनुप-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल-263 136, जिला-नैनीताल (उत्तराखण्ड)

शीतजल मात्स्यकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# हिमज्योति

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
भीमताल-263 136, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

*सम्पादन एवं अनुवाद*

**अमित कुमार जोशी**

*आवरण पृष्ठ सज्जा*

**रविन्द्र पोस्ती**

*टंकण*

**ललिता आर्या**

*संकल्पना, मार्गदर्शन एवं प्रकाशन*

**डा. प्रमोद कुमार पाण्डेय**

निदेशक

भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल–263 136, जिला–नैनीताल (उत्तराखण्ड)

*रूपरेखा एवं मुद्रण*

**बाइट्स एण्ड बाइट्स**, बरेली

मो. 94127 38797; Email: sandybly@gmail.com

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

ICAR

## प्रशस्ति-पत्र

# गणेश शंकर विद्यार्थी हिन्दी पत्रिका पुरस्कार

वर्ष 2020 के दौरान 'क' और 'ख' क्षेत्र में स्थित संस्थानों में भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल, नैनीताल द्वारा प्रकाशित हिन्दी पत्रिका "हिमज्योति" को द्वितीय पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।

दिनांक: 16 जुलाई, 2021
नई दिल्ली

(सीमा चोपड़ा)
निदेशक (राजभाषा)

महानिदेशक
(भा.कृ.अनु.प.)

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# अनुक्रमणिका

## मत्स्य पालन एवं प्रबन्धन

1. हिमालय क्षेत्र की एक अत्यंत लोकप्रिय मत्स्य प्रजातिः असेला स्नोट्राउट

   *कृपाल दत्त जोशी*

2. हिमालयी क्षेत्रों में मत्स्य पालन के द्वारा आर्थिक–सामाजिक विकास की अपार संभावनाऐं

   *डी. सर्मा, पार्थ दास एवं अमित कुमार सक्सेना*

3. बीज संचय के लिए मत्स्य प्रजातियों का चयन

   *आर.एस. पतियाल, एन.एन. पांडे, बीजू सैम कमलम् एवं एस.के. मलिक*

4. पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य आखेट एवं इको–टूरिज्म की सम्भावनायें

   *आर.एस. पतियाल एवं एन.एन.पांडे*


## रोग

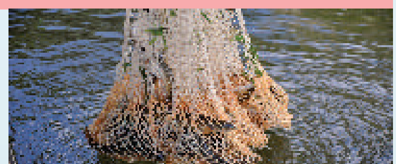

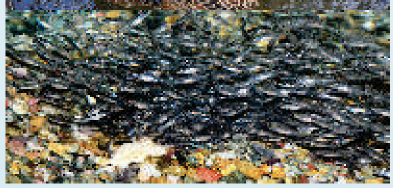


1. जल कृषि प्रणाली में मछलियों के रोग प्रबंधन के उत्तम उपाय

   सौरव कुमार

2. जैविक उपचारः जलीय पारिस्थितिक तंत्र से प्रदूषण को खत्म करने के लिए पर्यावरण अनुकूल दृष्टिकोण

   मनीष कुमार दुबे, रिनी जोशी, प्रकाश शर्मा एवं देबाजीत सर्मा


## कृषि

1. आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस और बाजार में शीर्ष आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ऐप्स का उपयोग

   *सत्य प्रकाश एवं अशोक कुमार सिंह*

2. औषधि–वाटिका

   *प्रसून कुमार त्रिपाठी*

3. सम्पोषित कृषि व्यवस्था के लिए इको–इंटेन्सीफिकेशन में सूक्ष्म जीवों की भूमिका

   *हेमराज छीपा*

4. बागवानी फलों के प्रकार एवं उसके कलम/पौध की खरीदी करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

   *के.बी. कथीरीया*

5. भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में विशिष्ट मक्का खेती की संभावना और महत्व

   *प्रमोद कुमार पांडेय*

6. बदलते जलवायु परिवेश में मूँगफली की खेती

   संजय कुमार, आर.के. तिवारी, शैलेश कुमार एवं विद्यापति चौधरी

## कृषि


7. मंडुवा या रागी की उन्नत खेती
*विद्यापति चौधरी, संजय कुमार, आर.के. तिवारी एवं रंजन कुमार*

8. बदलते मौसम में सोयाबीन की खेती
*संजय कुमार, आर.के. तिवारी, शैलेश कुमार एवं विद्यापति चौधरी*

9. बाजरा की वैज्ञानिक खेती
*विद्यापति चौधरी, शैलेश कुमार, रंजन कुमार एवं विद्यापति चौधरी*

10. अरहर की वैज्ञानिक खेती
*संजय कुमार, आर.के. तिवारी, शैलेश कुमार एवं विद्यापति चौधरी*

11. उच्च–तकनीकी बागवानी एवं इसके कारक
*दिनेश कुमार यादव, एम.एल. जाखड़ एवं एम.आर. चौधरी*

12. ढींगरी (आयस्टर) मशरूम का उत्पादन कैसे करें?
आर.सी. जोशी

13. उत्तराखण्ड में व्यवसायिक पुष्प– ग्लैडियोलस के उत्पादन की तकनीक
*हरीश चन्द्र आर्या*

14. फूलों के शहर में
*पी.के. त्रिपाठी*

15. ऋतुवार मौनवंश प्रबन्धन
*हरीश चन्द्र तिवारी*

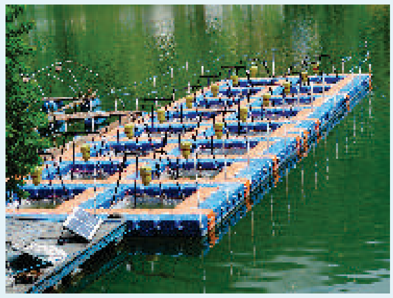

## कविता/कहानी


1. हम पहाड़ी
*–शारदा मालरा*

2. जलचरी
*–इंदिरा पाण्डेय*

3. ऐसा क्यूँ
*–शारदा मालरा*

4. सूक्ष्म जीवन
*–कृष्णा काला*

5. छुट्टन की डॉक्टरी
*–सुभाष चंदर*

6. ट्रेल पास आधी सदी बाद
*–अनूप साह*

7. अतीत के झरोखे से
*– अजय रावत*

## अन्य


1. अवध की मछलियां: एक रोचक खोज
   *डा. रमेश सोमवंशी*
2. संचार माध्यम जागरूकता किसानो की पूँजी
   *सत्य प्रकाश*
3. शरीर के अंगो के समानांतर बनावट के खाद्य खाऐं स्वस्थ रहें
   *ममता तिवारी*
4. जल की रानी से मत्स्य उद्योग तक
   *एन.एन. पाण्डे*
5. शीतजल मत्स्य पालन के द्वारा रोजगार का सृजन
   *एस. अली, एम.एस. अखतर एवं डिम्पल ठकुरिया*

# निदेशक की कलम से......

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय भीमताल एक राष्ट्रीय संस्थान है, जो देश के शीतजलीय परिवेश में मत्स्य पालन, मत्स्य संसाधन, संरक्षण एंव तकनीकी प्रचार-प्रसार को सरल बनाने हेतु अनुसंधान कर रहा है। शोध-कार्यों को जनमानस की आम भाषा में लिखने, रूचि पैदा करने, बढ़ावा देने एवं हिन्दी का प्रचार-प्रसार वैज्ञानिकों, अधिकारियों एंव कर्मचारियों मे करने के लिये संस्थान हिन्दी में पत्रिकाओं का प्रकाशन करता आ रहा है। संस्थान में इस वर्ष राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने की दिशा में विशेष प्रयास किये गए हैं, जिसके फलस्वरूप शोध क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति हुई है। कृषि कार्य में मुख्यत: ग्रामीण परिवेश के लोग संलग्न हैं और वे हिन्दी बोल व समझ लेते हैं। हमारा संस्थान शोध उपलब्धियों को आम कृषकों तक पहुँचाने एवं उन्हे लाभान्वित करने के उद्देश्य से संस्थान द्वारा विकसित सभी उन्नत प्रजातियों एवं उनकी उत्पादन तकनीकी से सम्बन्धित प्रसार पुस्तिकाओं को हिन्दी में प्रकाशित करता आया है तथा संस्थान की समाचार पत्रिका, वार्षिक पत्रिका आदि में शोध उपलब्धियों का सारांश दिया जाता रहा है। इसके साथ-साथ संस्थान में प्रशिक्षण कार्यक्रमों को हिन्दी में भी सम्पन्न किया जाता हैं। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए संस्थान की हिन्दी पत्रिका "हिमज्योति" के इस अंक में विभिन्न प्रकार के विषयों से सम्बधित लेखों को विस्तृत रूप में प्रकाशित किया जा रहा है। इस प्रकाशन में शिक्षाविदों, वैज्ञानिकों, तकनीशियनों, अनुसंधानकर्ताओं के लेखों तथा अन्य अधिकारियों व कर्मचारियों द्वारा प्रस्तुत लेखों को समाहित किया गया है।

इसके लिए मै संस्थान के हिन्दी अनुभाग, लेखकों एवं सम्पादक को बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि यह संस्थान भविष्य में भी राजभाषा की प्रगति की दिशा में अग्रसर रहेगा।

शुभकामनाओं सहित।

**(प्रमोद कुमार पाण्डेय)**
निदेशक

# सम्पादकीय.......

यह निदेशालय एक ऐसी संस्था है जहां शीतजल की विभिन्न मत्स्य प्रजातियों पर अनुसंधान कार्य किऐ जाते हैं, साथ ही इस निदेशालय के वैज्ञानिकों के निर्देशन में विभिन्न छात्र-छात्राओं को अनुसंधान कार्य कराये जाते हैं। हम को ज्ञात है कि कृषि वैज्ञानिकों और किसानों के बीच की दूरी को कम सभी करने में हिन्दी व अन्य भारतीय भाशाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस संस्थान ने अपने इस दायित्व का निर्वाह भी पूर्णरूप से किया है। इस संस्थान ने मत्स्य पालन की नई-नई तकनीकों के प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी के महत्व को आत्मसात करते हुए ज्ञान-विज्ञान के अनुसंधान एवं परिणामों के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग को विशेश महत्व दिया है। इस हेतु हिमज्योति पत्रिका के द्वारा मत्स्य पालन तथा कृषि से सम्बन्धित जानकारियों को पाठकगणों/मत्स्य कृषकों तक पहुंचाने का प्रयास किया गया है। यह प्रकाशन पाठकों के लिए विशुद्ध रूप में हिन्दी में तैयार कर प्रस्तुत की जा रही है।

वैश्वीकरण एवं सूचना-प्रौद्योगिकी क्रान्ति के इस दौर में जबकि अंग्रेजी हमारे परिवेश पर पूरी तरह से छाई हुई प्रतीत होती है, हिन्दी में किसी नियमित प्रकाशन का विचार मात्र ही, और वह भी एक ऐसे राष्ट्रीय शोध संस्थान में जहाँ कि उच्च-स्तरीय जटिल अनुसंधान कार्य होता है, सतही स्तर पर एक दुर्गम कल्पना प्रतीत होता है। भारतीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वर्तमान परिवेश में अंग्रेजी के अधिपत्य और आधुनिक वैज्ञानिक लेखन की बात करना भी एक बार को अव्यवहारिक सा लगता है, किन्तु यदि हमें अपनी अनुसंधान उपलब्धियों को जन-साधारण तक पहुँचाना है तो हमें इस अव्यवहारिक दिखने वाले कार्य को व्यवहारिक बनाना ही होगा, अर्थात् हिन्दी में वैज्ञानिक लेखन को प्रोत्साहित करना होगा। पत्रिका को रूचिकर बनाने के उदेश्य से इस पत्रिका में विभिन्न विषयों जैसे मत्स्यपालन, कृषि, उद्यान, कहानी/व्यंग्य/यात्रा संस्करण आदि लोगो को भी सम्मिलित किया गया है।

पत्रिका प्रकाशन में प्रेरणा स्रोत संस्थान के निदेशक डा. प्रमोद कुमार पाण्डेय का हम हार्दिक आभार व्यक्त करते है जिनके कुशल मार्गदर्शन व सत्त् सहयोग से यह कार्य सम्भव हो सका। हम इस संस्थान व अन्य संस्थानों के उन सभी लेखकों, रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं जिन्होंने अपने प्रासंगिक लेखों द्वारा पत्रिका में अपना योगदान दिया। संस्थान में राजभाषा नीति के प्रभावी कार्यान्वयन व हिन्दी के प्रोत्साहन हेतु भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद मुख्यालय, नई दिल्ली में निदेशक (राजभाषा) सीमा चोपड़ा हमें समय-समय पर उचित मार्गदर्शन देते रहीं है, जिसके लिए हम उनका हृदय से आभार व्यक्त करते हैं।

इन्ही शब्दों के साथ 'हिमज्योति' का यह अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। हमें आपके बहुमूल्य विचारों, सुझावों और रचनाओं की प्रतीक्षा रहेगी। इस पत्रिका को भविष्य में और अधिक रूचिकर एवं उपयोगी बनाने में हमें आप सभी का सहयोग यथावत मिलता रहेगा, इसी आशा और विश्वास के साथ।

**(अमित कुमार जोशी)**
सम्पादक

शीतजल मात्स्यकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# मत्स्य पालन एवं प्रबन्धन

# हिमालय क्षेत्र की एक अत्यंत लोकप्रिय मत्स्य प्रजाति–असेला स्नोट्राउट

**कृपाल दत्त जोशी**
भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय मत्स्य अनुवांशिक संसाधन ब्यूरो, लखनऊ–226 002, उत्तर प्रदेश

हिमालय के पर्वतीय क्षेत्र को प्रकृति ने अनेकों प्राकृतिक, भौगौलिक व जलवायु की जटिलताओं के साथ साथ असीम प्राकृतिक, उपहार भी दिए हैं। जिनमें विभिन्न प्रकार के जीव–जन्तु एवं जल जीव भी सम्मिलित हैं। देश के पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 258 मत्स्य प्रजातियाँ पाई जाती है, जिनमें से 258 प्रजातियाँ हिमालय के जल क्षेत्रों में तथा 91 प्रजातियाँ दक्षिण के पर्वतीय भागों में पाई जाती है, पर्वतीय प्रजातियों में महासीर व स्नोट्राउट प्रमुख है। असेला स्नोट्राउट (साइजोथोरेक्स रिचर्डसोनी) भारतीय उपमहाद्वीप स्थित हिमालय क्षेत्र की एक प्रमुख मत्स्य प्रजाति है। यह मछली हिमालय क्षेत्र में जम्मू कश्मीर से असम, सिक्किम, भूटान, नेपाल, पाकिस्तान तथा अफगानिस्तान तक पायी जाती है। इसे भारतवर्ष के अलग–अलग क्षेत्रों में भिन्न नामों से जाना जाता है। उत्तरांचल में इसे असेला, असला, रसेला, जम्मू कश्मीर व हिमाचल प्रदेश में अलवन, जिस, गुलगुली तथा उत्तर पूर्व में ट्राउट कहा जाता है। यह हिमालय क्षेत्र की वेगवान नदियों, छोटी नदियों तथा पर्वतीय सदाबहार जालों में पायी जाती है। यद्यपि यह अपेक्षतया विस्तृत तापमान सहन कर लेती है। लेकिन असेला ट्राउट के लिए अनुकूल तापमान 15.00 से 24.00 से. के बीच रहता है, क्योंकि इसी तापमान पर मछली की शारिरिक वृद्धि, प्रजनन आदि क्रियाऐं सम्पन्न होती है। कुछ अध्ययनों के अनुसार उच्च तथा मध्य हिमालय क्षेत्र की कुछ नदियों में असेला ट्राउट की प्रतिशत उपलब्धता 23.81 से 98.03 प्रतिशत तक आंकी गयी है, जबकि निम्न पर्वतीय क्षेत्रों में प्रतिशत उपलब्धता कम पाई जाती है। स्वादिष्ट तथा जायकेदार मांस के लिए असेला ट्राउट पूरे हिमालय क्षेत्र में विख्यात है, तथा सिक्किम, भूटान एवं नेपाल में इसकी बहुत अधिक मांग है। कुछ क्षेत्रों में इसे विदेशी इन्द्रधनुषी ट्राउट से भी अधिक पसन्द किया जाता है। यद्यपि पर्वतीय क्षेत्रों में संगठित मत्स्य तथा मत्स्य बाजारों का अभाव है फिर भी यह मछली स्थानीय नदी तथा उपनदियों से उपभोक्ताओं तक पहुँचती है।

## स्नो ट्राउट का आकार

यह मछली आकार में लम्बी तथा अर्द्ध बेलनाकार होती है। इसका निचला होंठ चपटा होता है, जिसके छोटे–छोटे दाने सदृश संरचनाऐं (पैपिली) बनी रहती है जो एक चूषक (सकर) का रूप लिये होती हैं, यह विशिष्ट संरचना असेला ट्राउट की प्रमुख पहचान है। मछली का रंग स्टील सदृश भूरा होता है जो निचले भाग में हल्का हो जाता है, पेट का रंग हल्का सफेद–पीला होता है जिसके कभी छोटे–छोटे भूरे या काले धब्बे होते है। इसका पृष्ठ पक्ष (डौरसल फिन) तथा पुच्छ पक्ष (कॉडल फिन) भूरे–सफेद होते है, अन्य पक्ष भी कमोवेश पीले अथवा इसी रंग के होते है। पार्श्व रेखा (लेटरल लाइन) पूरी तथा धनुषाकार होती है। शल्क बहुत छोटे तथा दीर्घ वृत्ताकार होते है, तथा पिछले भाग के शल्क अपेक्षतया आकार में बड़े होते है।

## आवास स्थान

असेला ट्राउट हिमालय क्षेत्र में 200 से 2000 मी. तक ऊँचाई में स्थित छोटी नदियों तथा सदावहार नालों में मिलती है। यह ग्लेशियर निर्मित नदियों तथा छोटे नालों में भी मिलती है। यह पर्वतीय झीलों व जलाशयों में भी पायी जाती है। हिमालय क्षेत्र में स्थित उपरोक्त जल स्रोतों में 4.1°–28.9° से० तापमान के बीच इसकी उपलब्धता पायी गयी है। यह मछली नेपाल की नदियों में समुद्र तल से 1380 से 2180 मी. ऊँचाई तक में पायी जाती है।

## असेला स्नो ट्राउट का प्राकृतिक एवं प्रतिपूरक आहार

यह मछली जलीय संसाधनों के तल पर रहती है तथा तल भोजी प्रकृति की हैं। यह शाकाहारी तथा तल पर एकत्रित कार्बनिक पदार्थों चट्टानों, पत्थरों तथा नदी व जालों के किनारे स्थित ठोस वस्तुओं पर एकत्रित जैविक आवरण पर भोजन करती है। जिसमें मुख्यता विभिन्न लवक होते है। लेकिन मछली के फाई तल पर उपलब्ध क्रस्टेशियन तथा कीटों के लाखों का भक्षण करते है। असेला ट्राउट तालाब में पालने पर प्रतिपूरक अथवा कृत्रिम आहार भी ग्रहण करती है। लेखक द्वारा किये गये अनेक प्रयोगों के दौरान असेला ट्राउट को कृत्रिम आहार दिया गया जो इसके कुल भार के 1.5% तक था। कृत्रिम भोजन में 38.0% सोयाबीन आटा, 20% मछली चूर्ण तथा 2% विटामिन व खनिज चूर्ण दिया गया। इस कृत्रिम आहार में प्रोटीन की उपलब्धता 32: रखी गयी थी। प्रजनन के पश्चात् प्रस्फुटन के 84–168 घंटों के बादये त्रिम आहार ग्रहण करना प्रारम्भ कर देते है।

## नर व मादा मछली की पहचान

इस मछली की एक बहुत बड़ी विशेषता है कि इसमें प्रौढ नर तथा मादा मछली में लिंग विभेद वर्ष पर्यन्त किया जा सकता है। अन्यथा अधिकतर मछलियों में नर तथा मादा की पहचान प्रजनन काल में अथवा मछलियों का विच्छेदन करने पर ही की जा सकती है। इसमें मादा मछली के पृष्ठ में कांटा (डौरसल स्पाइन) होता है तथा पुच्छ पक्ष की निचला सिरा अधिक लम्बा होता है। इसके अतिरिक्त मछली का शरीर श्लेश्मा युक्त तथा अग्र भाग (स्नाऊट) सामान्य होता है। जबकि नर मछली में पृष्ठ कांटा पतला व कमजोर व पुच्छ पक्ष के दोनों सिरे असमान होते है। शरीर अपेक्षाकृत खुरदुरा होता है तथा अग्र भाग में छिद्रदार होता है प्रजनन काल में यह लक्षण और अधिक दिखायी देते है।

## शारीरिक वृद्वि दर

अन्य पर्वतीय मत्स्य प्रजातियों की तरह असेला ट्राउट की शारिरिक वृद्वि बहुत धीमी गति से होती है। लेखक द्वारा वर्ष 1997 से 2002 तक किये गये एक शोध के अनुसार प्रायोगिक मत्स्य प्रक्षेत्र चम्पावत, उत्तराखंड (समुद्रतल से ऊँचाई 1620 मी.) में इस मछली की वर्ष 1 से 5 तक वृद्वि दर क्रमश: 8.4 सेमी (5.2 ग्राम), 12.1 सेमी. (10.6 ग्राम), 156 सेमी. (20 ग्राम), 18.2 सेमी (44.6 ग्राम) तथा 20.4 सेमी (72.0 ग्राम) पायी गयी, इस प्रकार 5 वर्ष के पालन के पश्चात् यह केवल 20. 4 सेमी तथा वजन 72.0 ग्राम तक ही बढ़ पायी जबकि नदीय वातावरा में इसकी वृद्वि 1 से 5 वर्ष तक क्रमष: 10.22 सेमी, 20.47 सेमी, 20.62 सेमी, 39.14 सेमी तथा 47.00 सेमी तक आंकी गयी है।

## प्रजनन विवरण

नर असेला ट्राउट में लैंगिक परिपक्वता 2 वर्ष की आयु के पश्चात् तथा मादा में तीन वर्ष की उम्र के पश्चात् आती है। इस प्रजाति की मछलियों में प्रजनन वर्ष में दो बार देखा गया है। कम ऊंचाई में (समुद्रतल से 1000 मी. से कम) स्थित नदियों एवं नालों में प्रजनन अप्रैल–मई तथा ऊँचाई वाले समुद्र तल से 1000 मी. से 305 जल स्रोतो में सितम्बर–अक्टूबर में होता है। यह मछली प्रजननकाल में नदियों के निचले भागों से पर्वतीय भागों की ओर प्रवासन करती है तथा अनुकूल क्षेत्र मिलने पर प्रजनन करती है । नदियों अथवा नालों के किनारे छिछले भागों में जहाँ तलीय संरचना बालू व छोटे–छोटे कंकड़ों युक्त होती हैं यह अण्डे देती है। असेला के प्रजनन के लिए 20.0–22.5° से जलीय तापमान तथा 8.0 से 9.2 किग्रा प्रति ली. घुलित आक्सीजन उपयुक्त होते है। इस मछली में कृत्रिम प्रजनन भी कराया जा सकता है। विभिन्न अध्ययनों द्वारा देखा गया है कि यह मछली परिपक्व अवस्था में समस्त अण्डे एक साथ मुक्त करती है। असेला ट्राउट में प्रति किग्रा० मछली से अनुमान व 11,666 से 17,284 अण्डे प्राप्त होते है।

## प्रवासन व्यवहार

असेला बर्फानी ट्राउट पर्वतीय क्षेत्र की एक प्रमुख प्रवासी प्रजाति भी है। यह मछली अनुकूल तापमान तथा उचित भोजन तथा प्रजनन योग्य क्षेत्रों की तलाश में नदियों में आवागमन करती है। यह मछली वर्ष भर अपना अधिकतम समय नदियों व नालों के मध्य तथा ऊपरी भागों में व्यतीत करती है, लेकिन शीतकाल के प्रारम्भ होते ही यह ऊपरी भागों से मध्य भाग तथा फिर निचले भागों की ओर प्रवासन करती है। ज्योंही ऊपरी भागों में नवम्बर–दिसम्बर माह में जलीय तापमान लगभग 13° से कम होने लगता है, यह उच्य पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित नदियों व नालों से निचले भागों की ओर प्रवासन करने लगती है। नदियों अथवा नालों के मध्य अथवा निचले भागों में जलीय तापमान उच्च भागों से अधिक रहता है, जो मछली के शारीरिक क्रियाओं के लिए अधिक उपयुक्त रहता है। इस प्रकार उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में बहने वाली नदियों तथा नालों से इस प्रजाति की मछलियाँ नदियों के मध्य तथा फिर निचली घाटियों या मैदानी क्षेत्र तक आती है। जो अक्टूबर–नवम्बर से फरवरी–मार्च तक रहता है। इस अवधि में मछली के छोटे बच्चे तथा कुछ वयस्क जो नदियों के निचले अपेक्षाकृत गर्म भागों की ओर नहीं आ पाते है नदियों तथा नालों के बीच स्थित गहरे तालाबों की तलहटी में आश्रय लेते है तथा शारीरिक क्रियाओं को न्यूनतम स्तर तक रखते है ।

समस्त प्रवासी असेला ट्राउट नदियों व नालों के घाटियों तथा मैदानी क्षेत्रों में स्थित भाग में अपना शीतकाल व्यतीत करती है। इस अवधि में तापमान अनुकूल रहने के कारण इनकी समस्त शारीरिक जैविक क्रियाऐं सुचारु रुप से चलती रहती है, जिनके अन्तर्गत भोजन, शारीरिक तथा लैंगिग वृद्धि भी सम्मिलित है। प्राय: मार्च माह के पश्चात् नदियों के मध्य तथा ऊपरी भागों में तापमान धीरे–धीरे बढने लगता है, तथा अनुकूल तापमान मिलने पर मछलियाँ मैदानी तथा घाटी क्षेत्रों में स्थित नदी–नालों से अपने पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित मध्य तथा ऊपरी भागों की ओर प्रवासन करती हैं। इस अवधि में अनेक मछलियाँ परिपक्व अवस्था में रहती हैं जो मध्य भागों स्थित अनुकूल प्रजनन क्षेत्रों के मिलने पर प्रजनन क्रिया करते हैं।

ग्रीष्मकाल में प्राय: पर्वतीय क्षेत्र की छोटी नदियों एवं नालों में जल बहाव बहुत कम हो जाता है। यह स्थिति उन जल श्रोतों में होती है जिनके श्रोत वर्षा जल तथा शैल छिद्रों से बहकर

आने वाले जल पर निर्भर होते है। पानी की कमी के कारण इन जल श्रोंतो में निचले भागों से आने वाली असेला प्रवेश नहीं करती है। वह केवल मध्य पर्वतीय क्षेत्र में बहने वाली अपेक्षाकृत पर्याप्त जलराशि युक्त नदियों व नालों में अपना समय व्यतीत करती है।

तत्पश्चात् वर्षा ऋतु में उच्च हिमालयी पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित समस्त नदियाँ व नाले पर्याप्त जलराशि से युक्त हो जाते है लेकिन वर्षा ऋतु के इन जल श्रोतों में ककड़ पत्थरों से परिपूर्ण तथा अत्यधिक वेगवान होने के कारण यह मछली इनमे प्रवेश नहीं करती है लेकिन वर्षा ऋतु की समप्ति पर अगस्त- सितम्बर में जब यह जल श्रोत कमोवेश स्थिर एवं अनुकूल हो जाते है। असेला ट्राउट इनमें प्रवेश करती है तथा उचित स्थानों पर प्रजनन करती है।

### असेला स्नो-ट्राउट में पालन योग्य गुण

यद्यपि असेला ट्राउट मछली में वार्षिक वृद्धि दर बहुत कम पाई गयी है, लेकिन फिर भी यह प्रजाति अनेक विशेषताओं से युक्त है जिसके अन्तर्गत कुछ पालन योग्य गुण भी मौजूद हैं:-

- अन्य पर्वतीय प्रजातियों की अपेक्षा यह मछली विस्तृत तापमान में रह सकती है। यह न्यूनतम 4-5° से. तथा अधिकतम 28.9 से. तापमान में पायी जाती है।
- यह बहते हुए तथा कुछ कम बहाव वाले पानी में आसानी से रह सकती है।
- जलीय प्राकृतिक आहार के अतिरिक्त-प्रतिपूरक आहार भी ग्रहण कर लेती है।
- शाकाहारी प्रकृति की है अत: निम्न पोषी तल में रहती है।
- इस मछली का बीज प्राकृतिक जल श्रोतों में पर्याप्त मात्रा के उपलब्ध रहता है।
- कृत्रिम प्रजनन भी सुगमता से किया जा सकता है तथा बीज उत्पादन किया जा सकता है।
- असेला ट्राउट मछली अपने विशिष्ट स्वाद के लिए हिमालयी क्षेत्र में बहुत पसन्द की जाती है।

लेखक द्वारा किये गए अनेक अध्ययनों में स्नो-ट्राउट मछली की वृद्धिदर बहुत कम पाई गयी है, तथा प्रजाति को आखेट के अनुकूल उचित आकार ग्रहण करने में अनेक वर्ष लग जाते है। लेखक द्वारा इस प्रजाति के पालन, प्रजनन तथा समबंधित विद्याओं में वर्ष 1997 से 2003 तक चम्पावत स्थित फार्म पर अनेकों अनुसन्धान किये गए। स्नो ट्राउट के कृत्रिम प्रजनन एवं नर्सरी पालन में पूर्ण सफलता प्राप्त की गई। जिससे इसके संवर्धन की रह आसान हुई है। वर्तमान समय में इनके आवास क्षेत्रों में हो रहे प्रतिकूल परिवर्तनों तथा अत्यधिक दोहन के कारण असेला ट्राउट की संख्या में निरंतर कमी हो रही है, जो प्रजाति के अस्तित्व के लिए बहुत बड़ा खतरा है। इसलिए इस प्रजाति को संरक्षित करने के लिए समस्त हिमालयी क्षेत्र में इनके संरक्षण हेतु सामुहिक सघन प्रयास करने की आवश्यकता है।

# हिमालयी क्षेत्रों में मत्स्य पालन के द्वारा आर्थिक–सामाजिक विकास की अपार संभावनाऐं

**डी. सर्मा, पार्थ दास एवं अमित कुमार सक्सेना**
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

पर्वतीय क्षेत्र में जहाँ जनसंख्या कभी बहुत कम थी, आज निरन्तर वृद्धि हो रही है जिससे पहाड़ो का आर्थिक–सामाजिक तन्त्र असंतुलित हो रहा है। बेताहाशा बेरोजगारी व पलायन अपना सिर उठा रहे हैं। उत्तराखण्ड में मुख्य नदियों की लम्बाई लगभग 3500 किमी. है तथा झीलों का क्षेत्रफल लगभग 400 हेक्टेयर है। इस जल क्षेत्र में गहन व संकलित मत्स्य पालन करने से इस क्षेत्र की नही वरन् सम्पूर्ण प्रदेश की आर्थिक–सामाजिक स्थिति मजबूत की जा सकती है।

इस क्षेत्र में प्रचुर जल संपदा का जो नदियों, झीलों व तालाबों के रूप में उपलब्ध है अभी तक व्यवहारिक व व्यवसायिक रूप से उपयोग नहीं किया जा सका है। पिछले एक दशक से यहाँ की जनता पारम्परिक फसलों के साथ–सपमि फल व सब्जियों का उत्पादन बखूबी कर रही है। जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ है। नदी, नालों व झीलों के आस–पास अपनी भूमि में किसान सिंचाई हेतु बाँध बनाते है उन छोटे–छोटे बाँधों को गहन मत्स्य–पालन तालाब के रूप में प्रयोग कर मत्स्य उत्पादन किया जा सकता है। व्यापारिक स्तर पर मत्स्य उत्पादन करने से पर्वतीय क्षेत्र में पौष्टिक आहार की कमी को दूर किया जा सकता है। मछली, पोषक तत्वों व खनिज लवणों से युक्त होने के साथ–साथ एक सुपाच्य आहार है। अत: इस क्षेत्र में कुपोषण की विकट स्थिति को दूर करने में मत्स्य एक उपयोगी माध्यम हो सकता है। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में मत्स्य पालन हेतु उपयुक्त देशी व विदेशी प्रजातियाँ जैसे महाशीर, साइजोथोरेक्स, रोहू, कामन कार्प और ट्राउट की प्रजातियाँ पायी जाती है। यह एक हर्ष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षो में कुमाऊँ व गढ़वाल मण्डलों में सक्रिय किसानों ने मछली पालन का कार्य प्रारम्भ किया है। परन्तु उच्च कोटि के मत्स्य बीज, उचित मत्स्य प्रबन्धन व प्रशिक्षण की कमी से मत्स्य उत्पादन संम्भावनाओ के अनुरूप नहीं हो पा रहा है। आज के अधुनिक युग में कोई भी व्यवसाय किसी जाति विशेष पर निर्भर नहीं रह गये है, इसलिये संकलित मत्स्य पालन के द्वारा इस क्षेत्र की विकास की संम्भावनाऐं और अधिक बढ़ सकती हैं। संकलित मत्स्य पालन में मीन के साथ कुक्कुट पालन, बत्तख पालन, पशुपालन अपनाकर कम लागत में अधिक धनोपार्जन किया जा सकता है।

पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य पालन के लिये नई तकनीकी में तालाब व बाँध से लेकर मत्स्य प्रजातियों का चयन, मत्स्य बीज संचय, पोषण, बीज उत्पादन, पानी के भौतिक व रासायनिक गुण, मत्स्य रोग व उनका निराकरण और शिकार तथा विपणन आदि पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। उपरोक्त तकनीकी

के बारे में संक्षेप में यहाँ उल्लेख किया जा रहा है जिससे पर्वतीय तथा मैदानी क्षेत्र के मत्स्य पालक व मत्स्य प्रसार वैज्ञानिक लाभान्वित होगें।

सर्वप्रथम इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखकर मत्स्य पालक को तालाब निर्माण विधि का विशेष ज्ञान होना आवश्यक है जो कि निम्न प्रकार है:-

## तालाब निर्माण व प्रबन्धन

तालाब निर्माण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके लिये छोटे-छोटे 0.3-0.5 एकड़ से लेकर 0.5 हेक्टेयर माप के तालाब उपयोगी होते हैं। तालाब मिट्टी के ही बनाये जाने चाहिए। तालाब में उचित जल प्रवेश व निकास का प्रबन्ध होना चाहिए। जल निकास का प्रबन्ध तली व सतह दोनो ओर से होना चाहिए जिनसे इच्छानुसार जल स्तर बदला जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह से मत्स्य उत्पादन को कई गुना बढ़ाया जा सकता है। तालाब में निरन्तर जल प्रवाह बने रहने से जल के साथ प्राकृितक भोजन व घुलित आक्सीजन प्रवेश करती रहती है दूसरी ओर जल में विभिन्न प्रकार के उपापचयज जैसे अमोनिया, नाइट्रोजन, कार्बन डाई-आक्साइड जो मछलियों के लिये हानिकारक होती है जल निकासी के साथ तालाब से बाहर निकलते रहते हैं। एक के बाद दूसरा तालाब बनाने से मत्स्य फार्म प्रबन्ध व विपणन में विशेष सुविधा होती है। तालाब का खादीकरण एक नाजुक प्रक्रिया है। निर्मित तालाब को पानी से भरने के पश्चात् 2-5 टन गोबर प्रति हेक्टेयर तथा 250 किग्रा. (अनबूझा) चूना प्रति हेक्टेयर डाला जाना चाहिए। पुराने तालाबों में इसकी मात्रा कम कर दी जाती है क्योंकि प्राकृतिक तल होने से उत्पादन का संन्तुलन हो जाता है। सप्ताह में एक बार पानी की भौतिक व रासायनिक गुण जैसे पी. एच मान, घुलित ऑक्सीजन, नाइट्रेट, फास्फेट और क्षारीयता की जाँच अवश्य करनी चाहिए (तालिका-1)। तालाब के बाँध की चौड़ाई कम से कम 3-4 मीटर होनी चाहिए। जिसमें शक आसानी से फल व सब्जी का भी उत्पादन कर सकता है। फल वृक्ष तालाब के पश्चिम दिशा में ही लगाने चाहिए। नदी की ओर भू-क्षरण को रोकने वाले पेड़ तालाब से थोड़ा हटकर ही लगाने चाहिए।

## मत्स्य बीज संचय

तालाब निर्माण के बाद उसमें संख्या व उच्च गुणवत्ता का मत्स्य बीज संचयन अति महत्वपूर्ण कार्य है। प्रथम वर्ष में भौगोलिक परिस्थितियों में उपलब्ध प्रजाति का मत्स्य बीज संचय करना चाहिए तत्पश्चात् द्वितीय वर्ष से स्थानीय तथा अभ्यागत प्रजातियों का संचय करना चाहिए। वायुश्वासी मछली जैसे क्लेरियस व हैटेरोप्न्यूस्टिस की प्रजातियों का संवर्धन भी अच्छी पैदावार दे सकता है। इन प्रजातियों को अधिक संचय दर पर निरन्तर जल-प्रवाह युक्त डिग्गियों या सीमेंण्ट के तालाबों में पूर्ण कृत्रिम भोजन देकर अधिक अच्छा लाभ प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज संचयन के समय वैज्ञानिक तकनीकी का ध्यान रखकर सतह भोजी, मध्य सतह भोजी व तल भोजी प्रजातियों की संख्या क अनुपात ठीक होना चाहिए (तालिका-2)। अधिक संचय दर से अच्छी पैदावार नहीं मिलती है। नई तकनीकी से नपुंषक मछलियों का पालन भी लाभकारी हो सकता है। मछलियों में केवल मादा पैदा करने की विधि विकसित कर ली गई है, जिससे वांछित लिंग की मछली का उत्पादन किया जा सकता है।

नर मछली पैदा करने के लिये 17 अल्फा मिथाइल टैस्टोस्टेरान हारमोन तथा मादा मछली हेतु 17 बीटा स्ट्रेडियाल हारमोन का उपयोग किया जाता है। मछलियों मे हैचिंग के उपरान्त उक्त हारमोन को कृत्रिम भोजन के साथ मिश्रित करके दिया जाता है। इसके अधिक उपयोग से मछली नपुंषक हो जाती है। हारमोन के अतिरिक्त मछलियों में उनके आनुवंशिक तत्वो में थोड़ा परिवर्तन कर नर, मादा तथा नपुंशक मछलियां पैदा की जा सकती हैं। इसके लिये मत्स्य शरीर से प्राप्त अण्डाणु तथा शुक्राणु गर्म अथवा ठण्डी परिस्थिति में एक्सरे प्रघात प्रदान कर लिंग परिवर्तन किया जा सकता है।

## कृत्रिम भोजन

गहन मत्स्य पालन पूर्णरूप से कृत्रिम भोजन पर आधारित होता है। अच्छी मत्स्य पैदावार के लिये उच्च श्रेणी का कृत्रिम आहार होना अत्यन्त आवश्यक है। कृत्रिम भोजन में मछली के लिये आवश्यक सभी अवयव उचित मात्रा में जैसे प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, खनिज लवण और विटामिन आदि मिश्रित रहते हैं। पर्वतीय क्षेत्र की नदियों व झीलों में उपलब्ध प्राकृतिक भोजन कपामे शीघ्र वृद्धि व अच्छे मत्स्य उत्पादन योग्य नहीं माना जाता है। इसलिये तालाबों में मत्स्य पालन हेतु उचित दर से कृत्रिम भोजन दिया जाना चाहिए। यह भोजन मत्स्य अवस्था के आधार पर अलग-अलग ढंग से दिया जा सकता है। फ्राई अवस्था में भोजन का सूखा चूर्ण बनाकर जल सतह में छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था में मिश्रित कृत्रिम भोजन का घोल बनाकर तालाब के चारो ओर छिड़क देना चाहिए। अंगुलिका अवस्था के बाद की अवस्था में दो विधियों से भोजन दिया जा सकता है। पहली विधि में भोजन को मिट्टी के बर्तनों में भिगो कर तालाब के निश्चित स्थानो पर डुबो दिया जाता है दूसरी विधि में नाइलोन के बोरे (चूने या उर्वरक के) की तली में 10-15 छिद्र किये जाते हैं।

उस बोरे में भोजन रखकर एक बाँस सीधा गाड़कर उस पर बोरे को बाँध देते हैं। बोरा जमीन से 20 इंच ऊपर रहना चाहिए। भोजन के समय तालाब में जल प्रवाह रोक देना चाहिए। यह विधि पर्वतीय क्षेत्रों के जल प्रवाहित तालाबों के लिये सर्वोत्तम विधि है। आधुनिक स्वचालित भोजन देने के यंत्रो को भी विकसित कर लिया गया है। जिससे आवश्यकतानुसार भोजन तालाब में आ जाता है ओर भोजन के दुरूपयोग की संभावनायें कम हो जाती हैं (तालिका-3) ।

## मत्स्य बीज उत्पादन

पुरानी पारम्परिक तरीकों में मत्स्य बीज नदियों व अन्य जल धाराओं से फ्राई या अंगुलिका के रूप में एकत्रित कर तालाब में पाला जाता है। जिसमें अच्छी गुणवत्ता का बीज नहीं मिल पाता है। अत: मछली के बीज का उत्पादन वैज्ञानिक विधि द्वारा किया जाना चाहिए। यह विधि दो प्रकार की हो सकती है। प्रथम पारम्परिक हापा विधि है जिसके द्वारा इस क्षेत्र के मत्स्य पालक अपने तालाब में भी मत्स्य बीज का उत्पादन कर सकते है। दूसरी विधि आधुनिक सर्कुलर हैचरी की है जिसमें मत्स्य को कृत्रिम ढंगों जैसे पीयूष ग्रन्थि इन्जेक्शन द्वारा अथवा ओवाप्रिम एवं ओवाटाइड हार्मोनों से उत्प्रेरित कर स्वस्थ व उच्च गुणवत्ता वाले मत्स्य बीज का उत्पादन किसानों द्वारा उपलब्ध किया जा सकता है।

## मछलियों के रोग

मत्स्य के वातावरण में थोड़ा बहुत परिवर्तन मत्स्य पालन को अधिक प्रभावित नहीं करता है लेकिन अधिक प्रदूषण इसके लिये हानिकारक होता है। गहन मत्स्य पालन में अपेक्षाकृत अधिक रोगों का प्रकोप पाया जाता है। कम तापमान के दौरान ही मत्स्य रोगों का आक्रमण होता है इसलिये समय-समय पर तालाब के पानी व मछलियों का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। शीतकाल में तालाब में जाल चलाना चाहिए। रोग का संक्रमण होने पर तुरन्त नियत मात्रा में चूना डालना चाहिए। पोटेशियम परमैग्नेट का 5 प्रतिशत घोल और वालमिड का उचित दर से छिड़काव रोग नियंत्रण में सहायक सिद्ध होता है।

## मछलियों का शिकार एवं विपणन

तालाब का अच्छा प्रबन्ध मत्स्य शिकार व विपणन में बहुत लाभकारी होता है। गहन मत्स्य पालन में लगभग एक साल में मछलियां बेचने लायक हो जाती हैं। इस पद्धति में मछलियाँ एक समान वृद्धि करती हैं इसलिये इन्हें पोषण तालाब से विपणन तालाब में रख देना चाहिए। मत्स्य शिकार के लिये सैदव जाल (ड्रेग नेट) का ही उपयोग करना चाहिए। जाल को प्रयोग करने से पहले पोटेशियम परमैग्नेट के 5 प्रतिशत घोल में 10 मिनट तक डुबा लेना चाहिए, इससे मत्स्य तालाब में किसी प्रकार के संक्रमण को होने से रोका जा सकता है। पर्वतीय क्षेत्र में कुछ ब्राह्मण तथा कुछ वैश्यों को छोड़कर प्राय: सभी लोग मछली खाते हैं इसलिये यहां पर्वतीय क्षेत्र में मत्स्य विपणन में कोई बड़ी समस्या नहीं हो सकती है।

**तालिका 1:** अच्छे उत्पादन के लिये तालाब की भौतिक व रासायनिक गुणों की विशेषता

| | |
|---|---|
| पी. एच मान | 07-09 |
| घुलित आक्सीजन | 06-11 पी.पी.एम. |
| टविलता | 150-200 पी.पी.एम. |
| क्षारीयता | 90-190 पी.पी.एम. |
| नाइट्रेट | 0.2-0.6 पी.पी.एम. |
| फास्फेट | 0.1-0.4 पी.पी.एम. |

**तालिका 2:** मत्स्य पालन में प्रजातियों का संचय अनुपात (संचय दर 2500 अंगुलिकाएं प्रति 0.5 हेक्टेयर)

| स्वभाव | प्रजाति | 6 प्रजाति संवर्धन |
|---|---|---|
| सतह भक्षी | सिल्वर कार्प | 300-500 |
| | कतला | 250-400 |
| मध्य सतह भक्षी | महाशीर | 300-500 |
| | रोहू | 300-600 |
| तल भक्षी | कामन कार्प | 100-300 |
| | साइजोथोरेक्स | 100-200 |

**तालिका 3:** 2500 अंगुलिकाओं के लिये कृत्रिम भोजन की औसत मात्रा किग्रा. प्रतिदिन

| अवधि | कृत्रिम आहार किग्रा. प्रतिदिन |
|---|---|
| प्रथम 120 दिन | 1.5 |
| द्वितीय 90 दिन | 3.0 |
| तृतीय 90 दिन | 4.5 |
| चतुर्थ 90 दिन | 6.0 |
| कुल भोजन मात्रा | 1500 |

*ईश्वर के दर्शन और मित्र का मार्गदर्शन*
*दोनों ही जीवन को प्रकाशित कर देते हैं*

# बीज संचय के लिए मत्स्य प्रजातियों का चयन

आर.एस.पतियाल, एन.एन.पांडे, बीजू सैम कमलम् व एस. के. मलिक
भा.कृ.अनु.प.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

मौसम के अनुसार पहाडी क्षेत्रों में मत्स्य पालकों को माह फरवरी में 2.5–4 इंच तक का मत्स्य बीज संचय करना चाहिए। इसके लिए मत्स्य पालकों को स्वयं मत्स्य बीज का संचय और मत्स्य बीज सम्बर्द्धन करना चाहिए। इसके लिए मत्स्य पालकों को जुलाई–अगस्त में जीरा साइज का मत्स्य बीज खरीद कर उसे फरवरी तक किसी छोटे छोटे तालाब में पालना चाहिए। फरवरी में उसी बीज को तालाब में संचय करने से नवम्बर–दिसम्बर में मछलियाँ बेचने लायक हो जाती है। इस तरह से किसान मत्स्य पालन से अच्छा लाभ प्राप्त कर सकते हैं। तालाब की अच्छी तरह से तैयारी, तालाब सुखाना, खादीकरण, अवांछित जीवा जंतुओं एवं खरपतवारों का उन्मूलन इत्यादि करने के बाद मत्स्य बीज संचय करना चाहिए, परंतु मत्स्य बीज संचयन से पूर्व निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है– जैसे प्लवक स्तर की गणना तथा जल के विषैलेपन की जाँच, सर्वोत्तम प्रजातियों का चयन, बीज की संख्या का निर्धारण, बीज के आकार का निर्धारण तथा विभिन्न प्रजातियों का अनुपात, प्लवक तथा बीज संचय से पूर्व तालाब में प्लवकों के स्तर को मापना भी आवश्यक है क्योंकि ये प्लवक मत्स्य बीज के लिए प्राकृतिक भोजन का कार्य करते हैं। तालाब में प्लवक स्तर 1.0–2.0 मिली. प्रति 50 ली. होना चाहिए। यदि प्लवकों की मात्रा संतोषजनक नहीं है तो मत्स्य बीज संचय से पूर्व दी जाने वाली जैविक खाद की यात्रा की मात्रा को बढाना चहिए। इससे प्लवक स्तर ऊँचा उठने लगता है, जिससे संचित किये जाने वाले मत्स्य बीज को प्रचुर मात्रा में प्राकृतिक भोजन मिलता है। मत्स्य बीज संचित करने से पहले जल के विषैलेपन की जाँच करना जरूरी है क्योंकि मांस भक्षी एवं अनावश्यक मछलियों के उन्मूलन के लिए प्रयोग किये गये विष का प्रभाव पूर्णत: समाप्त हो जाने की पुष्टि के लिए जल की जाँच आवश्यक है। इसके लिए तालाब में हापा बांधकर उसमें मछली के कुछ बच्चों को 24 घंटे के लिए रखते है। इस दौरान यदि मछली के बच्चों की मृत्यु नहीं होती है तो समझना चाहिए कि तालाब मछली बीज संचय के लिए पूर्णत: सुरक्षित है।

मत्स्य प्रजातियों का चयन के लिये सामान्यत: भारतीय प्रजातियों– कतला, रोहू एवं मिगल तथा विदेशी प्रजातियों– सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प है। यदि सम्भव हो तो सभी भारतीय एवं विदेशी प्रजातियों को पालना चाहिए, क्योंकि इन मछलियों में भोजन के लिए आपस में प्रतिस्पर्धा नहीं होती। कतला जल की सतह पर उपलब्ध सूक्ष्म जंतु प्लवकों को खाती है, जबकि रोहू सतह के नीचे पानी की गहरा में उपलब्ध सड़े–गले जैविक पदार्थों एवं वनस्पतियों को खाती है तथा मृगल तालाब के तल में उपलब्ध सड़े–गले जैविक पदार्थों को पसंद करती हैं परंतु इन मछलियों में को भी पादप भोजी नहीं है। अत: कुछ विशेष मछलियों का चयन आवश्यक है जो विदेशी मूल की है। इन मछलियों में सिल्वर कार्प सतह पर रहने वाली हैं तथा ये अपेक्षाकृत वनस्पति प्लवकों को विशेष चाव से खाती है। चूँकि ये पादप भोजी हैं इसलिए इनके बढने की दर भी अन्य मछलियों की अपेक्षा काफी तेज है। दूसरी मछली ग्रास कार्प है जो शैवालों तथा अन्य दूसरी जलीय वनस्पतियों को खाती है। कामन कार्प स्वभाव से सर्वभक्षी होती है और तल में उपलब्ध सभी प्रकार के जैविक पदार्थों को बड़े चाव से खाती हैं। अत: ऊपर बताई गई सभी 6 प्रजातियों की खाने की आदतें एक दूसरे की पूरक हैं और वे तालाब के प्रत्येक स्तर पर पाये जाने वाले खाद्य पदार्थों का पूर्ण उपयोग कर सकती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में कम ऊँचा वाले स्थानों (1000 मी. तक) में छ: प्रजातियों को पाला जा सकता हैं परन्तु 1000 मी. से ऊपर कम तापमान होने के कारण भारतीय प्रजातियो का पालन लाभकारी नहीं है। इसलिए 1000 मी. से ऊपर की ऊँचा में सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं कामन कार्प का पालन लाभदायक हैं। अति सघन मत्स्य बीज की संख्या संचय से मछलियों के बीच प्रतियोगिता प्रारम्भ हो जती है और आक्रामक अंर्तक्रिया के कारण उन्हें तनाव में रहना पड़ता है। तनाव की स्थिति में मछलियाँ भोजन कम ग्रहण करती है जिससे उनकी वृद्धि दर धीमी हो जाती हैं संचित मछलियों की संख्या निश्चित सीमा के बाद बढ़ाने पर उत्पाद दर घटने लगती है। तालाबों में संचित मछलियों द्वारा त्यागे गये मल मूत्र के अधिक जमा होने के कारण भी मछलियों की वृद्धि दर पर बुरा प्रभाव पड़ता है। अत: तालाबों में अधिकतम सीमा से अधिक संचय संख्या बढाने पर अच्छे उत्पादन के बदले आँक्सीजन की कमी तथा अन्य कठिनाईयों की कमी तथा अन्य कठिनाईयों की सम्भावना बढती हैं। पर्वतीय क्षेत्रों में अगर परिपूरक आहार, जैविक एवं रासायनिक खाद निर्धारित मात्रा में उपलब्ध करायी जाये तो 1.0 वर्ग मी. स्थान में 2–3 मत्स्य अंगुलिकाएं संचित की जा सकती

है। अतः 100 वर्ग मी. के तालाब से 75-100 किग्रा. मत्स्य उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य बीज सामान्यतः सभी आकार के मत्स्य बीज उपलब्ध रहते है परंतु बहुत छोटो मत्स्य बीजों की संचय काल में मृत्यु की सम्भावना अधिक होती है। फलस्वरूप संचित मत्स्य बीज की संख्या निर्धारित संख्या से कम हो जाती है, साथ ही विभिन्न प्राजातियों के बीच अनुपात में भी अंतर हो जाता है। दूसरी ओर बहुत बड़े मत्स्य बीज संचय में भी कई प्रकार की कठिनाईया होती है जैसे बड़े मत्स्य बीजों का परिवाहन कठिन होता है तथा ये बीज काफी महंगे भी होते है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए पर्वतीय क्षेत्रों में 2.5-4 इंच आकार के मत्स्य बीज का संचय करना उचित होता है। मत्स्य प्रजातियों का आपस में अनुपात मुख्यतः जिन तालाबों में प्लवकों की अधिकता रहती है उनमें सतह पर रहने वाली मछलियों जैसे कतला तथा सिल्वर कार्प का अनुपात ज्यादा रखना चाहिएद्य प्लवकों में यदि वनस्पति प्लवक अपेक्षाकृत अधिक हैं तो सिल्वर कार्प का अनुपात कतला से अधिक रखना चाहिए। अधिक गहरे तालाबों में जहां बड़ी जलीय वनस्पतियाँ पायी जाती हैं वहां रोहू का अनुपात अधिक रखना चाहिए। अधिक गहरे तालाबों में जहा बड़ी जलीय वनस्पतियाँ पायी जाती हैं वहाँ रोहू का अनुपात अधिक रखना चाहिए। पुराने तालाबों में जहाँ तल में जैविक पदार्थ काफी अधिक मात्रा में उपलब्ध हों उनमें तल में रहने वाली मछलियाँ म्रिगल तथा कामन कार्प का अनुपात अपेक्षाकृत अधिक रखना चाहिए। जिन तालाबों में शैवाल, जलमग्न वनस्पतियाँ उपलब्ध हो वहां ग्रास कार्प का संचय करना चाहिए। साधारणतः मैदानी क्षेत्रो मे छः प्रजाति की मछलियों के लिए संचय अनुपात निम्न प्रकार रखना चाहिए- कतला-10%, म्रिगल-15%, सिल्वरकार्प-20%, रोहू-20%, ग्रास कार्प-10% एवं कामन कार्प-25% तथापि संचय से पूर्व तालाबों की स्थिति का अवलोकन करना अत्यंत आवश्यक हैद्य जहाँ सभी भारतीय या विदेशी प्रजातियों का मत्स्य बीज आसानी से उपलब्ध न हो वहां पर तीन या चार प्रजातियों का पालन करना चाहिए। कतला, रोहू एवं मृगल का संचय करने पर क्रमशः 40:30:30 का अनुपात रखना चाहिए। इसके विपरीत जहाँ केवल विदेशी प्रजाति का संवर्धन करना हो वहाँ सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प एवं कामन कार्प का अनुपात क्रमशः 40:30:30 रखना उचित है। पर्वतीय क्षेत्रों में कच्चे तालाबों में सामान्यतः कामन कार्प की तथा पक्के तालाबों में घास खिलाने पर ग्रास कार्प की अच्छी वृद्धि देखी गयी है।

### मत्स्य संचय के समय ध्यान रखने योग्य छोटी-छोटी बातें

- प्रातःकाल में या सायंकाल में मत्स्य बीज का संचय करना उत्तम होता है।
- पानी का तापमान समान हो सके इस हेतु मत्स्य बीज संचय करते समय मत्स्य बीज के पैकेट/बर्तन को कुछ समय तालाब में बिना खोले रखना चाहिए जिससे तालाब के पानी एवं का तापमान समान हो जाये ।
- मत्स्य बीज परजीवियों के प्रभाव से मुक्त हो इसके लिये मत्स्य बीज को तालाब में छोड़ने से पहले 3 प्रतिशत नमक या पोटेशियम परमैगनेट के घोल में डुबकी लगवानी चाहिए। मत्स्य बीज की संख्या प्रति किग्रा. ज्ञात कर लेनी चाहिए जिससे परिपूरक आहार की मात्रा निर्धारित करने में सुविधा हो।
- मत्स्य बीज खरीदते समय मछलिंयो की संख्या अनुपातानुसार होने चाहिये जिससे विभिन्न प्रजातियों की संख्या का सही अनुपात रखा जा सके।

*हँसता हुआ चेहरा आपकी शान बढ़ाता है, मगर हँसकर किया हुआ कार्य आपकी पहचान बढ़ाता है*

# पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य आखेट एवं इको-टूरिज्म की सम्भावनाएं

आर.एस.पतियाल एवं एन.एन.पांडे
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

भारत वर्ष और प्रदेश के विकास में प्राकृतिक संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पर्वतीय क्षेत्र सदा से ही विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक संसाधन जैसे खनिज, वन, जड़ी बूटी तथा जल सम्पदा का प्रचुर भण्डार रहा है। इन प्राकृतिक सम्पदाओं का संतुलित उपयोग विकास के लिये महत्वपूर्ण कदम होते हैं। आज हम यहाँ पर बात करेंगे पर्वतीय क्षेत्रों में उपस्थित विशाल जल संसाधनों में उपलब्ध मत्स्य संसाधनों, का मत्स्य आखेट हेतु उसका उपयोग कैसे किया जा सकता है मछली पर्वतीय क्षेत्रों में उपलब्ध जल संसाधनों का एक बहुउपयोगी उत्पाद है। इसमें उच्च कोटि का सुपाच्य प्रोटीन पाई जाती है इसकी खेती कर आमदनी बढ़ाई जा सकती है। अब मत्स्य संसाधन का प्रयोग मनोरंजन एवं पर्यटन हेतु नये अवसर पैदा कर रहा है।

वतर्मान मे मत्स्य आखेट एक खेल के रूप मे विकसित हो रहा है और सुदूर नदियों तक एंग्लिग करने हेतु देशी तथा विदेशी आखेटक भ्रमण करते हैं। इस हेतु उत्तराखंड एक बेहतर जगह है और आखेट मत्स्य सम्पदा मुख्यत: यहाँ प्राप्त होती है। इस तरह पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य आखेट की असीम सम्भावनाओं की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है, आपको जानकर आश्चर्य होगा कि भारतवर्ष में लगभग 22000 मत्स्य प्रजातियाँ पायी जाती है, जिसमें से पर्वतीय क्षेत्रों में लगभग 258 प्रजातियाँ पायी जाती हैं तथा उत्तराखण्ड में लगभग 100 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। अब हम चर्चा करेंगे मत्स्य आखेट क्या है? इसका शाब्दिक अर्थ है-मछली का शिकार करना। मछली के शिकार तो कई ढंग से किये जाते हैं, परन्तु इस विद्या में संतुलित ढंग से मछली का शिकार किया जाता है, जिसमें एंगलिंग रॉड जिसे स्थानीय भाषा में काँटा लगाना कहते हैं, का उपयोग किया जाता है। आपने देखा होगा कि पर्वतीय क्षेत्रों में निगाले के डंडे में केंचुआ तथा आटे की गोली लगाकर नदी किनारें में मछली का शिकार करते हैं। इन शिकारियों का मुख्य उद्देश्य रहा है खाने के लियें मछलियों को पकड़ना परन्तु धीरे-धीरे विकास के साथ-साथ इस विद्या का परिष्कृत/ आधुनिक स्वरूप निखर आया, जिसमें खाने हेतु मछली प्राप्त करने के साथ-साथ मछली को पकड़ना एक खेल की तरह स्थापित हो गया है। इस खेल में जो आनन्द, रोमांच की अनुभूति होती है उस अनुभव को ही मत्स्य आखेट/एंगलिंग कहा गया है। अब मछलियां पकड़ना एक खेल कैसे हो सकता है। मछली पकड़ना बहुत आसान नहीं है। इसके लिये धैर्य तथा कुशलता की आवश्यकता होती है। विभिन्न मछलियों की आदतें, खाने का स्वभाव, उनका आकार, उनकी चपलता, संघर्षशीलता के कई पैमाने होते है जिनका सामना करना ही नया अनुभव होता है। इसी क्रम में मत्स्य आखटेकों ने भिन्न प्रकार की मछलियों के लिये भिन्न प्रकार के वेटस, (कॉटा) एंगलिंग रॉड तथा अलग-अलग क्षमता के धागों का विकास किया है। जिस आखेटक को ज्ञान होगा कि किस प्रकार के वासस्थल मे किस प्रकार की मछलियां रहती हैं। तद्नुसार हुक एवं लाईन्स का प्रयोग कर वह सफल हो सकता है।

जब एक आखेटक एक मछली को पकड़ता है तो कई घंटो तक उसे एक ही स्थान में बैठा रहना होता है, जो धैर्य का परिचायक है। किस प्रकार के वेटस का प्रयोग करें, वह उसकी बुद्धि और विवेक का परिचायक है। जब मछली कॉटे में फंसती है, तो उसकी संघर्षशीलता और चपलता का सामना करना उसके रोमांच एवं कौशल का परिचायक है। कॉटे में फंसने के बावजूद कई घंटो तक मछली पकड़ में नहीं आती है उसको धीरे-धीरे खींचना और छोड़ना होता है, इस तरह उसे थका-थका कर पकड़ा जाता है। पर्वत घाटी के बीच कल-कल छल-छल करती जल की अविरल धारा एक अनुपम सौदर्य का संयोग कराता है। अत: धैर्य, बुद्धि और विवेक, रोमांच और सौदर्य के संयोग से ही मत्स्य आखेट में असीम मनोरंजन प्राप्त होता है। इसी कारण मत्स्य आखेट पर्यटकों के लिये आर्कषण का केन्द्र बनता जा रहा है।

## मत्स्य आखेट (एंगलिंग) का स्वरूप

देश के पर्वतीय जल स्रोतों में मत्स्य आखेट (एंगलिंग) सदियों से प्रचलित है। स्वतंत्रता से पूर्व अंग्रेज शासक, उच्च अधिकारी, तत्कालीन महाराजा एवं सम्भ्रान्त लोग मत्स्य आखेट (एंगलिंग) को एक मुख्य अवकाशकालीन मनोरंजन का साधन मानते थे। इसलिये तत्कालीन शासकों द्वारा विदेशी प्रजाति की प्रमुख स्पोर्ट फिश, ब्राउन ट्राउट को कुछ भारतीय जल स्रोतों में स्थापित करने हेतु प्रयास किये थे।

मत्स्य क्रीड़ा की सम्भावनाओं को परिलक्षित करने में अग्रेंजो का बहुत योगदान रहा है। 19 वीं शताब्दी मे ब्रिताानियों ने क्रीड़ा मात्स्यिकी की शुरूआत की। 1890 में डा. मिशेल ने स्कॉटलैड से ब्राउन ट्राउट के अण्डे लेकर आये, इसके लिये

हिमालय क्षेत्र में हैचरी (अण्डजनन शाला) स्थापित की। इसी के तहत कल्डयानी (उत्तरकाशी) मे ब्राउन ट्राउट तथा तलवाड़ी (चमोली) में रेनबो ट्राउट की हैचरी स्थापित की। गंगा/पिंडार नदियों में रेनवो ट्राउट एण्ड ब्राउन ट्राउट का संचय किया। सन 1885 में हेनरी रामजे ने कोसी नदी से, महाशीर नैनीताल झील में डाली। इस तरह अग्रेंजो ने आखेट हेतु सुगम स्थलों में मछलियों का संचय कर मत्स्य आखेट की नींव डाली।

वर्तमान समय में यह शौक, अभिजात्य वर्ग के साथ–साथ उच्च मध्यम वर्ग में भी लोकप्रिय होता जा रहा है। देश में मत्स्य आखेट (एंगलिंग) आधारित, मत्स्य संरक्षण जागरूकता के प्रचार–प्रसार व प्रोत्साहन के लिये, कुछ स्वयंसेवी संगठन, जैसे इण्डियन फिश कन्जरवेंशी, आसाम बोहरेली (एंगलर) एसोशिएसन, आदि कई वर्षो से प्रयासरत हैं। ये संगठन समय –समय पर विभिन्न नदियों में मत्स्य आखेट (एंगलिंग) प्रतियोगिताओं का आयोजन भी करते हैं। इस प्रकार का एक आयोजन, अन्तर्राष्ट्रीय एंगलिंग प्रतियोगिता, अप्रैल 2000 में उत्तरांखण्ड राज्य, के काली–शारदा नदी में किया गया, जिसमें अनेकों भारतीय तथा विदेशी आखेटकों ने भाग लिया। स्थानीय प्रशासन के सहयोग से आयोजित इस कार्यक्रम में नौकायन (रिवर राफ्टिंग) भी सम्मिलित किया गया था। इस कार्यक्रम में जौन मूर, पैट्रिक कैर, विजय सोनी, आदि अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के मत्स्य आखेटकों ने भी भाग लिया।

उत्तराखण्ड के परिपेक्ष्य में आपको बता दें कि नदियों की लम्बाई लगभग 2300 किमी. है। झीलों का क्षेत्रफल लगभग 291 हेक्टेयर है। जलाशय के रूप में टेहरी–धौली प्रमुख हैं। उत्तराखण्ड में झील, नदी, तालाब व जलाशय से लगभग 9 हजार टन प्रतिवर्ष मत्स्य का उत्पादन होता है। इस उत्पादन को आसानी से दो गुना किया जा सकता है। मत्स्य आाखेट हेतु इन संसाधनों का उचित प्रबन्धन के द्वारा रोजगार एवं पर्यटन के नये आयाम पैदा कर सकते हैं। उदाहरण के लिये हिमाचल प्रदेश में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार प्रत्येक विदेशी एंगलर प्रति सप्ताह लगभग 200 डालर व्यय करते है तथा भारतीय एंगलर 30 डालर।

## प्रमुख मत्स्य आखेट क्षेत्र

वर्तमान में उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों में जहाँ पर पर्यटक मत्स्य आखेट हेतु आते हैं, उन स्थानों का नाम है गंगा नदी में मोतीचूर, शिवपूरी, अलकनन्दा में श्रीनगर, भागीरथी मे चिन्याली सौढ और यमुना नदी में कालसी, पं रामगंगा में मरचूला, कोसी में मोहान, खैरना, सुयाल। सरयू मे बागेश्वर, घाट तथा काली नदी में जौलजीवी, पंचेश्वर एवं टनकपुर। इसके साथ–साथ भीमताल नौकुचियाताल नैनीताल श्यामलाताल में भी आखेटक आखेट करते हैं। इन क्षेत्रों में आखेट करने हेतु लोग देश विदेश से आते हैं। काली नदी में स्थित पंचेश्वर से लेकर टनकपुर तक महाशीर एंगलिंग हेतु विश्व विख्यात है। डाकपत्थर, आसन वैराज जल क्रीड़ा मात्स्यिकी के लिये प्रसिद्ध है।

## आखेट–योग्य मुख्य मछलियाँ

आखेटक द्वारा, आखेटक छड़ी की डोरी से बँधी विभिन्न प्रकार के चारे युक्त कांटों से लुभाया, फंसाया व पकड़ा जाता है। एंगलिंग के द्वारा फंसने पर जो मछली अधिकतम सीमा तक छुड़ाने के लिये संघर्ष करती है, उन्हें आखेट–योग्य मछलियों की सूची में, उतनी ही अधिक वरीयता दी जाती है। इन आखेट योग्य मछलियों को स्पोर्ट फिश अथवा गेम फिश कहा जाता है। देशी तथा विदेशी आखेट योग्य मछलियाँ निम्नलिखित हैं:

### भारतीय प्रजातियाँ

| | | |
|---|---|---|
| सुनहरी माहसीर | गूच | उच्च पृष्ठ माहसीर |
| ताम्र माहसीर | काली माहसीर | चाकलेट माहसीर |
| भारतीय ट्राउट | पत्थर चट्टा | |
| विदेशी प्रजातियाँ | ब्राउन ट्राउट | रेनबो ट्राउट |

मत्स्य आखेट के लिये उपयुक्त देशी प्रजातियों में, सुनहरी माहसीर का स्थान सर्वोच्च है। सुनहरी माहसीर भारतीय एंगलरों के साथ–साथ विदेशी एंगलरों की भी प्रमुख पसन्द है।

## मत्स्य आखेट से पर्यटन की सम्भावनाएं

पर्वतीय राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में छोट स्तर व असंगठित रूप से विद्यमान मत्स्य पर्यटन को, संगठित व वृहद् स्वरूप देकर, एक प्रमुख आर्थिक स्रोत के रूप में विकसित किया जा सकता है। इसके लिये योजनाकारों, प्रशासकों, आखेटकों, वैज्ञानिकों, मछुआरों, पर्यावरणविदों व समान्यजनों की सहभागिता व योगदान से वांछित लक्ष्य सुगमता से प्राप्त किया जा सकता है। मत्स्य आखेट पर्यटन के विकास हेतु निम्न कार्यक्रम पर अमल करना होगा:

- पर्वतीय क्षेत्र की विभिन्न नदियों तथा सदबहार नालों में माहसीर, आदि आखेट–योग्य प्रजातियों की मात्स्यिकी उपलब्ध है। उपरोक्त नदी तंत्र में से कुछ को केवल मत्स्य आखेट अथवा एंगलिंग के लिये आरक्षित कर, इनमें उपयुक्त प्रजाति की मात्स्यिकी विकसित की जानी चाहिए। मात्स्यिकी संवर्द्धन कृत्रिम रूप से बीज उत्पादन कर इन नदी तन्त्रों में संग्रहित भी किया जा सकता है। इनमें से उच्च हिमालयी क्षेत्र में स्थित प्रखण्डों में ब्राउन ट्राउट तथा निचले क्षेत्रों में माहसीर वर्ग की मछलियां, संग्रहित व विकसित की जा सकती है।

- पर्वतीय जल संसाधनों में उपरोक्त आखेट–योग्य प्रजातियों की संख्या व आकार में निरन्तर कमी आती जा रही है, जिसकें प्रमुख कारणों में, जलीय वातावरण मे प्रतिकूल परिवर्तन तथा अत्यधिक मत्स्य दोहन सम्मिलित हैं। अतः मत्स्य आखेट हेतु आरक्षित जल स्रोतों में, आखेट–योग्य प्रजातियों का संवर्द्धन एवं संरक्षण आवश्यक है। इन स्रोतों में केवल एंगलिंग रौड में मछली पकड़ने की अनुमति देनी होगी।
- पर्यटन स्थलों के निकट जल की सुचारू व्यवस्था होने पर, समुचित स्थानों पर आखेट (एंगलिंग) हेतु मत्स्य तालाबों का निर्माण किया जाना चाहिए।
- मत्स्य आखेट के अतिरिक्त मत्स्य दर्शन भी, पर्यटकों को आर्कषित करने का एक अन्य साधन है। गंगा नदी में, हरिद्वार तथा ऋषिकेश व गोमती नदी में वैजनाथ में लोग मत्स्य दर्शन के लिये भी एकत्रित होते हैं। इस प्रकार कुछ अन्य नदी प्रखण्डों, झीलों अथवा जलाशयों को संरक्षित कर, मत्स्य दर्शन स्थलों का विकास किया जा सकता है।
- मत्स्य पर्यटन गतिविधियों के विकास व विस्तार के लिये इन स्थलों पर स्तरीय मूलभूत सुविधाएं जैसे- उचित सड़कें, यातायात, संचार, होटल, खान–पान, आदि उपलब्ध करानी होगीं। पर्यटन व्यवसाय को बहुआयामी स्वरूप देने के लिये एंगलिंग व मत्स्य दर्शन के साथ–साथ, साहसिक पर्यटन, जल क्रीड़ा, नौकायन (रिवर राफ्टिंग), आदि सुविधाओं का भी विकास किया जाना चाहिए।
- मत्स्य आखेट में बहुत टूर आपरेटर्स सक्रिय हैं जिन्हें संगठित करना होगा।
- सुगम, सरल तथा लाईसेंस नीति बनाई जानी चाहिए तथा संरक्षण तथा संतुलित शिकार हेतु बनाये गये नियमों का कड़ाई से पालन होना चाहिए।
- एक आदर्श मॉडल के रूप में उत्तराखण्ड की झीलों में माहसीर तथा कार्प मछलियों कें एंगलिंग हेतु कार्ययोजना सीघ्र ही बनायी जानी चाहिए।

इस निमित विभिन्न विभागों का संयोजन होना आवश्यकीय है। जिसमें वन, मत्स्य, पर्यटन विभाग, तथा स्थानीय पंचायतें मिलकर एक संगठित प्रयास कर सकते हैं। जिसमें वन विभाग तथा मछलियों का अनैतिक/असंगत दोहन पर रोक लगाये। मत्स्य विभाग/ चिन्हित स्थानों पर मछलियों का संचय करें। तथा टूरिज्म विभाग एंगलिंग प्रतियोगिता प्रायोजित करें तथा आधारभूत ढाँचे का विकास कर छोटे–छोटे इकाईयों को संगठित कर ग्राम इकाई को इनसे जोड़े जो स्थानीय व्यवस्था जैसे गाईड, रहने, खाने की व्यवस्था स्थानीय लोगों की देख रेख में किया जाये। इस प्रकार संगठित कार्य योजना पर्वतीय क्षेत्रों में मत्स्य आखेट को एक कुटीर उद्योग की तरह स्थापित कर सकते हैं।

# रोग

# जल कृषि प्रणाली में मछलियों के रोग प्रबंधन के उत्तम उपाय

**सौरव कुमार**
भा.कृ.अनु.परि.–केन्द्रीय मात्स्यिकी शिक्षा संस्थान, मुंबई

## परिचय

मत्स्य पालन दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ रही खाद्य उत्पादक क्षेत्रों में से एक हैं, जो विशेष रूप से ग्रामीण समुदायों के लिए जलीय संवर्धन एक अति महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक गतिविधि है, जो न सिर्फ अच्छे आय का स्त्रोत है बल्कि घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में मदद कर आजीविका अर्जन, रोजगार, खाद्य सुरक्षा एवं गरीबी उन्मूलन में एक अचूक प्रणाली के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। भारत अपनी नीली क्रांति के साथ जलीय संवर्धन के क्षेत्र में तेजी से प्रगति कर रहा है और आज वैश्विक जलीय कृषि में दूसरे स्थान पर हैं। इस संदर्भ में, आधुनिक प्रणाली से की गयी मछली पालन तकनीक को प्रोत्साहित किया जा रहा है। परन्तु इस जलकृषि प्रणाली में संचित मछलियों पर अपेक्षाकृत उच्च घनत्व में रखने के कारण उनमें तनाव की वृद्धि और प्रतिरक्षा का प्रभाव कम होने से रोगों की संभावना बहुत ही सामान्य हो जाती है। जिसके फलस्वरूप जलीय संवर्धन में मछलियों की उच्च मृत्युदर एवं किसानों का आर्थिक रूप से नुकसान वहन करना पड़ता है। जलीय कृषि उद्योग में कई रोग जनकों जैसे- विषाणु, जीवाणु, परजीवी, कवक एवं अन्य निदान रहित नयी बिमारियों से अभिभूत होता जा रहा है। रोगों के कारण न केवल मछलियों का विकास एवं शारीरिक वृद्धि में अवरोध होता है बल्कि भारी मात्रा में दवां एवं उपचार हेतु आर्थिक प्रभाव भी बढता है। ये सभी तथ्य जलीय कृषि की लागत में बढ़ोत्तरी एवं किसानों के लाभांश में कमी करते हैं। अतः मत्स्य पालन में अधिक संचय कर उत्पादकता एवं लाभांश प्राप्त करना है तो तालाब की पर्यावरण मुख्य रूप से पानी एवं मछलियों के स्वास्थ्य का विशेष रख-रखाव पर ध्यान केन्द्रीत करना होगा। अतः यह लेख मछली में रोगो के उत्तम प्रबंधन एवं बचाव पर केंद्रित है ।

## रोग प्रबंधन उपाय

मत्स्य पालन क्षेत्र में "मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन" शब्द का तात्पर्य प्रबंधन के ऐसे तरीकों से है जो मछलियों की बीमारी को रोकने के लिए किये जाते हैं। सफल मत्स्य स्वास्थ्य प्रबंधन की शुरुआत उपचार से नहीं अपितु रोगों के बचाव से आरम्भ होता है। मछलियों के बेहतर स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए संक्रामक एवं गैर संक्रामक कारकों, मछलियों की प्रतिरक्षा एवं जलीय पर्यावरण को समझना आवश्यक है। इन तीनों पहलुओं के संतुलन एक अच्छे उत्पादन का कारक होता है और इसमें जीव विज्ञान, रोगाणुओं के संक्रमण व संचारण की विधि, मछलियों को रोग प्रतिरोधक क्रियाविधि एवं रोग की प्रक्रिया को प्रभावित करने में जलीय पर्यावरण की भूमिका, रोग प्रबंधन करने में मददगार व महत्वपूर्ण पहलू हैं। परंपारिक और आधुनिक तकनीकों से रोगों की पहचान, रोगों के प्रबंधन में अहम भूमिका निभाते हैं। मछली स्वास्थ्य प्रबंधन में रोगों के प्रकोप से बचाव, निवारण और उपचारात्मक योजनाओं पर कार्य किया जाता है।

## रोग निवारक पद्धति

रोग निवारक पद्धति में रोग निरोधी तरीकों का प्रयोग रोगों के प्रकोप को कम एवं रोकने के लिए सभी उपाय रोग की घटना के संज्ञान में आने पहले ही किया जाता है। इस पद्धति में जलीय पर्यावरण (जल की परिवेशीय गुणवत्ता का रख रखाव, तालाब के मिटट्ी की गुणवत्ता, सुखाने व उपयुक्त मात्रा में चुने का इस्तेमाल, अच्छे प्रबंधन के तरीकों को अपनाना आदि), मछलियों (जैसे विशिष्ट रोगाणु मुक्त बीज, टीकाकरण, प्रतिरक्षी तंत्र उत्तेजन, मत्स्य पालन की पूर्ण अवधि तक सुपोषण आदि) और रोगाणुओं के प्रबंधन (जैसे: संगरोधन सुविधा का प्रयोग, रोगाणुओं का तालाब में प्रविष्टि निषेध हेतु जैव रक्षा साधन का

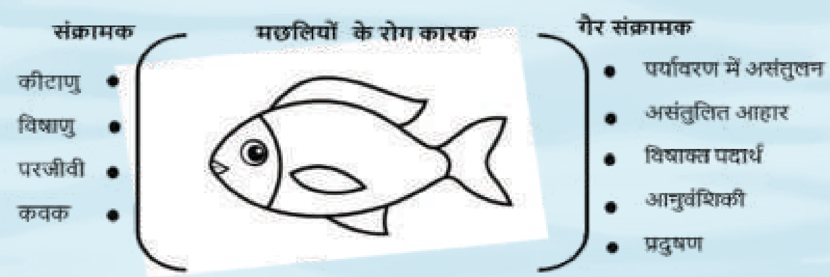

उपयोग) के उपाय किए जाते हैं। हालांकि भारत में अभी तक किसी टीका का विस्तार नहीं हुआ है, कई मत्स्य प्रयोगशाला इस दिशा में अग्रसर है। भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय मात्स्यि की शिक्षा संस्थान, मुंबई कार्प (रोहू) में ई.ट्राडा एवं एफ.कलुमनरे के खिलाफ टीका के विकास में निरंतर कार्यरत है ।

## रोग निरोधी पद्धति

### 1. भौतिक विधि

रोग निवारण और नियंत्रण के भौतिक तरीका मुख्यत: रोग कारकों के प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे तापमान में वृद्धि व कमी, नमी की कमी, हानिकारक विकिरण, रोग जनक स्रोतों का विस्थापन एवं सम्मिलित भौतिक बाधाएं जिससे रोग जनकों एवं मेजबान के बीच विस्थापन के प्रति शारीरिक सहिष्णुता पर आधारित है। संभावित रोग जनकों को पराबैंगनी विकीरण एवं सूक्ष्म स्पंदन की प्रक्रियासे हटाया जा सकता है। रासायनिक प्रदूषक के प्रभाव को कार्बन निस्पंदन, जैव निस्पंदन एवं सांद्रता को कम करने हेतु जल मिश्रित कर किया जा सकता है। तालाबों एवं एक्वारियम को सूखाने एवं गर्म पानी का अनावरण करने से बहुतों जैविक कीटाणु एवं वनस्पतियों को नष्ट करने में कारगर साबित होता है, तथा सदैव संक्रमित मछली को तालाबों से हटाया नष्ट कर देना चाहिए।

### 2. पर्यावरणीय विधियाँ

मछली संवर्धन की सफलता में जलीय पर्यावरण एवं इसकी गुणवत्ता की निगरानी अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस विधि का प्राथमिक उद्देश्य मेजबान मछलियों की रक्षा, रोग जनकों का नियंत्रण व संपर्क मार्ग में अवरोध उत्पन्न करना है। इस वर्ग में आगे निम्न विधियों का उल्लेख किया गया है:

#### *उचित हैचरी एवं तालाबों की रुपरेखा*

जलीय कृषि प्रणाली के नियमित कार्य-कलाप एवं मछली के उचित स्वास्थ्य प्रबंधन प्रथाओं में एक अच्छी तरह के हैचरी व तालाब की रुपरेखा का महत्वपूर्ण स्थान है। हैचरी या तालाब में अच्छी गुणवत्ता वाला व प्रदूषण मुक्त पानी की आपूर्ति की जानी चाहिए। मछली संवर्धन तालाबों में जल का आपूर्ति एवं निकासी के लिए स्वतंत्र जल प्रवाह की व्यवस्था सुनिश्चित होनी चाहिए जिससे रोग जनकों के प्रसार को संकुचित किया जा सके। इन जलाशयों को बाहय मछलियों, अकशेरुकीय कीट और शिकारी पक्षीयों के रुप में संक्रामक कारकों व अन्य संभावित वाहकों से मुक्त रखा जाना चाहिए। पानी की गुणवत्ता-पानी की गुणवत्ता में कमी, मछलियों के शारीरिक विकास में कमी तथा तनाव के बढने से रोगों से ग्रसित होने की संभावना को प्रगढ करता है। अत: मछली संवर्धन के लिए नियमित रुप से उनमें गुणवत्ता मानकों जैसे-लवणता, तापमान, पीएच, आक्सीजन, अमोनिया, पारदर्शिता इत्यादि की निगरानी की जानी चाहिए। पानी की गुणवत्ता बढ़ाने के उपाय-(क) रोगाणु नियंत्रण हेतु पैराबैंगनी किरणों एवं निस्पंदन (Filteration) प्रणाली का उपयोग (ख) पानी के अघुलनशील मलबे हटाने के लिए रेत निस्पंद एवं बैगनिस्पंद का प्रयोग (ग) अमोनिया हटाने के लिए जैव निस्पंद (Biofilteration) इकाई का प्रयोग (घ) उपयुक्त घुलित आक्सीजन के लिए पैडल एरेटर (airator) चप्पू पहियों का निर्देशा अनुसार प्रयोग (ङ) तालाबों के गहराई एवं तलछट मलबों के लिए नियमित रूप से जैव मल, मलबे और अप्रयुक्त खाद्य हटाने चाहिए। (च) जैविक और कण भार को कम करने के लिए तालाबों में स्थायी करण जलाशयों का निर्माण करना चाहिए।

#### *आरोग्य कर आचरण*

स्वच्छता स्वास्थ्य के सामान्य मानकों में सुधार करता है।यह रोग कारकों के विकास को नियंत्रित व अवरोध करता है। आरोग्य कर आचरण न केवल रोग रोकथाम के लिए उचित अवसर प्रदान करता है बल्कि रोगो के प्रसार को भी नियंत्रित करता है। मत्स्य संवर्धन प्रक्रिया के दौरान निम्नलिखित आरोग्य कर आचरण का पालन करना चाहिए:

#### *तनाव परिहार*

तनाव के कारण मछलियों में रोगों के प्रति संवेदनशीलता में बढोतरी होती है। तनाव उत्प्रेरण के प्रमुख कारक पानी की गुणवत्ता में कमी, अपर्याप्त भोजन, उच्च घनत्व में पालन, हस्तांतरण एवं प्रबंधन के स्तर में कमी है। मछली के स्वास्थ्य स्थिति की नियमित निगरानी से रोगों के शुरुआत के जल्दी संकेत मिल जाते हैं जो उनके उन्मूलन के लिए व्यापक स्तरपर लाभकारी होते हैं। अत:संपूर्ण एवं संतुलित आहार, स्वास्थ्य की नियमित निगरानी, तालाबों के अच्छे रखरखाव व प्रबंधन मछलियों को संवर्धन के दौरान तनाव कम करता है।

#### *संग रोधन प्रक्रिया*

जलीय जीवों के रोगों के अंतर्राष्ट्रीय प्रसार की रोकथाम में संगरोधन उपायों का महत्वपूर्ण भूमिका रही है। विशेष कानून जिसके अनुसार आयातित मछली पर संग रोध प्रक्रियाओं का अनुपालन एवं निर्यात देशों में आने वाली मछली के स्वास्थ्य प्रमाणन की आवश्यकता, मछली के रोग जनकों को दुनिया भर में फैलने से कम किया है। स्थानीय स्तर पर भी तालाबों का वर्गीकरण आरोग्य कर स्तर पर होनी चाहिए जिससे समतुल्य स्वास्थ्य स्थिति वाले तालाबों के बीच मछलियों का आदान-प्रदान की जा सकती है। इस प्राशंगन में संग रोधन एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिससे रोग कारकों को चिन्हित एवं उसके प्रभाव को

इस व्यवस्था से कम या नियंत्रित किया जा सकता है। अवधि हमेशा रोग जनकों की सबसे लम्बी अव्यक्त अवधि की समय से अधिक होना चाहिए और सामान्य रुप से निगरानी के लिए कम से कम दो से तीन सप्ताह की अवधि के लिए स्वीकार्य होना चाहिए। संग रोध तालाबों को सुरक्षित रुप से पृथक एवं अन्य सभी संवर्धन की जाने वाले तालाबों से नीचे स्थित होनी चाहिए जिससे रोग जनकों का प्रवेश निषेध सुनिश्चित किया जा सके।

### 3. रासायनिक विधि

#### *(क) अभिरक्षक तरीका*

अभिरक्षक उपचारतरी का वस्तुत: सुरक्षात्मक विधि है जो रोगों को उत्पन्न होने से रोकता है। तालाबों एवं उपयोग की जाने वाले उपकरणों को कीटाणु रहित करने हेतु 200 पीपीएम सांद्रता वाले क्लोरीन एक घंटे के लिए या 100 पीपीएम सांद्रता वाले क्लोरीन को कई घंटे के लिए उपयोग करना चाहिए। मिटट्ी के तालाबों, नहरों एवं नालों को सूर्य की सीधी किरणों में सुखाकर भी कीटाणु रहित किया जाता है। इसके बाद चूना या कृषि निम्बुडा 0.5-1 टन/हैक्टेयर और 20 पीपी एम चाय बीज के कया फिरबेन जाइल कोनीयम क्लोराइड (600 पीपीएम), Hyamine 1622 और Hyamine 3500 (चतुर्धातुक यौगिकों) का भी प्रयोग किया जा सकता है।

#### *(ख) कीटाणु रहित पानी*

(अ) क्लोरीनेशन विधि-क्लोरीन आमतौर पर इस्तेमाल की जाने वाले कैल्शयिम हाइपो क्लोराइट (पाउडर) या साधारण घरेलु ब्लीच (Pure, Chloro) में मिलता है, जो बहुत ही अच्छा निस्संक्रामक है। पानी को कीटाणु मुक्त करने हेतु 5 से 20 पीपीएम क्लोरीन 12-24 घंटे केलिए प्रयोग करें तथा अवशिष्ट क्लोरीन को शून्य करने के लिए सोडियम थायो सल्फेट या सघन वायु संचारण का इस्तेमाल करे।

#### *(ग) उपकरणों का निस्संक्रामकता*

मछली पालन हेतु उपयोग में लाये जाने वाले उपकरणों जैसे जाल बाल्टी, नली,से डिस्क, ब्रश इत्यादि को सदैव कीटाणु रहित कर उपयोग में लाना चाहिए। इस प्रथा के लिए 500 पीपीएम क्लोरीन में इन सामग्रियों को अच्छी तरह से डुबाकर धोने के पश्चात ही उपयोग में लाना चाहिए।

(स) मछली बीज के निस्संक्रामण के लिए 2 पीपीएम ट्रेफलान को 1 घंटे के लिए या 500-1000 पीपी एम फाइर मालीन को आधा या एक घंटे के लिए उपयोग करना चाहिए। मछली अंडे को संक्रामण से बचाने के लिए 20 पीपीएम फॉरमीलीन के घोले में 2-4 घंटे तक कीटाणु रहित कर संचय करना चाहिए तथा लार्वा को निसंक्रमण के लिए 0.1 पीपीएम ट्रैफल न कर इस्तेमाल हर दूसरे दिन करना चाहिए।

#### (स) रसायन चिकित्सा

रसायन चिकित्सा में संक्रामक रोगों के तत्कालिक रोकथाम के लिए दवाओं या रसायनों का प्रयोग किया जाता है, यद्यपि यह रोग नियंत्रण कार्यक्रम में "अंतिम उपाय की विधि के रुप में माना जाता है।" दवाओं और रसायनों के प्रयोग के पहले विभिन्न पहलुओं पर विचार करना अति आवश्यक उसमें प्रथम रोग कारक, दूसरा मेजबान मछली प्रजाति एवं अवस्था, तीसरा रसायन या दवा, तथा चौथा पर्यावरण है।

#### *(क) रोगकारक*

रोग जनकों की प्रतिरक्षा शक्ति विभिन्न दवाओं के प्रति अलग होती है। यद्यपि कई रसायन दीर्घक्रम के होते है जो अलग-अलग रोग जनकों को प्रभावित करते हैं, इनके कम अंश पर्यावरण में रोग जनकों में इनके प्रति रक्षा या असंवेदनशीलता पैदा करता है। अत: रोग जनकों की स्थिति एवं प्रजाति की जानकारी रसायनों के प्रयोग के लिए अति उपयोगी है।

#### *(ख) मेजबान मछली की रसायनों के प्रति सहनशीलता*

मछली की सहनशीलता उम्र, प्रजातियों, अवस्था के साथ बदलता है, सामान्यत: छोटी मछली बडी मछली के अपेक्षा रसायनों के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। तनाव की स्थिति में कई प्रजाति के मछली रसायनों एवं बदलते पर्यावरण के प्रति संवदेनशील हो जाते हैं। अत: रसायनों एवं दवाओं के प्रयोग के पहले मछलियों की अवस्था एवं शारीरिक भार ज्ञात करना आवश्यक है, यह दवाओं के खुराक को ज्ञात करने में भी मददगार होता है।

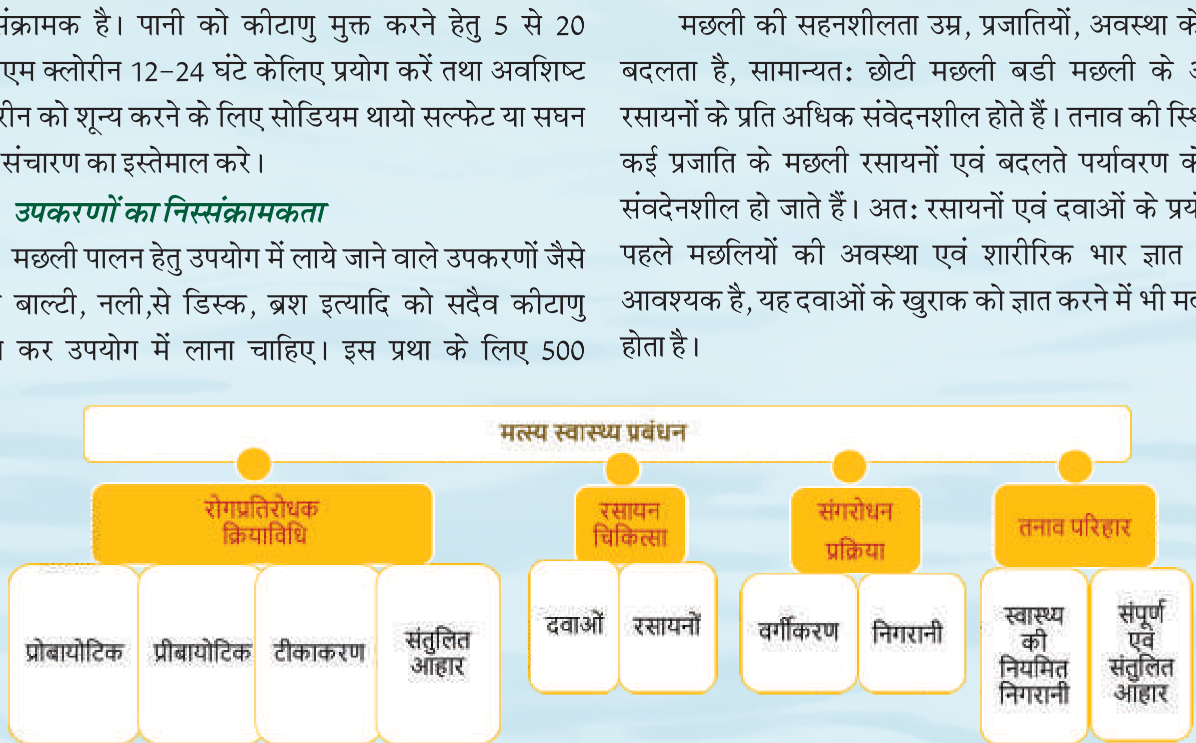

*(ग) दवा या रसायन*

रसायनों का प्रयोग एवं तालाबों में प्रयोग दवाओं के प्रकृति एवं उनके क्षमता पर निर्भर करता है। कई रसायन के अधिक खुराक मछलियों के लिए घातक एवं तालाब में उपस्थित अन्य प्रकार की जीवों के लिए विषाक्त होते हैं जैसे मालाथी आन जो आलर्गुस के साथ-साथ अन्य अकेशरुकीय जीवों (प्राणी प्लवक) के लिए भी घातक होते हैं जिससे तालाबों की उत्पादकता पर विषम प्रभाव होता है। रसायनों के अवशेष यदि मछलियों में दीर्घकालिक उपस्थित हो तो यह उपभोक्ता के लिए भी घातक होते हैं।

पर्यावरण सदैव मछलियों के उपचार में महत्वपूर्ण साबित होते हैं। रसायनों एवं दवाओं केप्रभाव से हमेशा पानी की गुणवत्ता परिवर्तित होती है जो जलीय जीवों पर असर डालती है। दूसरी ओर रसासनों की कीटाणुनाशक क्षमता पानी से रासायनिक, भौतिक एवं जैविक कारकों पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए अधिक खारा एवं सांद्रता वाले पानी में प्रति जैविक दवाओं का अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है।

## निष्कर्ष

जलीय कृषि में रोग की समस्या एक महत्वपूर्ण एवं आर्थिक नुकसान का सबसे बडा एकल कारक है। किसी भी रोगों के संक्रमण को रोकने, निदान एवं नियंत्रण करने हेतु मछलियों की प्रतिरक्षा रोग कारकों का जांच एवं जलीय पर्यावरण के पारस्पारिक संबंधों को जानना आवश्यक हैं। आधुनिक रोग निदान विधि से किसान बीमारी का जल्दी एवं अचूकता से पता लगाया जा सकता है और रोग का शीघ्र उपचार एवं रोकथाम कर सकते हैं। जलीय कृषि में बढते रोगों का प्रसार पूर्णत: प्रतिरक्षा, प्रतिरक्षा तंत्र उत्तेजन मत्स्य पालन की पूर्ण अवधि तक सुपोषण, जैव रक्षा साधन का उपयोग कर आर्थिक लाभ कमाया जा सकता है।

**"विश्वास" जीवन का सबसे बड़ा खजाना है,**
**क्योंकि उसके बगैर न तो "प्रेम" संभव है और ना प्रार्थना**

# जैविक उपचारः जलीय पारिस्थितिकी तंत्र से प्रदूषण को खत्म करने के लिए पर्यावरण अनुकूल दृष्टिकोण

मनीश कुमार दुबे, रीनी जोशी, अनुपम पाण्डेय, प्रकाश शर्मा एवं देवाजीत सर्मा
भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

## सार

जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के गहन दोहन से पानी की गुणवत्ता में काफी गिरावट आ रही है और इसलिए जलीय पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा के लिए जन जागरूकता की आवश्यकता है। जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के लिए प्रमुख खतरों में से एक जल प्रदूषण है, जो जलीय जीवों को गंभीर रूप से प्रभावित करता है। मछलियों में गंभीर स्वास्थ्य समस्याओं के लिए जल प्रदूषण भी जिम्मेदार है। जलीय जीवों में मछली, आसानी से पचने योग्य प्रोटीन का एक स्रोत है और मानव आहार का एक महत्वपूर्ण घटक है। चूँकि समाज के एक बड़े वर्ग द्वारा मछली का सेवन किया जाता है, प्रदूषित जल निकायों से मछली का सेवन मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर खतरा पैदा कर रहा है। जल प्रदूषण की समस्या को दूर करने के लिए जैव उपचार अपशिष्ट जल प्रबंधन की तकनीक को प्रभावी ढंग से नियोजित किया जा सकता है। सुरक्षित और स्वस्थ जलीय कृषि उत्पादन को सक्षम करने के लिए जैव उपचार, जलीय पर्यावरण पर नकारात्मक प्रभाव को कम करने में मदद कर सकता है।

## परिचय

भारत में मत्स्य पालन क्षेत्र का तेजी से विस्तार हो रहा है। यह समाज के एक बडे वर्ग को भोजन और आजीविका सुरक्षा प्रदान करता है। भारत लगभग 14.16 मिलियन टन वार्षिक मछली का उत्पादन करता है, जिसमें से 10.43 अन्तर्स्थली और 3.72 समुद्री क्षेत्रों (डीएएचडीएफ, 2014) द्वारा किया जाता है। इस क्षेत्र का विकास एक ओर जहाँ खाद्य सुरक्षा के लिए आवश्यक है, वहीं दूसरी ओर गहन उत्पादन जलीय पारिस्थितिक तंत्र के लिए गंभीर खतरा है। अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए, हम अपने पारिस्थितिक तंत्र का अत्यधिक दोहन कर रहे हैं। भारी संचयी घनत्व, अपशिष्ट खाद्य और फेकल पदार्थ, उपापचयी उप-उत्पाद और अवशेष, रोग निरोधी एजेंटों का उपयोग, कीटाणुनाशक, दवाएं, उर्वरक व्युत्पन्न अपशिष्ट और साथ ही अधिक मात्रा में शैवाल, पानी की गुणवत्ता को खराब करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जल प्रदूषण के कारण पानी की गुणवत्ता गंभीर रूप से प्रभावित होती है। यह सर्वविदित है कि कई उद्योग भारी धातुओं और प्रदूषकों (क्रैब इत्यादि, 2007) के पर्याप्त भार वाले अपने अपशिष्टों का निर्वहन करते हैं। जल निकाय तलछट में ये कार्बनिक अपशिष्ट उपापचीय दर को बढाते हैं और एरोबिक बैक्टीरिया द्वारा ऑक्सीजन की मांग बढती जाती है जिससे जलीय जानवरों को गंभीर खतरा होता है। यह स्थिति मछलियों के हाइपोक्सिया और गिल रोगों जैसी गंभीर जटिलताओं की ओर ले जाती है। जलकृषि के लिए उपयोग किए जाने वाले सीवेज के पानी से जैव-आवर्धन होता है। जिसका मछली जीवों पर हानिकारक प्रभाव पडता है (रामिरेज इत्यादि, 2002) मेली इत्यादि (2002)। सामूहिक रूप से ये कारक जलीय पारिस्थितिकी तंत्र की जल गुणवत्ता को खराब करते हैं और अंततः मानव स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा पैदा करते हैं। इसलिए, स्वस्थ मछली उत्पादन के लिए पानी की गुणवत्ता को बनाए रखना होगा। जलीय कृषि में पानी की गुणवत्ता में सुधार के लिए जैविक उपचार एक हालिया दृष्टिकोण है। मूल रूप से, पर्यावरण संरक्षण अधिनियम या ईपीए बायोरेमेडिएशन को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करता है जो प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले जीवों का उपयोग खतरनाक पदार्थों को कम विषाक्त या गैर-विषैले पदार्थों में तोडने के लिए करती है। मूल रूप से, बायोरेमेडिएशन कुछ सूक्ष्म जीव के विकास को उत्तेजित करता है जो पेट्रोलियम उत्पादों, सॉल्वेंट्स और कीटनाशकों जैसे प्रदूषकों का उपयोग कर सकते हैं।

### जैविक उपचार (बायोरेमेडिएशन) क्यों?

बायोरेमेडिएशन एक जैविक या प्राकृतिक प्रक्रिया है, जो प्रदूषित जलीय पारिस्थितिकी तंत्र से दूषित पदार्थों को हटाने के लिए नियोजित होती है, इसके लिए किसी भारी उपकरण, ऊर्जा और श्रम की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा, ये सूक्ष्म जीव, आसानी से हानिकारक विषाक्त प्रदूषकों को सरल, कम विषैले पदार्थों में बदल देते हैं जो हानि रहित होते हैं।

### जैविक उपचार की अवधारणा

बायोरेमेडिएशन में दूषित पानी से प्रदूषकों को हटाने या बेअसर करने के लिए जीवित जीवों या पौधों का उपयोग शामिल है। यह एक व्यापक शब्द है जिसमें फाइटोरेमेडिएशन, बायोरिक्टर, बायो-फिल्ट्रेशन, बायोफ्लोक और बायो-ऑगमेंटेशन आदि शामिल हैं।

**पादप उपचार (फाइटोरेमेडिएशन)**

यह शब्द मिटट्ी या जलीय कृषि तालाबों में दूषित पदार्थों को हटाने के लिए पौधों के उपयोग को संदर्भित करता है। अपशिष्ट जलीय कृषि में, पौधों का उपयोग अपशिष्टों से अतिरिक्त, अधिक पोषक तत्वों को कम करने के लिए किया जाता है (मैथ्यू और वांग, 1995)। (खीरे, सलाद, टमाटर और अन्य उच्च व्यवसायिक विभिन्न फसलों के उत्पादन को बढाने के लिए पोषक तत्वों से भरपूर प्रवाह में हाइड्रोपोनिक रूप से उगाया जाता है (रैकोसी और हरग्रीव्स, 1993)। रासायनिक संचय को हटाने के लिए तैरते जलीय खरपतवार के रूप में मच्छर, फर्न और जलकुंभी का उपयोग किया (जियांग और शिनयुआन, 1998)। ईलग्रास, मॉर्निंग ग्लोरी और घुंघराले तालाब खरपतवार को जल खरपतवार, फाइटो-उपचार के रूप में इस्तेमाल किया। उन्होंने दिखाया, कुल निलंबित ठोस पदार्थों में 75% की कमी, रासायनिक ऑक्सीजन माँग (सीओडी) को 44% हटाने, कुल नाइट्रोजन को 73% हटाने और चिड़ियाघर के अपशिष्ट जल से कुल फास्फोरस को 62% हटाने का प्रदर्शन किया।

घली इत्यादि (2005) ने पांच पौधों की हाइड्रोपोनिक कल्चर का इस्तेमाल किया, जैसे कि तिपतिया घास, राई, अल्फाल्फा, जई और जौ उनकी बायोरेमेडिएशन क्षमता का आकलन करने के लिए, उन्होंने खुलासा किया कि पांच पौधों में से दो, तिपतिया घास और अल्फाल्फा फंगस से संक्रमित हो गए, जिससे फाइटो-उपचार में उनकी अक्षमता का पता चलता है। तीन पौधों-राई, जई और जौ में अच्छी क्षमता थी। सूक्ष्म शैवाल की बायोरेमेडिएशन जैसी कई भूमिकाएँ हैं, जैसे जैव ईंधन उत्पादन के लिए बायोमास उत्पन्न करना (मलब्री एट अल।, 2008)। रेका इत्यादि, 2009 ने देखा कि ऊर्जा कम और इमली में मिटट्ी से सोडियम और मैग्नीशियम प्रति यूनिट क्षेत्र को हटाने की उच्च दर है। एकिनबाइल और युसॉफ (2012) ने जल में जैवसंचय द्वारा उत्पन्न प्रदूषण को कम करने के लिए अपशिष्ट जल में जलकुंभी के उपचार का अवलोकन किया। रात के दौरान जारी कार्बन डाइआक्साइड (O2) के स्तर में वृद्धि के कारण उन्हें pH घुलित ऑक्सीजन (DO)ए सी ओ डी, कुल नाइट्रोजन और अन्य मापदंडों में अधिकतम कमी मिली। यह पीएच स्तर और माइक्रोबियल गतिविधियों में कमी के लिए जिम्मेदार है। क्लोरेला प्रजाति का उपयोग करके अपशिष्ट जल उपचार का उपचार किया जा सकता है। इसमें बहिरूस्राव से विषाक्त पदार्थों को निकालने की अधिक क्षमता है (अहमद 2013)।

**बयोरिएक्टर**

फाइटोरेमेडिएशन की तरह, बायोरिएक्टर विषाक्त पदार्थों को हटाने में सहायता करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बहिरूस्रावों में स्वपोषी जीवाणु जैसे अनेक सूक्ष्मजीव होते हैं जो ऊर्जा के स्रोत के रूप में अमोनिया और नाइट्राइट आयनों का उपयोग करते हैं और सूक्ष्म जीवविज्ञानी प्रक्रिया करते हैं। उदाहरण के लिए, नाइट्रोबैक्टर और नाइट्रोसोमोनस एसपीपी जो निस्पंदन प्रणाली में निहित हैं, वे सूक्ष्मजीव विज्ञानी प्रक्रिया (हैगोपियन और रिले, 1998) द्वारा अमोनिया को नाइट्राइट और नाइट्रेट में परिवर्तित करते हैं। ऑटोट्रॉफिक बैक्टीरिया नाइट्राइट (NO2) को इलेक्ट्रॉन स्वीकर्ता के रूप में और कार्बन डाइऑक्साइड को कार्बन स्रोत के रूप में लेते हैं। फास्फोरस भी एक बहुत ही महत्वपूर्ण पोषक तत्व है जो कि मरम्मत, ऊर्जा के परिवहन और जीवाणु कोशिका के संश्लेषण के लिए आवश्यक है। एक हेटरोट्रॉफिक जीवाणु फॉस्फोरस को प्रवाह से लेता है जो झिल्ली जैविक रिएक्टरों (ईपीए, 1993) में मौजूद होता है। निरंतर बायोरिएक्टर के साथ स्थिर एल्गिनेट बेड का उपयोग करके कुल अमोनिकल नाइट्रोजन हटाने की क्षमता होती है (किम इत्यादि, 2000)। सूक्ष्मजीव, निलंबित ठोस, नाइट्रोजनयुक्त यौगिक, रासायनिक ऑक्सीजन मांग और जैविक ऑक्सीजन मांग जैसे बहिरूस्राव घटकों को झिल्ली जैविक रिएक्टरों से सावधानीपूर्वक हटाया जा सकता है (गंडर 2001)। बायोरिएक्टर छेददार झिल्ली का उपयोग करके निस्पंदन द्वारा अपशिष्ट जल के उपचार के लिए एक आधुनिक उन्नत प्रणाली है। झिल्ली जैविक रिएक्टरों में एक अर्ध-पारगम्य झिल्ली होती है जो 0.01-10 मिमी से अधिक कणों को धारण कर सकती है। यह झिल्ली के छिद्र के आकार पर निर्भर करता है (वियाडेरो और नोबलेट, 2002)।

जैव-संवर्धन कुछ यौगिकों के क्षरण को बढाने के लिए एक माइक्रोबियल समुदाय में सक्रिय रूप से विकसित, विशेष सूक्ष्मजीव को जोडने का एक अभ्यास है। जीवाणु उत्पादों को जोडकर काबर्निक पदार्थों और नाइट्रिफिकेशन के अपघटन को बढाया जाता है एर्लिच इत्यादि, (1988)। सन्तुलित ऑक्सीजन के स्तर को बढाकर, अपशिष्ट जल उपचार, रोबिक बैक्टीरिया जैव रासायनिक ऑक्सीजन की मांग को कम करने में सहायता करता हैं। प्रोबायोटिक्स मछलियों की पाचन प्रक्रिया में भी सहायता करते हैं और लाभकारी सूक्ष्मजीवों से माइक्रोबियल एंजाइमों के साथ अधिकतम फीड उपयोग प्राप्त किया जा सकता है (बॉम्बा इत्यादि 2002)। पेरिफाइटन और बायोफिल्म माइक्रोबियल समुदाय पर आधारित है, जो सब्सट्रेट पर विकसित हुआ है और इसका उपयोग जलीय कृषि प्रणाली में जलीय कृषि में उत्पादकता बढाने के लिए किया जाता है। कुमार इत्यादि, (2006) ने बायो-एग्मेंटेशन के रूप में प्रोबायोटिक्स बैसिलस

सबटिलिस का इस्तेमाल किया और भारतीय प्रमुख कार्प को f(ाला(ा) उन्हें मछलियों में जीवित रहने और प्रतिरक्षा में सुधार मिला। रोजी इत्यादि, (2009) ने बताया कि प्रोटिएज और लाइपेज एंजाइम यक्त बैसिलस और नाइट्रोबैक्टर, प्रति सप्ताह चार बार और साप्ताहिक खुराक खिलाया जाता है। यह अमोनिया और कार्बनिक पदार्थों को कम करने के लिए उपयोगी है, यह झींगा पालन के लिए सर्वोत्तम है।

## बायोफ्लोक

यह उच्च घनत्व, अधिक ऑक्सीजन और बायोफ्लोक द्वारा गठित बायोटा के तहत सीमित या शून्य जल विनिमय के साथ जलीय कृषि प्रणाली में उपयोग की जाने वाली तकनीक है। सूर्य के संपर्क में आने वाले कल्चर टैंक अधिक उत्पादक होगी। जलीय कृषि में बायोफ्लोक प्रौद्योगिकी (बीएफटी) को नई "नीली क्रांति" माना जाता है। ऐसी तकनीक इन- सीटू सूक्ष्मजीव उत्पादन पर आधारित है जो तीन प्रमुख भूमिका निभाती है:-

(I) नाइट्रोजन यौगिकों के अवशोषण से इन-सीटू माइक्रोबियल प्रोटीन उत्पन्न होती है जिससे पानी की गणवत्ता बनी रहती है।

(II) पोषण फीड रूपांतरण अनुपात (FCR) को कम करके और फीड लागत में कमी करके मछली पालन की संभाव्यता बढाना।

(III) रोगजनकों के साथ प्रतिस्पर्धा। समुच्चय (बायोफ्लोक्स) भोजन का एक समृद्ध प्रोटीन-लिपिड प्राकृतिक स्रोत है जो कार्बनिक पदार्थ, भौतिक सब्सट्रेट और सूक्ष्मजीवों की बडी रेंज के बीच एक जटिल संबंध के कारण प्रतिदिन 24 घंटे स्वस्थानी में उपलब्ध होती है। यह प्राकृतिक उत्पादकता पोषक तत्वों के पुनर्चक्रण और पानी की गुणवत्ता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

## मत्स्य पालन सिस्टम में बीएफटी सूक्ष्मजीवों की भूमिका

बीएफटी सिस्टम में सूक्ष्मजीव महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पानी की गुणवत्ता का रखरखाव, मुख्य रूप से स्वपोषी सूक्ष्मजीवों पर जीवाणु समुदाय के नियंत्रण द्वारा, उच्च कार्बन-से-नाइट्रोजन (सी: एन) अनुपात का उपयोग करके प्राप्त किया जाता है, क्योंकि नाइट्रोजनस उप-उत्पादों को स्वपोशी जीवाणु द्वारा आसानी से लिया जा सकता है। इस ऊर्जा का उपयोग रखरखाव (श्वसन, भोजन, गति, पाचन, आदि) के लिए लेकिन विकास के लिए, और नई जीवाणु कोशिकाओं के उत्पादन के लिए, इष्टतम स्वपोषी जीवाणु वृद्धि की गारंटी के लिए उच्च कार्बन-से-नाइट्रोजन अनुपात की आवश्यकता होती है।

## बायोरेमेडिएशन का क्रिया विधि

कुछ सूक्ष्मजीव ऐसे होते हैं जो दूषित पदार्थों को निगलने और पचाने, स्थिर करने, बेअसर करने और उन्हें कम विषैले रूपों और कार्बन डाइऑक्साइड और ईथेन जैसी हानिरहित गैसों में तोडने की क्षमता रखते हैं। बायोरेमेडिएशन की प्रक्रिया में एरोबिक रिएक्शन एनारोबिक रिएक्शन, डिनाइट्रिफिकेशन, मैग्नीज, आयरन, सल्फेट की कमी और किण्वन शामिल हैं, जो परोक्ष रूप से रीओडेक्स क्षमता, पी-एच, तापमान, ऑक्सीजन और भूजल की कार्बन डाइऑक्साइड द्वारा निगरानी की जाती है।

## बायोरेमेडिएशन के लिए आधुनिक दृष्टिकोण

जैव उपचार के महत्वपूर्ण पहलुओं में कार्बनिक पदार्थों और अन्य अपशिष्ट पदार्थों के खनिजकण को बढाने के लिए तालाबों में सूक्ष्मजीवों पौधों में हेरफेर करना शामिल है। जैव उपचार के आधुनिक तरीकों में जलीय पारिस्थितिक तंत्र से प्रदूषकों को हटाने के लिए प्रभावी उपाय शामिल हैं। जेनेटिक इंजीनियरिंग और मायकोरमेडिएशन। जबकि जेनेटिक इंजीनियरिंग आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों को विशेष रूप से बायोरेमेडिएशन के लिए की जाती है, माइकोरेमेडिएशन में फंगल मायसेलिया का उपयोग प्रदूषित पानी से जहरीले अपशिष्ट और रोगाणुओं को फिल्टर करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए प्रोबायोटिक्स जैसे जैविक नियंत्रण एजेंटों का अनुप्रयोग। तालाब के पानी की गुणवत्ता में सुधार के लिए लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया लैक्टोबैसिलस और कुछ एंजाइमों का उपयोग किया जाता है। बायोरेमेडिएटर्स के रूप में उपयोग किए जाने वाले सूक्ष्मजीव व्यवसायिक रूप से उपलब्ध हैं जिनमें मूल रूप से नाइट्रिफायर, सल्फर बैक्टीरिया, बैसिलस और स्यूडोमोनाज़ शामिल हैं।

## मत्स्य पालन और जलीय कृषि में जैव उपचार का प्रयोग

1. जलीय कृषि में रोग नियंत्रण एजेंटों के रूप में बायोरेमीडिएटर विब्रियो एलजेनोलिटिकस, वी. हार्वेई और वी-पैराहामोलिटिकस जैसे कुछ लाभकारी गैर-रोगजनक सूक्ष्मजीव हैं जो झींगा पालन में अवसरवादी रोगजनकों के आक्रमण को कम करते हैं। जीवाणु एल्टरोमोनास झींगा के लार्वा को विभिन्न अवसरवादी क्रस्टेशियन रोगजनकों से बचाता है। 'प्रोबायोटिक्स' शब्द का अर्थ है रोग के प्रकोप की रोकथाम के लिए, न्यूनाधिक के रूप में सूक्ष्मजीव के माध्यम से जैविक रोग नियंत्रण इसी तरह विभिन्न प्रोबायोटिक उपचार पेनियस इंडिकस में लार्वा के अस्तित्व को बढाने में मदद करते हैं।

### नाइट्रोजनी तालाब अपशिष्ट का जैव उपचार

तालाब के पानी और मिट्टी में नाइट्रोजनयुक्त कचरे का प्रमुख स्रोत आहार और फेकल पदार्थ, उपापचयी उप-उत्पाद, कुछ अवशेष अमोनिया और कार्बनिक पदार्थों का खनिजकरण, वायुमंडलीय जमाव और साइनोबैक्टर द्वारा नाइट्रोजन का निर्धारण है। ये सभी कारक जलीय वातावरण में नाइट्रोजन प्रदूषण का कारण बनते हैं। एसे जल निकायों की जल गुणवत्ता में सुधार करने के लिए विभिन्न अमोनिया ऑक्सीकरण सूक्ष्मजीव जैसे नाइट्रोसोमोनास, नाइट्रोसोविब्रियो, नाइट्रोसोकोकस, नाइट्रोलोबस और नाइट्रोस्पिरा, नाइट्रोबैक्टर, नाइट्रोकोकस को पानी में पेश किया जाता है और वे नाइट्रिफिकेशन की प्रक्रिया द्वारा अमोनिया को कम विषाक्त रूप में प्रभावी रूप से स्थिर करते हैं।

### 3. तालाब के तल के कार्बनिक डिटरिट्स का जैव उपचार

ऐसे कई बायोरेमेडिएटर हैं जो प्रोटीन, लिपिड और कार्बोहाइड्रेट जैसे प्राकृतिक कार्बनिक यौगिकों की एक विस्तृत श्रृंखला के क्षरण को सक्षम करते हैं। जीनस बैसिलस की कुछ प्रजातियाँ, जैसे। बी. सबटिलिस, बी-लाइकेनफॉर्मिस, बी. सेरेस तालाब के पानी में डिटरिटस को तोड़ने में सक्षम हैं। अन्य प्रजातियाँ हैं लैक्टोबैसिलस और पैनीबैसिलस पॉलीमीक्सा भी कार्बनिक डिटरिटस के बायोरेमेडिएशन में सहायक हैं।

### जलीय पारिस्थितिकी तंत्र के लिए जैव उपचार के लाभ

बायोरेमेडिएशन जल निकाय में मौजूद अपशिष्ट यौगिकों को हटाने या खनिज करने की लागत प्रभावी और पर्यावरण के अनुकूल विविध है। यह विभिन्न कार्बनिक और अकार्बनिक यौगिकों पर प्रभावी ढंग से लागू किया जा सकता है। बायोरेमेडिएशन जल निकाय के ऑन-साइट या ऑफ-साइट अपशिष्ट को हटाने का सबसे कुशल और आसान तरीका है। यह माइक्रोबियल उपापचयी को बदलने और मेजबान जीव की प्रतिरक्षा को उत्तेजित करने के लिए जाना जाता है। यह एक बहुत ही प्रभावी तकनीक है जिसे भारी धातुओं को हटाकर जल निकायों की सफाई के लिए नियोजित किया जा सकता है जिससे स्वस्थ जलीय कृषि उत्पादन को सक्षम किया जा सकता है। किसान हितैषी होने के कारण, इस तकनीक को आसानी से अपनाया और लागू किया जा सकता है क्योंकि यह काफी सरल है और इसके लिए विशेष कौशल और प्रतिरक्षा की आवश्यकता नहीं होती है।

### बायोरेमेडिएशन की सीमाएं

तकनीक को केवल उन यौगिकों या दूषित पदार्थों पर लागू किया जा सकता है जो बायोडिग्रेडेबल हैं और दूसरों के लिए नहीं। यह समय लेने वाली प्रक्रिया है और उपचार जलवायु परिस्थितियों रोगाणुओं की मात्रा और सबस्ट्रेट्स के प्रकार आदि पर निर्भर करता है। मौजूदा जल निकाय की खाद्य श्रृंखला पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, एक ऐसा मुद्दा जिसे विस्तृत अध्ययन के आधार पर संबोधित करने की आवश्यकता है।

### निष्कर्ष

बढ़ती आबादी की खाद्य मांग को पूरा करने के लिए जलीय पारिस्थितिकी तंत्र पर गंभीर प्रभाव के साथ जलीय संसाधनों का गहन दोहन किया जा रहा है। तीव्र मानवीय गतिविधियों के साथ, जल निकायों को प्रदूषित किया जा रहा है जिन्हें जैव उपचार के माध्यम से कुछ हद तक ठीक किया जा सकता है। प्रभावी बायोरेमेडिएशन में अमोनिया की सांद्रता को कम करने के लिए नाइट्रिफिकेशन की इष्टतम दर बनाए रखना, तालाब के पानी से अतिरिक्त नाइट्रोजन को कम करने के लिए इष्टतम डिनाइट्रिफिकेशन, $H_2S$ के उन्मूलन के लिए सल्फाइड का अधिकतम ऑक्सीकरण और कार्बन से कार्बन डाइऑक्साइड का खनिजकरण शामिल है। बायोरेमेडिएशन जल निकाय की प्राथमिक उत्पादकता बढाने के लिए तलछट संचना की दर को कम करने में भी प्रभावी है। इसलिए, बायोरेमेडिएशन सबसे आशाजनक तरीकों में से एक हो सकता है जिसे भौतिक और रासायनिक एजेंटों (जिनके गंभीर परिणाम हो सकते है) के बजाय जैविक नियंत्रण एजेंटों या तकनीकों को नियोजित करके जल निकाय से दूषित पदार्थों को कम करने और समाप्त करने के लिए नियोजित किया जा सकता है। यह तकनीक पर्यावरण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना दूषित पानी को प्रभावी ढंग से दूर कर सकती है। इस प्रकार जलीय संसाधनों और उत्पादन की स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है।

*"निष्छलता प्रकृति प्रदत्त एक नैसर्गिक गुण है,
जो केवल अबोधता की स्थिति में ही परिलक्षित होती है।
यह बुद्धतत्व प्राप्त मनीषी या अबोध बालक के अतिरिक्त
इस जगत में कहीं भी दृष्टिगोचर नही होती है"*

# कृषि

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और बाजार में शीर्ष आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ऐप्स का उपयोग

सत्य प्रकाश एवं अशोक कुमार सिंह
प्रसार शिक्षा विभाग, डॉ. रा.प्र.के.कृ.वि. पूसा, समस्तीपुर, बिहार

**सार**

कृषि क्षेत्र में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से कई संभावनाएं जुड़ी हुई है, दुनिया का कृषि उद्योग लगभग 5 ट्रिलियन डॉलर का है, इस पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस से जुड़ी तकनीकी के जरिए फसलों के उत्पादन के साथ-साथ कीटों पर नियंत्रण संभव है, मिट्टी और फसल की वृद्धि पर निगरानी की जा सकती है, व्यापार पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के विशाल प्रभाव को स्वीकार करते हुए, अमेंजॅन ईबे और टिंडर जैसी शीर्ष फर्में मोबाईल उपयोगकर्ता अनुभव उत्पन्न करने और लाभप्रदता से सुधार करने के लिए अपने अनुप्रयोगों में एआई का व्यापक उपयोग करती हैं। स्टार्ट-अप भी एआई एकीकरण के लिए अधिक निवेश जुटाते हैं, जिससे उन्हे उच्च विपणन क्षमता और प्रतिस्पर्धात्मकता के लिए प्रेरित किया जाता है।

**(मुख्य शब्दः आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस, सूचना प्रबंधन चक्र, कृषि)**

## आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) क्या है?

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) मशीनों में मानव बुद्धि के अनुकरण को संदर्भित करता है जिसे मनुष्यों की तरह सोचने और उनके कार्यों की नकल करने के लिए प्रोग्राम किया जाता है। यह शब्द किसी भी मशीन पर भी लागू किया जा सकता है। जो सीखने और समस्या-समाधान जैसे मानव दिमाग से जुड़े लक्षण प्रदर्शित करता है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की आदर्श विशेषता युक्तिसंगत बनाने और उन कार्यों को करने की क्षमता है जिनमें किसी विशिष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने का सबसे अच्छा मौका होता है। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का एक सबसेट मशीन लर्निंग है, जो इस अवधारणा को संदर्भित करना है कि कंप्यूटर प्रोग्राम स्वचालित रुप से सीख सकते हैं और मनुष्यों की सहायता के बिना नए डेटा के अनुकूल हो सकते हैं। डीप लर्निंग तकनीक टेक्स्ट, इमेज या वीडियों जैसे बड़ी मात्रा में असंरचित डेटा के अवशोषण के माध्यम से इस स्वचालित सीखने को सक्षम बनाती है। जब ज्यादातर लोग आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस शब्द सुनते हैं, तो सबसे पहले वे रोबोट के बारे में सोचते हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि बड़े बजट की फिल्में और उपन्यास मानव जैसी मशीनों के बारे में कहानियां बुनते हैं जो पृथ्वी पर कहर बरपाती हैं। लेकिन सच्चाई के आगे कुछ नहीं हो सकता। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस इस सिंद्धात पर आधारित है कि मानव बुद्धि को इस तरह से परिभाषित किया जा सकता है कि एक मशीन आसानी से इसकी नकल कर सकती है और कार्यों को निष्पादित कर सकती है, सबसे सरल से लेकर अधिक जटिल तक। कृत्रिम बुद्धि के लक्ष्यों में मानव संज्ञानात्मक गतिविधि की नकल करना शामिल हैं। क्षेत्र में शोधकर्ता और डेवलपर्स सीखने तक्र करने और धारणा जैसी गतिविधियों की नकल करने में आश्चर्यजनक रुप से तेजी से प्रगति कर रहे हैं, इस हद तक कि इन्हें ठोस रुप से परिभाषित किया जा सकता है। कुछ का मानना है कि नवप्रवर्तक जल्द ही ऐसी प्रणाली विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं जो किसी भी विशय को सीखने या तक्र करने के लिए मनुष्यों की क्षमता से अधिक हो।

लेकिन अन्य लोग संशय सें रहते हैं क्योंकि सभी संज्ञानात्मक गतिविधि मूल्य निर्णयों से युक्त होती हैं जो मानवीय अनुभव के अधीन होती हैं। जैसे-जैसे प्रोद्ययोगिकी आगे बढ़ती है, कृत्रिम बुद्धिमत्ता को परिभाषित करने वाले पिछले मानक पुराने हो गये हैं। उदाहरण के लिए ऐसी मशीनें जो बुनियादी कार्यों की गणना करती हैं या ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकग्निशन के माध्यम से टेक्स्ट को पहचानती हैं, उन्हें अब कृत्रिम बुद्धिमत्ता नहीं माना जाता है, क्योंकि इस फंक्शन को अब एक अंतर्निहित कंप्यूटर फंक्शन के रुप में माना जाता है कई अलग-अलग उद्योगों को लाभ पहुंचाने के लिए एआई लगातार विकसित हो रहा है। मशीनों को गणित, कंप्यूटर विज्ञान, भाषा विज्ञान, मनोविज्ञान और अन्य पर आधारित क्रॉस-डिसिप्लिनरी दृष्टिकोण का उपयोग करने तार-तार किया जाता है।

## आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के अनुप्रयोग

कृत्रिम बुद्धि के लिए आवेदन अंतहीन हैं। प्रौद्योगिकी को कई अलग-अलग क्षेत्रों और उद्योगों पर लागू किया जा सकता है। एआई का परीक्षण किया जा रहा है और इसका उपयोग स्वास्थ्य सेवा उद्योग में दवाओं की खुराक और रोगियों में विभिन्न उपचार के लिए और ऑपरेटिंग रुम में सर्जिकल प्रक्रियाओं के लिए किया जा रहा है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस वाली मशीनों के अन्य उदाहरणों मे शतरंज खेलने वाले कंप्यूटर और सेल्फ-ड्राइविंग कार शामिल हैं। इन मशीनों में से प्रत्येक को उनके द्वारा की जाने वाली किसी भी कार्यवाही के परिणामों को तौलना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक क्रिया अंतिम परिणाम को प्रभावित करेगी। शतरंज में अंतिम परिणाम खेल जीत रहा है। सेल्फ-ड्राइविंग कारों के लिए, कंप्यूटर सिस्टम को सभी बाहरी डेटा को ध्यान में रखना चाहिए और इसे इस तरह से कार्य करने के लिए गणना करना चाहिए जो टकराव को रोकता है।

आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस में वित्तीय उद्योग में भी अनुप्रयोग हैं, जहाँ इसका उपयोग बैंकिंग और वित्त में गतिविधि का पता लगाने और ध्वजांकित करने के लिए किया जाता है जैसे कि असामान्य डेबिट कार्ड का उपयोग और बड़ी खाता जमा-ये सभी बैंक के धोखाधड़ी विभाग की मदद करते हैं। एआई के लिए एप्लिकेशन का उपयोग व्यापार को आसान बनाने और आसान बनाने में मदद के लिए भी किया जा रहा है। यह प्रतिभूतियों की आपूर्ति, मांग और मूल्य निर्धारण को आसान बनाकर किया जाता है।

## आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस का वर्गीकरण

आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस को दो अलग-अलग श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है, कमजोर और मजबूत। कमजोर कृत्रिम बुद्धिमत्ता एक विशेष कार्य को करने के लिए डिजाइन की गई प्रणाली का प्रतीक है। कमजोर एआई सिस्टम में वीडियों गेम जैसे ऊपर से शतरंज का उदाहरण और अमेंजॅन के एलेक्सा और ऐप्पल के सिरी जैसे व्यक्तिगत सहायक शामिल हैं। आप सहायक से एक प्रश्न पूछते हैं, यह आपके लिए इसका उत्तर देता है।

मजूबत आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस ऐसे सिस्टम हैं जो मानव जैसे माने जाने वाले कार्यों को अंजाम देते हैं। ये अधिक जटिल और जटिल सिस्टम होते हैं। उन्हें उन स्थितियों को संभालने के लिए प्रोग्राम किया जाता है जिनमें उन्हें किसी व्यक्ति के हस्तक्षेप के बिना समस्या को हल करने की आवश्यकता हो सकती है। इस प्रकार की प्रणालियाँ सेल्फ-ड्राइविंग कारों या अस्पताल के ऑपरेटिंग कमरों जैसे अनुप्रयोगों में पाई जा सकती हैं।

## बाजार में शीर्ष 10 आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस ऐप्स

जब मोबाइल ऐप उद्योग की बात आती है, तो सभी आकारों और विशेषज्ञताओं के व्यवसायों की कडी प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ता है। यह स्थिति उन्हें अपनी योग्यता बनाए रखने के लिए सभी विकासशील डिजिटल विकासों के साथ बने रहने के लिए मजबूत करती है। व्यापार पर आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस के विशाल प्रभाव को स्वीकार करते हुए, अमेजॅन, ईबे और टिंडर जैसी शीर्ष फर्में मोबाइल उपयोगकर्ता अनुभव उत्पन्न करने और लाभप्रदता में सुधार करने के लिए अपने अनुप्रयोगों में एआई का व्यापक उपयोग करती हैं। स्टार्ट-अप भी एआई एकीकरण के लिए अधिक निवेश जुटाते हैं, जिससे उन्हें उच्च विपणन क्षमता और प्रतिस्पर्धात्मकता के लिए प्रेरित किया जाता है।

सालाना, अधिक एआई ऐप वायरल होते हैं, जिससे उनके मालिकों को अधिक जोखिम और राजस्व मिलता है। इनमें से कुछ एप्लिकेशन महत्वपूर्ण भी साबित हुए हैं। आइए अब बाजार में शीर्ष 10 एआई ऐप्स पर एक नजर डालते हैं।

1. गूगल असिस्टेंट, 2.एलेक्सा, 3. यूपर, 4. सिरी, 5. फाइल, 6. डाटाबोट, 7. ईएलएसए स्पीक, 8. कोरटाना, 9. सुकराती, 10. प्रतिकृति

## खेती में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस क्या है?

एआई कृषि के क्षेत्र में एक उभरती हुई तकनीक है। एआई-आधारित उपकरण और मशीनों ने आज की कृषि प्रणाली को एक अलग स्तर पर पहुंचा दिया है। इस तकनीक ने फसल उत्पादन में वृद्धि की है और वास्तविक समय की निगरानी, कटाई, प्रसंस्करण और विपणन में सुधार किया है (यान्ह इत्यादि, 2007)।

## कृषि में एएल का उपयोग कैसे किया जा रहा है?

सटीक कृषि पौधों, कीटों और खेतों में खराब पौधों के पोषण में बीमारियों का पता लगाने में सहायता के लिए एआई तकनीक का उपयोग करती है। ड्रोन से, एआई सक्षम कैमरे पूरे खेत की छवियों को कैप्चर कर सकते हैं और समस्या क्षेत्रों और संभावित सुधारों की पहचान करने के लिए वास्तविक समय में छवियों का विश्लेषण कर सकते हैं।

## आई कृषि में कैसे उपयोगी हो सकता है?

कृषि में कई प्रक्रियाएं और चरण शामिल हैं, जिनमें से शेर का हिस्सा मैनुअल है। अपनाई गई तकनीकों को पूरक करके, एएल सबसे जटिल और नियमित कार्यों को सुविधाजनक बना सकता है। यह एक डिजिटल प्लेटफॉर्म पर बडे डेटा को इकट्ठा और संसाधित कर सकता है, कार्यवाही के सर्वोत्तम तरीके के साथ आ सकता है, और यहाँ तक कि अन्य तकनीक के साथ मिलकर उस कार्यवाई को शुरू कर सकता है।

## कृषि सूचना प्रबंधन चक्र में एआई की भूमिका

कृत्रिम बुद्धि और कृषि का संयोजन निम्नलिखित प्रक्रियाओं के लिए फायदेमंद हो सकता है बाजार की मांग का विश्लेषण एएल फसल चयन को आसान बना सकता है और किसानों को यह पहचानने में मदद कर सकता है कि कौन सी उपज सबसे अधिक लाभदायक होगी।

## जेखिम का प्रबंधन

किसान व्यावसायिक प्रक्रियाओं में त्रुटियों को कम करने और फसल खराब होने के जोखिम को कम करने के लिए पूर्वानुमान और भविष्य करने वाला विश्लेशण का उपयोग कर सकते हैं।

## प्रजनन बीज

पौधों की वृद्धि पर डेटा एकत्र करके, एआई उन फसलों का उत्पादन करने में मदद कर सकता है जो बीमारी से कम प्रवण होती है और मौसम की स्थिति के अनुकूल होती हैं।

## मृदा स्वास्थ्य की निगरानी

एआई सिस्टम रासायनिक मिट्टी का विश्लेषण कर सकता है और लापता पोषक तत्वों का सटीक अनुमान प्रदान कर सकता है। फसलों की रक्षा एआई पौधों की स्थिति की निगरानी कर सकता है और यहाँ तक कि बीमारियों की भविष्यवाणी कर सकता है, खरपतवारों की पहचान कर सकता है और हटा सकता है और कीटों के प्रभावी उपचार की सिफारिश कर सकता है।

## फसलों को खिलाना

एआई इष्टतम सिंचाई पैटर्न और पोषक तत्वों के अनुप्रयोग समय की पहचान करने और कृषि उत्पादों के इष्टतम मिश्रण की भविष्यवाणी करने के लिए उपयोगी है।

## फसल काटने वाले

एआई की मदद से कटाई को स्वचालित करना संभव है और यहां तक कि इसके लिए सबसे अच्छे समय की भविष्यवाणी करना भी संभव है।

## कृषि और खेती में आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस के लाभ

- कृषि बाजार में एआई तकनीक को ऑटो-सिंचाई के माध्यम से पानी की आवश्यकताओं के लिए खंडित किया गया है।
- यह किसानों को रोबोटिक्स, फसल, मिट्टी प्रबंधन और पशुपालन का प्रबंधन करने का संकेत भी देता है।
- एआई की कंप्यूटर विजन तकनीक किसानों को मिट्टी और उपज की स्थिति का विश्लेषण करने में मदद कर सकती है, जिससे कार्रवाई योग्य अंर्तदृष्टि पैदा हो सकती है। डीप लर्निंग और कंप्यूटर विजन का संयोजन मौसम की स्थिति, पौधों की वृद्धि, तापमान, फसलों की शेल्फ लाइफ, गैसीय सामग्री, और बहुत कुछ जैसे एनालिटिक्स का मानचित्रण करके कृषि उत्पादकता को महत्वपूर्ण रुप से बढ़ा सकता है।
- एआई इसे आसानी से बाजार की मांग और आपूर्ति, फसल प्रतिस्पर्धा, और क्षेत्रीय फसल योजना और इसे आसानी से संग्रहीत करने का प्रबंधन करता है।

## कृषि और खेती में आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस के नुकसान

- राबोट बनाने या खरीदने में बहुत पैसा खर्च होता है।
- इन्हें चालू रखने के लिए रखरखाव की आवश्यकता होती है।
- किसानों की नौकरी जा सकती है।
- रोबोट कृषि की संस्कृति/भावनात्मक आकर्षण को बदल सकते हैं।
- ऊर्जा लागत और रखरखाव।
- अनुसंधान और विकास की उच्च लागत।
- गरीब किसानों तक पहुँच का अभाव।

## निष्कर्ष

- आने वाले समय में फसलों की सेहत की निगरानी स्मार्ट ड्रोन के जरिये और खेतों की जुताई जीपीएस नियंत्रित स्वचालित ट्रैक्टरों से हो सकती है।
- साथ ही खेतों में कब और कितना कीटनाशक, उर्वरक का उपयोग करना है तथा मिट्टी को बेहतर बनाने के तरीके जैसी चीजों की जानकारी सही समय पर किसानों को आसानी से उपलब्ध हो सकती हैं।
- यह सब कृत्रिम मेधा (आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस) और अन्य संबधित प्रोद्योगिकी के उपयोग से संभव होगा।

## संदर्भ

हटसन, मैथ्यू (16 फरवरी 2018)। "कृत्रिम बुद्धिमत्ता का सामना प्रजनन क्षमता संकट से होता है। विज्ञान। पीपी. 725-726. बिबकोड: 2018 विज्ञान....359/725एच।

डीओआईः 10.1126/विज्ञान. 359.6377.725। मूल से 29 अप्रैल 2018 को संग्रहीत। 28 अप्रैल 2018 को लिया गया।श्वेत पत्रः आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस पर–उत्कृष्टता और विश्वास के लिए एक यूरोपीय दृष्टिकोण (पीडीएफ) ब्रुसेल्सः यूरोपीय आयोग। 2020 पी0 1. 20 फरवरी, 2020 को मूल से संग्रहीत (पीडीएफ) 20 फरवरी 2020 को लिया गया।

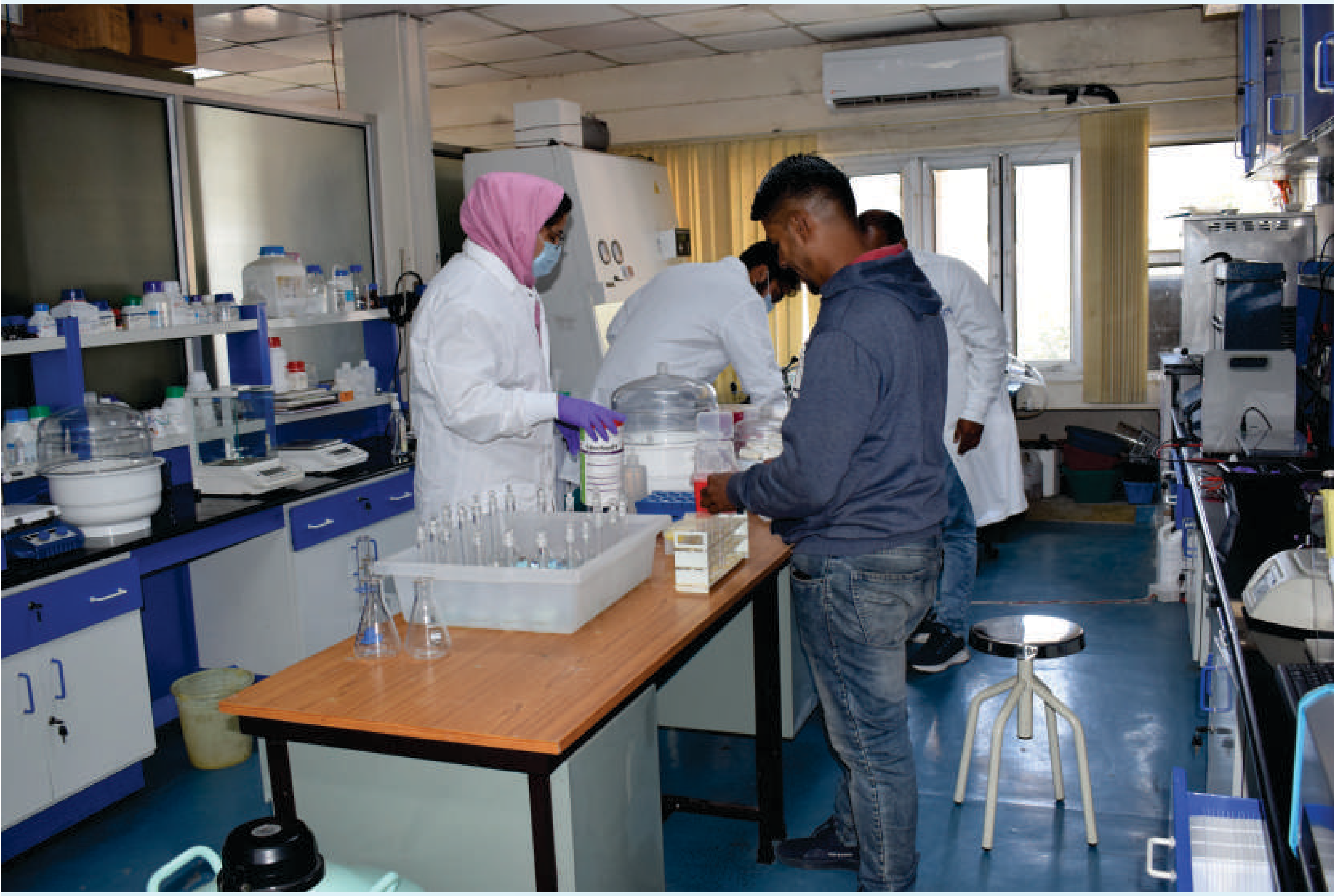

# औषधि–वाटिका

**प्रसून कुमार त्रिपाठी**
के.लो.नि.वि. (उद्यान), नई दिल्ली

आधुनिकता के नाम पर अपनी सब प्रकार की विचाराधरायें श्रान आदि त्यागकर नये ढंग अपनाने की होड़ लगी है। हम लोगों ने जिन मौलिक चीजों का त्याग किया उनमें से एक है जड़ी–बूटियाँ, औषधि वनस्पति आदि। लेकिन आधुनिक विज्ञान तथा रोग–चिकित्सा पद्धति की मर्यादायें धीरे–धीरे स्पष्ट होने लगी है। ऐसी अवस्था में हमें पारम्परिक चिकित्सा पद्धति तथा पुन: प्रकृति की ओर के मन्त्र पर निर्भर होना पडेगा अर्थात औषधि वनस्पतियों के गुणों को पहचानना पडेगा। इन वनस्पतियों को आप अपने घरों, छोटी सी वाटिका के रूप में या गमलो में आसानी से लगा सकते है। ये पौधें सामान्य रोगों के उपचार में बहुत लाभदायक है। तो आइये औषधीय पौंधों के बारे में जानकारी प्राप्त करते है।

## 1. कलिहारी

**स्थानीय नाम - कलिहरी**

**वनस्पतिक नाम – Gloriosa Superba**

औषधीय गुण एवं उपयोग–यह शोध, कंठमाल, गठिया व बाह वेदना, कुष्ठ तथा अर्श में टानिक के रूप में उपयोगी होता है। यह मूढ गर्भपातन में भी उपयोगी है। इसका पंचाग (जड, तना, फूल एंव पत्ती) बहुत उपयोगी होता है।

## 2. इसबगोल

**स्थानीय नाम– इसबगोल**

**वनस्पतिक नाम – Plantago Ovata**

औषधीय गुण एवं उपयोग– इसबगोल उच्च कोलेस्टाल, अल्सरी, पेचिश खुष्क ऑत एवं ऑत से सम्बन्धित अन्य विकारो में एक अच्छी औषधि मानी जाती है। पाचन तन्त्र की बीमारियों में इसबगोल एक कारगर औषधि के रूप में प्राचीन काल से उपयोग में लाई जाती है, इसकी भूसी जही एक ओर दस्त एवं ऑत की समस्या से राहत देती है, वही कब्ज एवं रूके हुये मल को कष्ट मुक्त सहज सम्पन्न करने में अत्यन्त उपयोगी है। भूयी में अपने वजन का कई गुना पानी सोखने की क्षमता होती है। इसबगोल अमीनो एसिड एवं लिनोलिक सिड का भी अच्छा स्रोत है।

3. नीम

स्थानीय नाम- नीम

वनस्पतिक नाम- Azadirachta India

औषधीय गुण एवं उपयोग-पराम्परागत रूप से नीम का उपयोग विभिन्न रोगो मे जैसे त्वचा के रोग, दांत के रोग, फोडे-फुसी, मुधमेह, जोडों क दर्द इत्यादि में प्रयोग किया जाता है।

4. मीठा

नीम स्थानीय नाम- मीठा नीम

वनस्पतिक नाम- Murraya Koenigii

औषधीय गुण एवं उपयोग-मीठे नीम की पत्तियाँ अतिसार रोधी, शक्ति वर्धक, मधुमेह इत्यादि में लाभदायक होती है। यह एण्टीऑक्सीडेन्ट के रूप में भी कार्य करती है।

5. अडूसा

स्थानीय नाम- वासा

वनस्पतिक नाम- Adhatoda Vasica

औषधीय गुण एवं उपयोग-हर प्रकार की खसी में ताजे पत्तो का 172 चम्मच रस शहद या गुड से सुबह-शाम लेने पर लाभ होता है। इसके पंचाग (जड , तना, फूल, फल एवं पत्ती) का चार-चार चम्मच काढा सुबह-शाम शहद के साथ लेने से दमा में उत्तम लाभ होता है।

6. अमृता

स्थानीय नाम- गुर्च

वनस्पतिक नाम- Tinospora cordifolia

औषधीय गुण एवं उपयोग-सभी प्रकार के पराने बुखार में, यकृत जन्य बीमारियों जैसे भूख न लगना, पीलिया, मुधमेह में, चर्म रोगो में जैसे खुजली, फोडा-फुन्सी, मासिक धर्म के विकार जैसे अधिक/कम खून आना/गुर्च की बेल (पत्ती रहित) का पीस रस निकालकर 1-1 चम्मच रस शहद के साथ या केवल रस का सेवन खाली पेट सुबह करे। डाली को कूट-पीसकर सुखाकर रख लें। इसको 5-5 सत्ती सुबह-शाम शहद के साथ ले।

7. काल -मेघ

स्थानीय नाम- काल मेघ

वनस्पतिक नाम- Andrographis Paniculata

औषधीय गुण एवं उपयोग-इसका पचाग (जड, तना, फूल, फल एवं पत्ती) पुराने बुखार चर्म रोग, पेट के कीड़े, एलर्जी एवं घाव में। साधारणतया इसके पत्तों का रस निकालकर शहद से चाटा जाता है। ताजे पत्तों का पीस कर रस निकालकर करीब 1-1 चम्मच रस शहद से लिया जाता है।

8. घृत कुमारी

स्थानीय नाम- घीकवार

वनस्पतिक नाम- Aloe vera

औषधीय गुण एवं उपयोग-घृतकुमारी के मोटे पत्तों कासे काटकर उसका गूदा निकालकर मिश्री की चाशनी बनाकर उसका पाक बना ले। इसका सुबह शाम 1-1 चम्मच सेवन करें। गुदे के एक टुकडे को सुबह खाली पेट खाने से कब्ज व उरद विकार अच्छा हो जाता है। चोट या जलने पर गूदे को चीरकर जले-कटे स्थान पर हल्दी चूर्ण के साथ लगाये। इसका उपयोग जलने पर, बवासीर में, कटने पर, चेहरे/शरीर का सौन्दर्य निखारने में, कफ में, मासिक धर्म की गड़बड़ियों में तथा पीलिया व यकृत विकार में किया जाता है।

9. ज्वाराकुश

स्थानीय नाम- ज्वाराकुश

वनस्पतिक नाम- Cymbopogon Jwarankusha

औषधीय गुण एवं उपयोग- इसका उपयोग ज्वर, जुकाम, खासी, सिर दर्द, सांस की परेशानी। आमतौर पर ज्वाराकुश के पत्तों को सुबह-शाम चाय में डालकर लगातार पीने से सर्दी-जुकाम होने से बचा जा सकता है। पत्तियों का 1-1 चम्मच रस शहद से लेने पर खांसी या गले की खराश ठीक हो जाती है।

10. तुलसी

स्थानीय नाम- तुलसी

वनस्पतिक नाम- Ocimum sanctum

औषधीय गुण एंव उपयोग- इसका उपयोग खांसी, बुखार, दमा, जुकाम, गले में खराश। जुकाम, खांसी या ज्वर में सुबह खाली पेट, तुलसी के पत्तो का 1-1 चम्मच रस शहद में चाटें। पुरानी खांसी में पत्तों का रस अदरख के रस के साथ सुबह-शाम शहद से लेने पर लाभ होता है। गले की खराश में पंचाग का काढ़ा पीने से या गरारे करने से खराश ठीक हो जाती है।

11. **पिप्पली**

**स्थानीय नाम- पिप्पली छोटी पीपल**

**वनस्पतिक नाम- Piper longum**

औषधीय गुण एवं उपयोग- इसका उपयोग खांसी, बुखार, सांस फूलना या दमा, पेट के रोग, वात जनित दर्द में किया जाता है। बराबर मात्रा में छोटी पिप्पली, काली मिर्च व सोंठ को पीसकर मिश्रण (त्रिकूट या त्रिकटु) बना लें। आठ वर्ष के बच्चे को एक चुटकी (200-300 मिलीग्राम) बड़ों को 1-2 ग्राम त्रिकटु शहद के साथ सुबह-शाम खाली पेट देने से 4-5 दिन में खांसी से लाभ होता है। इसे लेने से आधे घण्टे पहले और बाद में कुछ भी खाना-पीना चहिये। हल्के पुराने बुखार के ऊपर बतायी गयी मात्रा 5-10 बूंद घी में मिलाकर ले।

12. **ब्राह्मी**

**स्थानीय नाम- ब्राह्मी**

**वनस्पतिक नाम- Bacopa monnieri**

औषधीय गुण एंव उपयोग-इसका उपयोग स्मरण शक्ति बढ़ाने में, मन्द बुद्धि, अनिद्रा तनाव में किया जाता है। स्मृति शक्ति हेतु ब्राहमी के पंचाग का 1 से 2 चम्मच रस घी में मिलाकर अथवा सूखा हुआ पंचाग 2 रत्ती से 5 रत्ती तक एक कप दूध के साथ लिया जा सकता है। मानसिक तनाव में सुबह-शाम 5 ग्राम ब्राहमी चूर्ण गाय के घी से लेने पर लाभ होता है।

13. **भुई आंवला**

**स्थानीय नाम- भुई आंवला**

**वनस्पतिक नाम- Phyllanthus amarus**

औषधीय गुण एंव उपयोग-इसका उपयोग पीलिया, बदहजमी, जी मिचलाना, भूख न लगना, फोड़ा-फुंसी खुजली में किया जाता है। ताजे पंचाग का 1-2 चम्मच रस सुबह, शाम शहद के साथ लेने पर पीलिया या यकृत जन्य रोगों में हफ्ते भर में अमूल परिवर्तन होते है। खुजली या फोड़ा-फुंसी में पूरे पौधे को पीस कर रोगग्रस्त भाग में लगाने व रस पीने में लाभ होता है।

14. **मण्डूकपर्णी**

**स्थानीय नाम-मण्डूकपर्णी/ब्राहमी (हरिद्वारी)**

**वनस्पतिक नाम- Centella asiatica**

औषधीय गुण एंव उपयोग- इसका उपयोग मन्द बुद्धि, अनिद्रा, स्मृति हास, चर्म रोग, अपच, बदहजमी में किया जाता है। स्मृति द्वारा व मन्द बुद्धि व्यक्तियों हेतु ताजे पत्तों का 1-2 चम्मच रस शहद से सुबह खाली पेट लगातार लें। अनिद्रा या अपच में पंचाग को छाया में सूखाकर चूर्ण बनाकर रखें। इसको 2-3 ग्राम सुबह-शाम शहद से लें।

15. शतावर

स्थानीय नाम- शतावर, शतावरी

वनस्पतिक नाम- Asperagus racemosus

औषधीय गुण एंव उपयोग-इसकी उपयोग श्वेत प्रदर, पेशाब में खून आना, अनिद्रा, कमजोरी में किया जाता है। शतावर की सूखी जड़ को पीसकर 2-2 चम्मच चूर्ण दूध से सुबह शाम पीने से दूध पिलाने वाली माताओं के दूध में वृद्धि होती है एंव शरीर बलवान रहता है। श्वेत प्रदर में सूखी जड़ का 5 से 10 ग्राम चूर्ण एंव जीरा चूर्ण 10 ग्राम एक कप दूध के साथ सुबह खाली पेट पीने से तनाव कमजोरी से होने वाला श्वेत-प्रदर ठीक हो जाता है।

16. अश्वगंधा

स्थानीय नाम- अश्वगंध, असगन्ध

वनस्पतिक नाम- Withania somnifera

औषधीय गुण एवं उपयोग- यह एक उच्च कोटि का रसायन, बलवर्धक एव बाजीकरण औषधि मानी जाती है। इसके अतिरिक्त इसका उपयोग, आमवात (गठिया), नाडी बल्य, दीपन पाचन, उन्माद एवं अवस्मार आदि व्याधियों में किया जाता है। यह लगभग 150 से भी ऊपर विभिन्न आयुर्वेदिक एव यूनानी औषधि यागों के निर्माण में घटक द्रव्य के रूप में किया जाता है।

17. नींबू घास

स्थानीय नाम- नींबू घास

वनस्पतिक नाम - Cymbopogon flexuosus

औषधीय गुण एंव उपयोग- इसके तेल का उपयोग धोने वाले साबुन तथा दूसरे घरेलू उत्पादों को सुगन्धित बनाने में प्रयोग किया जाता है। सिट्रल से एल्फा और बीटा आयोनोन तैयार किये जाते है।

18. सदाबहार

स्थानीय नाम- सदाबहार, सदाफुल, सदासुहागन

वनस्पतिक नाम- Catharanthus roseus

औषधीय गुण एंव उपयोग-पत्तियों से प्राप्त एल्केलायडस विनब्लास्टिन और विनक्रिस्टीन का उपयोग एंटी कैंसर के रूप में किया जाता है। जड़ से प्राप्त श्राराभो का उपयोग, हृदय एंव उच्च रक्त चाप की बीमारियों में किया जाता है।

**19. वच**

**स्थानीय नाम- घोडवच, वच**

**वनस्पतिक नाम-Acorus calamus**

औषधीय गुण एंव उपयोग-कफ़ और वात का शमन करने तथा पित्त को बढ़ाने वाली वच, वाणी एंव वृद्धि मे निखार लाती है। यह मिरगी, स्मृतिनाश, बच्चों का हकलाना, भूख न लगना व पेट दर्द तथा मोटापा दूर करने में भी लाभदायक है।

**20. हरड**

**स्थानीय नाम- हरीतकी या हरण**

**वनस्पतिक नाम- Terminalia Chebula**

औषधीय गुण एंव उपयोग-यह पाचक रसों को अधिक सक्रिय बनाकर मेटाबालिक ट्रान्सफारमेसन सें सहायता देकर क्षुधा, बल और बुद्धि की वृद्धि करती है। इसका उपयोग कब्ज में या अन्य उदर रोगों में किया जाता है।

**21. आंवला**

**स्थानीय नाम- आंवला या आमलकी**

**वनस्पतिक नाम- Emblica officinalis**

औषधीय गुण एंव उपयोग-यह वात, पित्त, कफ, त्रिदोश शामक होने के कारण विशेष लाभकारी है। शरीर की शक्ति बढ़ाता है प्रसिद्ध त्रिफला चूर्ण का यह दूसरा महत्वपूर्ण घटक है। विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है, जिससे इसके सेवन से रोग प्रतिरोधक क्षमता पैदा करती है।

**22. बहेडा**

**स्थानीय नाम- बहेडा या विभीतक**

**वनस्पतिक नाम- Terminalia bellerica**

औषधीय गुण एवं उपयोग-प्रसिद्ध त्रिफला चूर्ण का यह तीसरा घटक है। जिसे प्राचीनकाल से कई रोगों का दूर करने में अकेले भी प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में शोथहर यानी सूजन व दर्द को कम करने वाला तथा श्लेष्महर यानी कफ को निकालने वाला द्रव्य माना गया है। इसका उपयोग सूजन में, कफ खांसी में, कब्ज व बवासीर में तथा चर्म विकार में किया जाता है।

23. **मोथा**

**स्थानीय नाम- मोथा**

**वनस्पतिक नाम- Cyperus rotunudus**

औषधीय गुण एवं उपयोग-यह गठियाँ, रियूमेटाइड (आम वात) तथा आस्टियो आर्थराइटिस (संधिवात) तथा आव के कारण उत्पन्न गठिए में लाभकारी है। मोथा घास के जड़ से लगी छोटी-छोटी गांठे निकालकर, स्वच्छकर सुखाकर चूर्ण बना लेते है। इस चूर्ण को जल से सेवन किया जाता है।

24. **बेल**

**स्थानीय नाम- बिल्व या बेल**

**वनस्पतिक नाम- Aegle marmelos**

औषधीय गुण एंव उपयोग- इसका फल एवं औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके उपयोग से पुरानी पेचिश, ऑव (संग्रहणी) ठीक हो जाती है। इसके पत्तो का स्वरस दस दिन तक लगाातार सेवन ने से मधुमेह/डायबिटीज में फायदा होता है।

*"बड़ों का दिया हुआ आशीर्वाद और अपनों की दी हुयी शुभकामनाओं का कोई रंग नही होता, लेकिन जब ये रंग लाते हैं तो जीवन में रंग भर जाते हैं"*

# सम्पोषित कृषि व्यवस्था के लिए इको-इन्टेंसीफ़िकेशन में सूक्ष्म जीवों की भूमिका

हेमराज छीपा
उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय झालावाड़, कृषि विश्वविद्यालय कोटा

बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए खाद्य उत्पादन में भी उत्तरोत्तर वृद्धि आवश्यक है। इसके लिए, पूरी दुनिया में किसान समुदाय रासायनिक खाद एवं कीटनाशको को अनुचित तरीके से प्रयोग कर रहे है, जिससे कृषि उत्पादो का उत्पादन बढ़ रहा है, लेकिन भोजन और पर्यावरण संतुलन की गुणवत्ता में काफी कमी आ रही है। रसायनों के अधिक उपयोग के कारण मृदा सूक्ष्मजीवो का पारिस्थितिक संतुलन गड़बड़ा गया है। इसी तरह, रासायनिक कीटनाशकों के अनियंत्रित उपयोग ने भी गैर-लक्षित सूक्ष्मजीवो को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया है या रासायनिक कीटनाशकों के प्रति उनकी प्रतिरोधक क्षमता को बड़ा दिया है।

इको इंटेंसीफिकेशन कृषि उत्पादन में सुधार के लिए प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और जैव विविधता के संरक्षण की प्रक्रिया है। मृदा के सूक्ष्मजीव विभिन्न जैव-जियोकेमिकल प्रक्रियाओं के पारिस्थितिक संतुलन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऐसी जैव-रासायनिक प्रक्रियाओं में संतुलन न केवल मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखता है, बल्कि पर्यावरणीय स्थिरता को भी बनाए रखता है। मृदा के सूक्ष्मजीव, पोषक चक्र, क्षरण, कीट नियंत्रण और रोगजनक विनियमन में भी सक्रिय भूमिका निभाते है।

जैविक खेती मृदा सूक्ष्म जीवो, वनस्पतियों के विकास और संरक्षण का समर्थन करती है। यह बताया गया है कि जैविक खेती में पारंपरिक खेती की तुलना में मृदा में 32 से 84% अधिक सूक्ष्मजीवो का बायोमास होता है जिनमे कार्बन, नाइट्रोजन, फॉस्फोलिपिड फैटी एसिड, डिहाइड्रोजनेज, यूरीएज और प्रोटीएज एंजाइमेटिक गतिविधियों वाले होते हैं। जैविक खेती, जैव विविधता के नुकसान, मिट्टी की गिरावट और पोषक तत्वों के रिसाव को कम करने में सहायक है, जो न केवल माइक्रोबियल वनस्पतियों का समर्थन करते हैं, बल्कि साथ ही साथ क्षेत्र के पर्यावरण संतुलन का प्रबंधन करते हैं और मिट्टी की उर्वरता में सुधार करते हैं। वर्तमान में, विश्व में केवल एक प्रतिशत किसान ही इस तरह की तरीको को लागू कर रहे हैं एवं जैविक खेती के माध्यम से पर्यावरण के प्रति जागरूकता फैला रहे है।

जैविक खेती के द्वारा स्वस्थ और उपजाऊ मिट्टी के लिए, मिट्टी की जैव विविधता को बनाए रखना समय की आवश्यकता है। कई मृदा सूक्ष्म जीवो को पौधे की वृद्धि संवर्धन जीवाणुओं के रूप में उनकी उपयोगिता दिखाई गई है और आगे नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले, फॉस्फेट सॉल्युलाइजर/मोबिलाइजर, खाद और जैव कीटनाशक में विभाजित किया गया है।

ऐसे जीवाणु, पौधों और उनकी आसपास की मिट्टी मे संपर्क मे रहते हैं और विभिन्न जैव रासायनिक गतिविधियों द्वारा पौधों और अन्य सूक्ष्मजीवों को पोषक तत्व की उपलब्धता आसानी से करवाते हैं। विभिन्न कार्यक्षमता वाले सूक्ष्मजीवीय समूह एग्रोकोसिस्टम के विकास का दृढ़ता से समर्थन करते है। विभिन्न देशों में राइजोबियम, एजोटोबैक्टर क्रूकोकम, एजोस्पाइरिलम, बेसिलस मेगाटेरियम, पैनीबैसिलस, ब्रैडीराइजोबियम, स्यूडोमोनास, पेनिसिलियम एवं एस्परजिलस जैसे सूक्ष्म जीवो का नाइट्रोजन निर्धारण या फॉस्फेट घुलनशीलता में उपयोग कर रहे हैं। (चित्र 1) नाइट्रोजन और फास्फोरस पौधों की मुख्य पोषक आवश्यकता है जो जड़ एवं तने के विकास, पौधे की परिपक्वता, बीज निर्माण, ऊर्जा स्थानांतरण, प्रकाश संश्लेषण और कोशिका विभाजन में शामिल हैं। इसी तरह, जड़ से जुड़े सूक्ष्मजीव जैसे कि माइकोराइजा भी जटिल पोषक तत्वों को सरल अणुओं मे परिवर्तित करते है तथा पोषक तत्वों को प्राप्त करने के लिए पौधे की जड़ों को बढ़ावा देते हैं। सूक्ष्मजीव भी कार्बनिक पदार्थों के क्षरण में शामिल होते हैं और मिट्टी में ह्यूमस सामग्री को बढ़ाते हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता में सुधार होता है। मिट्टी की उर्वरता की विभिन्न गतिविधियों में सूक्ष्मजीवो की भूमिका उन्हें टिकाऊ कृषि के लिए अधिक आशाजनक एजेंट बनाती है लेकिन फिर भी, स्थानीय स्तर पर विभिन्न आवासों और मौसम की स्थिति में सूक्ष्मजीवीय समूह की भूमिका अज्ञात है और नए सूक्ष्मजीवो की प्रजातियों का पता लगाने की आवश्यकता है। इसलिए, खाद्य गुणवत्ता और उत्पादन मे स्थिरता बनाए रखने के लिए वर्तमान कृषि प्रथाओं में मिट्टी की जैव विविधता का संरक्षण आवश्यक है।

# बागवानी फलों के प्रकार एवं उसके कलम/पौध की खरीदी करते समय ध्यान रखने योग्य बातें

के.बी. कथीरीया
श्री आनंद कृषि विश्वविद्यालय आनंद

उल्लेखनीय है कि गुजरात में 17-18/05/2021 को आये चक्रवाती तूफान 'ताउते' के कारण काफी नुकसान हुआ है। इस चक्रवाती तूफान ने कृषि और उस पर आधारित व्यवसाय को सबसे ज्यादा नुकसान पहुँचाया है। अधिकतम क्षतिग्रस्त क्षेत्रों में (जिलों में) बागवानी फसलें जैसे की आम, आँवला, अमरूद, नीबूं, केला, पपीता, नारियल इत्यादि फसल को काफी नुकसान पहुँचा है। इस परिस्थिति में किसानों के बगीचे में क्षतिग्रस्त पेड़ों के बदले नए कलम/पौध लगाये जाये या फिर पूरे बगीचे को नए तरीकों से व्यवस्थित किये जाये। नये कलम/पौध को खरीदते वक्त किन बातों को ध्यान में रखनी चाहिए उसकी चर्चा इस लेख में की गई है। गुजरात राज्य बागवानी फसल के क्षेत्र में अग्रसर रहा है। यहाँ के किसान खेती फसलों के साथ-साथ बागवानी फसलें जैसे कि आम, अनार, नींबू, अमरूद, सीता फल, पपीता, केला, चीकू, आवँला, नारियल इत्यादि की भी खेती करते हैं।

आमतौर पर बागवानी फसलों की खेती करने वाले किसान राज्य की अलग अलग नर्सरी एवं दूसरे राज्यों से भी कलम/पौध की खरीदी करते है। बागवानी फसलें उत्पाद के लिये बहुत लम्बा वक्त लेना है और इसलिए एक बार फसल लगने के बाद कई सालों तक फलों का उत्पाद लिया जा सकता है। पौधारोपण के समय यह ध्यान देना चाहिये कि कलम और पौध की अच्छी किस्मों का प्रयोग करे, जिस से फसलों की गुणवत्ता एवं बाजार भाव अच्छा मिल सकें। जलवायु परिवर्तन की परिस्थिति मे बागवानी फसलों के कलम/पौध की उच्च गुणवत्ता से अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है। अच्छी गुणवत्ता के कलमों/पौधों का चयन बहुत ही महत्वपूर्ण मृद्धा है, जिससे कि कम समय में अधिक उत्पादन मिल सकें।

## बागवानी फसलों के उत्पादन पर असर करने वाले घटक

- ❖ बगवानी फसलों के उत्पादन पर असर करने वाले अनेक घटकों में रोग, कीट, और खर-पतवार मुख्य घटक में शामिल है। हाल में जो किसान बागवानी फसलों के साथ जुड़े हुये है, उनकी मुख्य समस्या रोग एवं कीट से फसल की सुरक्षा ही है। इस विषय की अधूरी जानकारी और रोग एवं कीट नियंत्रण समय से नही होने के कारण किसानों को भारी नुकसान सहना पड़ता है।
- ❖ बगवानी फसलों का मुख्य आधार स्वस्थ एवं रोग रहित पौधों तथा कलमों का उपयोग है। यदि कलम/पौध अन्य राज्यों एवं देशों से आ रही हो तो यह ध्यान रखना चाहिये कि वह पूरी तरह से रोग मुक्त हैं। गुजरात और अन्य राज्यों में बडे पैमाने में नर्सरीयाँ खुलती जा रही हैं, जिसके मालिकों के पास पौध सम्बन्धित विषय के बारे में जानकारी न होने के कारण किसानों को अच्छी गुणवत्ता वाली कलम/पौध नही मिल पाता।
- ❖ आमतौर पर राज्य के बाहर से खरीदे जाने वाले कलम/पौध की मिटट्ी के साथ मृदा जनित कवक, कृमि और कीट जैसे जीवों के रहने की संभावना रहती है जिसका किसानों को आसानी से पता नही चल पाता। खासकर के प्लास्टिक के थैलों एवं गमलों में तथा रोग जनित मिटट्ी वाली जमीन में उगाये हुये पौध/कलमों के द्वारा आसपास की स्वस्थ रोगरहित खेतों में रोगों का फैलाव होता है। पौध/कलमों के साथ जो रोग बीमारियाँ आ जाती हैं, वो रोग रहित जमीन में भी स्थायी रूप से फैल जाती हैं, खासकर बरसात के मौसम में समस्त बगीचे में तथा आसपास के खेतों में भी फैल जाती है।
- ❖ अक्सर मृदा जनित रोग कारक प्रतिकूल वातावरण में भी वर्षों तक सुसुप्त अवस्था में भी जीवित रहते है और अनुकूल वातावरण मिलने पर वो सक्रिय हो जाते है जिसके फलस्वरूप आर्थिक नुकसान करने में सक्षम होते हैं।
- ❖ इन रोग जनकों के कारण शुरूआती वर्षों में उस फसल के पौधों पर प्रतिकूल प्रभाव आसानी से नही देखा जाता है, पर जब पौधों पर दिखाई देता है तब तक बहुत देर हो चुकी होती है। अतः इस का प्रबंधन लगभग असंभव हो जाता है। इसलिये शुरूआत में ही कलम या पौध खरीदते समय ध्यान रखना बहुत जरूरी होता है।

## पौध/कलम खरीदते समय ध्यान रखने योग्य बातें

- ❖ मृदा एवं पर्यावरण के अनुकूल फसलों तथा निम्नलिखित किस्मों के पौध का चयन किया जाना चाहिये ताकि अच्छा उत्पादन मिले और साथ ही क्षेत्र और बाजार के मांग के आधार पर की मते भी अच्छी प्राप्त हो सकें।

## मुख्य फसलों की विभिन्न किस्में

| क्र.स. | फसलों के नाम | किस्म |
|---|---|---|
| 1. | आम | केसर, हाफूस, दशहरी, लंगड़ा, राजापुरी, वशीबदामी, तोतापूरी, सरदार, दाडमिया, नीलम, आम्रपाली, सोनपरी, निलफान्सो, रत्ना |
| 2. | अनार | भगवा, भावनगरी, मृदुला, आरकता, ज्योति |
| ३. | नीबू | कागजी नींबू, रंगपुरलाईम |
| 4. | अमरूद | लाल बहादुर, इलाहाबाद, सफेदा, लखनऊ–49 चीतीदार, धोलका रेशमडी, अरकामृदुला, अरकाअमूल्या, अरकारश्मि, अरकाकिरण, कोहिर सफेद, सफेदजाम, ललितस्वेता |
| 5. | पपीता | मधुबिन्दू, कुर्गहनीडयू, वाशिंग्टन, पूसाडिलिसियस, सी.ओ.–1, सी.ओ.–2, सी.ओ.–3, सी.ओ.–4 रेडलेडी 786, गुजरात जूनागढ़ पपीता–1 |
| 6. | केला | बसराई, रोबस्टा, ग्रान्डनेइन, गणदेवीसिलेकशन |
| 7. | चीकू | कालीपत्ती, क्रिकेटबोल, भूरीपत्ती, पीलीपत्ती, सी.ओ.–2 कीर्ती भारती औरपी.के.एम.–1 |
| 8. | आवँला | गुजरात आवँला–1 (आनंद–2), कृष्णा, चकैया, कंचन, एन.ए.–7 (नीलम), गोमा ऐशवर्या |
| 9. | नारियल | शंकरटी x डी, बोनाबट की, शंकर डी x टीए, गणदेवी सिलेकशन, पश्चिम किनारा की ऊँचीजात |

- स्वस्थ्य पौधों/कलमों का ही चयन करें।
- कलमों को मातृ पौधा से अलग करने के 15–20 दिन बाद उपयोग में लायें।
- बहुत छोटे या बहुत बड़े पौध के बजाये मध्यम आकार के पौध का चयन करें।
- पौधा और उप–पौधा समान मोटाई के होने चाहिये और आपस में अच्छी तरह से जुड़े होने चाहिये।
- गुजरात राज्य के कृषि विश्वविद्यालयों, गुजरात राज्य के बागवानी और कृषि विभाग की नर्सरी के साथ–साथ गुजरात राज्य कृषि विभाग से मान्यता प्राप्त नर्सरी से ही पौध/कलम खरीदना चाहिये।
- ऐसी कलम चुने जिसकी पत्तियाँ स्वस्थ्य और हरी हों, मुरझाया हुआ पौधा नाचूनें।
- गुट्टी कलम के जोड़ो पर लगी रस्सी के निशान नहीं होने चाहिये।
- नये रोग, कीट और कृमि अन्य राज्यों से प्रतिरोपित पौध/कलम के माध्यम से हमारे राज्य में प्रवेश करते है और अनुकूल परिस्थितियों में फैल जाते है।
- बारिश, अंतर–फसल, कृषि उपकरण आदि के माध्यम से फैलते हैं इसलिये बिना सत्यापन के दूसरे राज्यों से पौध/कलम ना खरीदें।
- रोपाई में कलम/पौध के उपयोग करने से पहले राज्य के कृषि विश्वविद्यालय, कृषि विज्ञान केन्द्रों पर प्लास्टिक की थैली या गमले में मिट्टी और उनमें पौधों की जड़ों की जाँच बहुत महत्वपूर्ण है। इसके बाद ही प्रतिरोपित पौधे स्वस्थ रहते हैं। संपूर्ण जाँच के बाद ही पौधे के प्रतिरोपण का कार्य करें। चूँकि किसान आमतौर पर इस प्रणाली का पालन नहीं करते इसलिये वर्तमान में रोग कारक और कृमि का प्रकोप अधिक है और भविष्य मे अधिक बढने की संभावना है।
- आमतौर पर किसान जल प्लावन विधि से सिंचाई करते है, जिससे मृदा जनित रोग, कीट और कृमियों का तेजी से प्रसार होता है। लेकिन यदि टपक सिंचाई पद्धति अपनाई जाये तो इसके प्रसार को रोका जा सकता है।
- खासकर नारियल फसल के मामले मे जो रोपाई के लम्बे समय बाद फल उत्पादन करते है इसलिये केवल उन पौधों का चयन करना चाहिये जिसमें प्रति वर्ष पचास से अधिक फल आते हैं।
- आम, चीकू और अमरूद जैसे फसलों के लिये कलम/पौध का चयन अधिक उचित होता है।
- केले की फसल में टिशू–कल्चर द्वारा उगाये गये पौधों का चयन करते समय ध्यान रखना चाहिये कि वो पौधे सही किस्म के होने चाहिये साथ ही साथ एक समान होने चाहिये।

### चयनित पौधे रोपते समय ध्यान रखने योग्य बातें

- कलम/छांट को बादल छाए वातावरण में और यदि संभव हो तो बूंदा–बांदी में प्रति रोपण करना चाहियें। अगर बारिश ना हो तो शाम को पौधे लगाये और तुंरत पानी से सिंचाई करें।
- यदि कोई पौधा/कलम गमले में हो तो एक दिन पहले उसमें पानी दें जिससे गमले में से पौध सरलता से बिना नुकसान के निकल आयें।

ऽ पौध/कल मनिका लेते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि पौधों के साथ संलग्न मिटट्ी अलग न हो जाये।
ऽ यदि पौध प्लास्टिक के थैले में है तो चाकू की मदद से ऊर्ध्वाघर काट कर थैले को पौध से सावधानी से अलग करें।
- आवश्यकता अनुसार गढ्ढे बनाकर उसके बीच में पौध का प्रतिरोपण करें।
- पौध/कलम के जड़ से संलग्न मिटट्ी चारों तरफ समान रूप से होनी चाहिये और ध्यान रखे कि मिटट्ी के बाहर जड़ का कोई हिस्सा न रह जायें।
- यदि कलम/पौध की लम्बाई अधिक हो तो किसी लकड़ी से उसे सहारा देना चाहिये और हो सके तो किसी रस्सी से अच्छी तरीके से बांध देना चाहिये ताकि पौधे गिर कर सूख न जायें।
- प्रति रोपित कलम/पौध को पशुओं में सुरक्षित रखने के लिये पौध के चारों तरफ कँटीली झाड़ी प्लास्टिक या लोहे का पिंजरा लगा दें।
- यदि पौध प्रतिरोपण के बाद आवश्यक वर्षा ना हो तो आवश्यकता अनुसार सिंचाई करें।
- प्रतिरोपण के 40 से 50 दिनों बाद 'रूट स्टाक' को जोड़ के ऊपर से काट लें।
- प्रतिरोपित कलम के ऊपर नई शाखायें आने पर, बंधी रस्सी को सावधानी पूर्वक हटा दें।
- प्रतिरोपित पौधों को समय समय पर छटांई करते रहना चाहिये ताकि उसका विकास समान रूप से सभी दिशाओं में हो।

अगर सभी किसान ऊपर दिये गये दिशा निर्देशों का समय पर पालन करेंगें तो भविष्य में होने वाली मृदा जनित रोगों, कृमि इत्यादि से होने वाले नुकसान से बच सकते है और तंदुरूस्त उपजाऊ और बाजार की मांग के आधार पर बागवानी फसलों का उत्पादन करके अधिक लाभ प्राप्त कर सकते है और आर्थिक रूप से समृद्ध हो सकते हैं।

## संदर्भ


- बागवानी फल के फसलों में कलम/पौध का महत्व और उसको खरीदते समय ध्यान में रखने वाली मुख्य बातें, कृषि गोविद्या जून 2019: 72 अंक 2
- बागवानी फल के फसलों की किस्में और कलम/पौध खरीदी करते समय ध्यान में रखने वाली बातें, कृषि गोविद्या, अगस्त 2020 वर्ष: 73 अंक 4


*"स्वयं के जीवन में अगर हम दूसरों की सफलता को स्वीकार नही करते तो .......*
*वे ईर्ष्या बन जाती है.....!! और......अगर स्वीकार कर लें तो वो प्रेरणा बन जाती है....!!"*

# भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में विशिष्ट मक्का खेती की संभावना और महत्व

प्रमोद कुमार पांडेय
केंद्रीय कृषि विश्वविद्यालय (इम्फाल), उमियम, मेघालय

कुछ विशेष लक्षणों (वर्धित जैव-घटकों) के साथ मूल्य वर्धित (मात्रात्मक और गुणात्मक) मक्का को सामूहिक रूप से विशिष्ट मक्का कहा जाता है। सामान्य मक्के की तुलना में, विशिष्ट मक्के में अतिरिक्त और विशेष विशेषताएं होती हैं। उनका वैश्विक प्रसार, बढ़ती मांग और उच्च मूल्य निर्धारण उन्हें भारत, विशेष रूप से पहाड़ी क्षेत्र में किसानों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनाते हैं।

विशिष्ट मक्के की फसल की खेती से कम लाभ अर्जित किए जा सकते हैं, जिनमें शामिल हैं

1. आय में वृद्धि
2. मूल्यवर्धन के माध्यम से बेहतर पोषण
3. रोजगार सृजन
4. चारा उत्पादन
5. दूध और मांस उत्पादन बढ़ाकर पशुधन उद्योग को बढ़ावा देना

आमतौर पर भारत में मुख्यत: चार प्रकार के विशिष्ट मक्को की खेती की जाती है जो निम्नलिखित हैं:

1. बेबीकॉर्न, 2. स्वीटकॉर्न (मिठा मक्का), 3. पॉपकॉर्न
4. गुणवत्ता वालाप्रोटीन युक्त मक्का क्वालिटी प्रोटीन मक्का)

## 1. बेबीकॉर्न

बेबीकॉर्न विश्व स्तर पर और साथ ही भारत में एक मूल्यवान सब्जी के रूप में लोकप्रिय है। यह एक उंगली की तरह का अनिषेचित, अपरिपक्व मक्के की बाली है जो मक्का के रेशा (सिल्क) के उद्भव के ठीक बाद तोड़ा जाता है (1 से 3 दिनों के भीतर)। विकसित देशों की तुलना में उत्पादन की कम लागत होने के कारण भारत संभावित बेबी कॉर्न उत्पादक देशों में से एक के रूप में उभर रहा है। भारत के पहाड़ी लोगों के बीच आय बढ़ाने के लिए बेबीकॉर्न मक्का का उत्पादन एक महत्वपूर्ण कृषि अभ्यास हो सकता है।

बेबीकॉर्न को कच्चा खाया जा सकता है, सब्जी, सूप, सलाद, चटनी के रूप में प्रयोग किया जा सकता है और मसालेदार भोजन, पुलाव, खीर, कैंडी, मुरब्बा, जैम, लडडू, आचार आदि बनाने में उपयोग किया जा सकता है। इसके नर-पुष्पों (टैसेल), अपरिपक्व छिलके और डंठल का उपयोग कटाई के बाद मवेशियों को चारा के रूप में खिलाने के लिए किया जा सकता है।

बेबीकॉर्न कीटनाशक से मुक्त और अत्यधिक पोषक युक्त होता है। अन्य सामान्य सब्जियों (21-57 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) की तुलना में प्रोटीन, आयरन और विटामिन के अलावा यह फास्फोरस (197.89 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम) के सबसे समृद्ध स्रोत में से एक है। यह एक आकर्षक कम कैलोरी वाली सब्जी, रेशेदार प्रोटीन का अच्छा स्रोत और बिना कोलेस्ट्रॉल वाली सब्जी है। ताजा और डिब्बाबंद बेबीकॉर्न और इसके संसाधित उत्पादों में घरेलू खपत के साथ-साथ विदेशों में निर्यात की अच्छी क्षमता है, क्योंकि एक वर्ष में फसल की खेती के 3 से 4 चक्र संभव हैं।

*चित्र 1. बेबीकॉर्न पौधा और अनिषेचित, अपरिपक्व मक्के की बाली*

## 2. स्वीटकॉर्न (मीठा मक्का)

स्वीटकॉर्न एक विशिष्ट मक्का की किस्म है जिसके भुट्टा को अपरिपक्व अवस्था (पकने कि अवस्था से पहले) में लगभग 70% नमी और लगभग 10% सुक्रोज सामग्री के साथ काटा जाता है। सामान्य मक्का में लगभग 4% सुक्रोज होता है। इसके कोमल, स्वादिष्ट अपरिपक्व बीज के दाने को सब्जी अथवा विभिन्न रूप से तैयार करके खाने के प्रयोग में लाया जाता है। आम तौर पर, इसकी खेती या तो ताजा सेवन के लिए या जड़ीकृत (फ्रोजेन) रूप में सेवन के लिए की जाती है। बढ़ती वैश्विक मांग और उच्च मूल्य निर्धारण के कारण स्वीटकॉर्न की खेती में भारत जैसे विकासशील देशों के किसानों के लिए अतिरिक्त और आकर्षक विशेषताएं हैं। स्वीटकॉर्न को आम तौर पर कच्चा, उबालकर या स्टीम करके खाया जाता है। इसका उपयोग सूप, सलाद और अन्य व्यंजनों को तैयार करने में भी किया जाता है। इसके हरे डंठल और पत्तियों का उपयोग पशुओं को चारे के रूप में खिलाने के लिए किया जा सकता है। इसके अलावा, इसका उपयोग स्टार्च, ग्लूकोज, माल्टोज, फ्रुक्टोज आदि के लिए एक योजक के रूप में भी किया जाता है। इसका उपयोग आयुर्वेदिक दवाओं में भी किया जाता है।

यह एक बहुत ही स्वादिष्ट और ऊर्जा (1 भुट्टा में लगभग 70 किलो कैलोरी ऊर्जा होती है), आहार, रेशा, विटामिन (मुख्यत: विटामिन सी, ए, बी1, बी5, बी3, के और फोलिक एसिड) के अलावा थोड़ी मात्रा में मैग्नीशियम, फास्फोरस और कैल्शियम का समृद्ध स्रोत है। स्वीटकॉर्न की खेती शहरी क्षेत्रों में बहुत लोकप्रिय है और इसलिए, यह शहरी क्षेत्रों के किनारे रहने वाले किसानों के लिए आर्थिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण है। ताजे स्वीटकॉर्न होने से बाजार मुल्य बढ़ जाता है। कम समय में (कटाई के एक दिन के भीतर) इन मकई को उपभोक्ताओं तक पहुंचाने के लिए एक उत्कृष्ट उद्यमिता की आवश्यकता होती है। 24 घंटे की कटाई के बाद ये अपनी सुक्रोज सामग्री का लगभग 50% तक खो देते हैं।

*चित्र 2. स्वीटकॉर्न (मिठा मक्का) मक्के की बाली*

*चित्र 3. पॉपकॉर्न की बाली और उसके फूटे हुए दाने*

### 3. पॉपकॉर्न

विशिष्ट मक्का में, पॉपकॉर्न एक मात्र ऐसा मकई है जो पॉप करता है। इसके मक्के के दाने का भ्रूणपोष दूसरे मकई के दाने के तुलना में काफी कठोर होता है जिसके केंद्र में नरम स्टार्च का बहुत ही छोटा सा हिस्सा होता है जो इसकी विशेषता होती है। इसके दाने को गर्म करने पर इसका भ्रूणपोष फट जाता है और बड़े फूले हुए गुच्छे पैदा होते हैं (लावा के रूप में), इस प्रक्रिया को पॉलपग कहा जाता है।

पॉपकॉर्न को दुनिया भर में लोकप्रिय स्नैक फूड (हल्के नास्ते के रूप में) के रूप में जाना जाता है। इनके दाने कई रंग के होते हैं जैसे सफेद से हल्के पीले, लाल, काले, आदि या फिर इनके बीच का कोई रंग। ईनका उपयोग पनीर पॉपकॉर्न, पीनट बटर और जेली पॉपकॉर्न, पॉपकॉर्न केक, आदि बनाने में किया जाता है। इसका इस्तेमाल हलवाई ख़ाने में विभिन्न मिष्टान्न बनाने में भी किया जाता है। पॉपकॉर्न कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, आयरन, कैल्शियम और फाइबर का अच्छा स्रोत है। इसमें कोई कृत्रिम रंग, स्वाद योजक या संरक्षक नहीं हैं। इस में वसा और कैलोरी की मात्रा उल्लेखनीय रूप से कम होती है और में शर्करा की मात्रा नही पायी जाती।

पॉलपग आयतन (वॉल्यूम) पॉपकॉर्न का एक बहुत ही महत्वपूर्ण आर्थिक गुण है, क्योंकि खरीदार इसे वजन के आधार पर खरीदते हैं लेकिन इसे आयतन के आधार पर बेचते हैं। विशेष कटा, बीज सुखाने और भंडारण की सुविधा पॉलपग गुणवत्ता बनाए रखने के लिए आवश्यक होती हैं।

### 4. गुणवत्ता वाला प्रोटीन युक्त मक्का (क्वालिटी प्रोटीन मक्का)

क्वालिटी प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) देश के गरीबी से नीचे के लोगों और जनजातीय क्षेत्र के लोगों को खाद्य और पोषण सुरक्षा प्रदान करता है, जहाँ इसका मुख्य भोजन के रूप में सेवन

किया जाता है। यह कुक्कुट (मुर्गी पालन) उद्योगों को गुणवत्तापूर्ण आहार भी प्रदान करता है। क्वालिटी प्रोटीन मक्का के दानो के एंडोस्पर्म कठोर होते हैं जिसमें उच्च मात्रा में अमीनो एसिड (लाइसिन और ट्रिप्टोफैन) पाये जाते हैं। यह लाइसिन और मेथियोनीन (एक आवश्यक अमीनो एसिड जिसकी मात्रा सभी अनाज और दालों में कम होती है) के साथ-साथ अन्य अमीनो एसिड जैसे ट्रिप्टोफैन से परिपूर्ण होता है और गैर-वांछनीय अमीनो एसिड जैसे ल्यूसीन की कम मात्रा प्रदान करता है। इसका उपयोग खाद्य और पोषण सुरक्षा के लिए किया जाता है। यह पौष्टिक चारा प्रदान करता है और मक्का आधारित उद्यमिता को बढ़ावा देता है। क्वालिटी प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) से विकसित पौष्टिक उत्पाद अत्यधिक कीमत वाले औद्योगिक खाद्य पदार्थों की जगह ले सकते हैं। इन उत्पादों को गांवों में भी तैयार किया जा सकता है और इस प्रकार यह ग्रामीण उद्यमिता का एक बड़ा स्रोत हो सकता है। इसलिए, क्वालिटी प्रोटीन मक्का (क्यूपीएम) आधारित ग्रामीण उद्योगों में रोजगार सृजन और ग्रामीण समृद्धि की व्यापक गुंजाइश होती है।

*"करे प्रेम निज देश से, भाषा अपनी होय हिन्दी मन से बोलिए, समझ सके हर कोय"*

# बदलते जलवायु परिवेश में मूँगफली की खेती

संजय कुमार, आर.के. तिवारी, शैलेश कुमार एवं विद्यापति चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, बिरौली, समस्तीपुर

मूँगफली दलहनी परिवार की तिलहनी फसल होने के कारण वनस्पतिक प्रोटीन का एक सस्ता एवं अच्छा स्त्रोत है। विगत वर्षों पर गौर करें तो बिहार के किसानों का रूझान पारम्परित फसलों को छोड़कर मूँगफली, सोयाबीन, सूर्यमुखी आदि जैसे तिलहनी फसलों की ओर हुआ है। मूँगफली के दाने में लगभग 40 प्रतिशत तेल पाया जाता है जिसका उपयोग खाद्य पदार्थों के रूप में किया जाता है। इसके तेल में लगभग 82 प्रतिशत तरल, चिकनाई वाले "ओलिक" तथा "लिनोलिक" अम्ल पाये जाते हैं। इसके दाने में 25 प्रतिशत प्रोटीन, 10 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट व 40 प्रतिशत वसा (तेल) पाई जाती है। इसके तेल का उपयोग कोल्ड क्रीमों, सौंदर्य प्रसाधनों के निर्माण के साथ-साथ पशु चिकित्सा एवं दवाओं में भी किया जाता है। इसकी खल्ली भी एक पौष्टिक पशु आहार तथा जैविक खाद्य के रूप में काम आती है।

## जलवायु

उष्ण कटिबंधीय पौधा होने के कारण इसे लम्बे समय तक गर्म मौसम की आवश्यकता पड़ती है। मूँगफली के अंकुरण एवं प्रारंभिक वृद्धि के लिए 14-15 डिग्री सें० तापमान का होना अच्छा होता है। इसके फसल के पूरे जीवन काल में पर्याप्त सूर्य का प्रकाश, उच्च तापमान एवं सामान्य वर्षा का होना अधिक उत्तम होता है। पाला पड़ना इसकी फसल के लिए हानिकारक होता है। इसकी खेती उन सभी स्थानों पर की जा सकती है जहाँ वार्षिक वर्षा 60-160 मि.मी. तक होती है।

## भूमि एवं उसकी तैयारी

मूँगफली की खेती के लिए अच्छी जलनिकास वाली बलुई दोमट या भुरभुरी दोमट मिट्टी काफी उपयुक्त होती है। जल निकास की उचित सुविधा और जीवांश पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए। खेत की तैयारी का मुख्य उद्देश्य मिट्टी में वायुसंचार बढ़ाना, खेत को अधिक भुरभुरा बनाना, मृदा नमी को संचित करना एवं बीज के अंकुरण को अधिक उपयुक्त वातावरण प्रदान करना है। खेत की जुताई 10-15 सेमी० से अधिक गहरी नहीं करनी चाहिए क्योंकि मूँगफलियों का बनना (Pegging) अधिक गहराई पर होने से फलियों की खुदाई में कठिनाई होती है। खेत की तैयारी करते समय पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की 5-6 जुताई कल्टीवेटर से करके पाटा के द्वारा खेत की मिट्टी को समतल कर लेनी चाहिए।

## अनुशंसित प्रभेद

बिहार राज्य के लिए अनुशंसित प्रजातियाँ ज्योति, ए.के.10, एम.13, धरणी इत्यादि है।

## बुआई का समय एवं बीजोपचार

सिंचाई की सुविधा एवं जलवायु को ध्यान में रखते हुए देश के अलग-अलग हिस्सों में मूँगफली की विभिन्न जातियों की बुआई अलग-अलग समय पर की जाती है। किन्तु जब वर्षा प्रारम्भ हो जाय एवं मिट्टी में पर्याप्त नमी हो जाय तब इसकी बुआई करनी चाहिए। उत्तर भारत में मूँगफली की बुआई प्रायः जून के प्रथम सप्ताह से लेकर जुलाई के प्रथम सप्ताह तक कर सकते हैं। बोने से पहले फलियों के छिलकों को हल्के दवाब से तोड़ना चाहिए जिससे की दाने न टूटने पाएँ। बुआई से 12 घंटे पूर्व पानी में भिंगोना चाहिए तथा पानी से निकालने के पश्चात् 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम या मेंकोजेब प्रति किलोग्राम बीज के दर से उपचारित करना श्रेयस्कर रहता है।

## बीज की मात्रा एवं बुआई की दूरी

इसकी बुआई के लिए 80-100 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज का प्रयोग किया जाता है। इसकी बुआई पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी. एवं पौधों से पौधों की दूरी 15 से.मी. पर करनी चाहिए।

## सिंचाई एवं निकाई-गुड़ाई

वर्षाकालीन खरीफ फसल होने के कारण सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं होती है। यदि नमी की कमी हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई कर सकते है। इसकी निराई-गुड़ाई 15-20 दिन के अंतराल पर करना लाभदायक रहता है, तथा गुच्छेदार प्रजातियों में मिट्टी चढ़ाना चाहिए। जब पौधे में अधिकीलम के बनने की क्रिया प्रारंभ हो जाए तो निराई-गुड़ाई नहीं करना चाहिए।

### खाद की मात्रा

मूँगफली दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ों में पाए जाने वाले जीवाणु वातावरण की नेत्रजन को मृदा में स्थिर करते हैं। 25 किलोग्राम नेत्रजन, 50 किलोग्राम स्फूर, 25 किलोग्राम पोटाश एवं 20 किलोग्राम गंधक प्रति हेक्टेयर इसकी खेती के लिए आवश्यकता होती है। सभी उर्वरको का प्रयोग बुआई के समय ही किया जाता हैं। गोबर की खाद बुआई से एक महीने पहले खेत में दिया जाता है जबकि खलियों की खाद बुआई से 15 दिन पूर्व खेत में देना लाभप्रद रहता है।

### फसल की खुदाई एवं उपज

जब पौधों की पत्तियाँ पीली पड़कर सूखने लगती है, फसल की खुदाई कर लेनी चाहिए। सामान्यतः 90–110 दिन में इसकी फसल तैयार हो जाती है। फलियों को सुखा लेना चाहिए जब तक उनमें नमी की मात्रा 10 प्रतिशत हो जाये। उपरोक्त विधि से खेती करने पर 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

### हानिकारक कीड़े/व्याधियाँ एवं उनकी रोकथाम

**हानिकारक कीड़े**

1. **बिहार रोमिल सूंड़ी:** इस कीट के पंखों पर काले धब्बे होते हैं एवं इसकी सूंड़ी नारंगी रंग की होती है। यह पत्ती की उपरी सतह को खाती है जिससे पौधे के भोजन बनाने की प्रक्रिया बाधित हो जाती है और फसल की उपज को काफी हानि होती है। इसके रोकथाम के लिए 0.15 प्रतिशत थायोडान घोल का छिड़काव 1000 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से या 500 मिली. पैराथियान का छिड़काव प्रति हेक्टेयर की दर से करनी चाहिए।
2. **तम्बाकू की सूंड़ी:** यह सूंड़ी काली और कुछ हरे रंग की होती है जो पौधे की पत्तियों को खाती है जिसके कारण उपज में काफी कमी हो जाती है। इसे रोपने के लिए भी थायोडान का प्रयोग लाभकारी है।
3. **सफेद सूंड़:** यह जुलाई से सितम्बर तक भूमि के अंदर क्रियाशील रहते हैं और पौधे के प्रारंभिक अवस्था में जड़ों को नुकसान करते हैं जिससे पौधे सूख जाते हैं। यह फसल में विषाणु रोग को फैलाने में भी सहायक होते हैं। इसके रोकथाम के लिए 15 किलोग्राम थीमेट 10 प्रतिशत दानेदार को बुआई से पहले खेत की मिट्ट्री में मिला देना चाहिए अथवा 1 ली. रोगर (25 ई.सी.) दवा को 1000 ली. पानी में मिलाकर या डायमेक्रोन (100 ई.सी.) दवा की 250 मिली. को 500 ली. पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर छिड़काव करना चाहिए।
4. **दीमक:** यह भूमि के अंदर रहकर पौधे की जड़ों को नुकसान पहुंचाती हैं जिससे पौधे सूख जाते हैं। इसके रोकथाम के लिए क्लोरोपायरीफॉस दवा की 2 मिली. पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

### बीमारियों की रोकथाम

1. **टिक्का रोग:** यह एक फफूँद जनित रोग हैं जिसके लक्षण सर्वप्रथम पौधे के नीचे की पत्तियों पर गहरे धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं और बाद में प्रभावित पत्तियाँ सूखकर गिरने लगते हैं। इसके रोकथाम के लिए गंधक एवं ताम्रचूर्ण (7: 10) का मिश्रण का पूरे फसल काल में 3–4 बार छिड़काव करनी चाहिए या बोर्डो मिश्रण का छिड़काव करना चाहिए।
2. **कॉलर रोट:** यह एक भूमिजनित एवं बीजजनित रोग है। यह रोग अंकुरण के समय में अधिक क्षति करता है और इसके बाद जो पौधे बचते हैं वे भी काफी कमजोर हो जाते हैं अतः बीज बाने से पहले इसे थीरम नामक दवा से उपचारित कर ही बोना चाहिए। इसके अलावा भी मूँगफली की फसल में जड़गलन एवं रोजेट रोग आदि लगते हैं जिसे उचित फसल चक्र एवं रोगरोधी किस्मों को अपनाकर रोकथाम किया जा सकता है।

# मंडुवा या रागी की उन्नत खेती

**विद्यापति चौधरी, संजय कुमार, आर.के. तिवारी एवं रंजन कुमार**
कृषि विज्ञान केन्द्र, बिरौली, समस्तीपुर

भारत में प्राचीनकाल से ही मंडुवा की खेती की जा रही है। इसकी खेती दाना प्राप्त करने के लिए की जाती है। दाने को पीस कर रोटी बनाकर खाया जाता है। देश के पहाड़ी क्षेत्रों में यह लोगों का मुख्य भोजन है। इसके दाने का उपयोग भोजन के साथ-साथ औधोगिक रूप में भी किया जाता है। दक्षिण भारत में इससे केक, पुडिंग एवं मिठाईयाँ आदि बनायी जाती है। उसके दाने से उत्तम गुणों वाली शराब एवं अंकुरित बीजों से माल्ट बनाया जाता है जिससे शिशु आहार बनाया जाता है। मधुमेह से पीड़ित लोगों के लिए यह उत्तम आहार है। इसमें 9.5 प्रतिशत प्रोटीन, 76 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा 1.3 प्रतिशत के लगभग वसा पाये जाते हैं। इसके अलावा उसमें विटामिन "ए" एवं "बी" के साथ-साथ फॉस्फोरस और कैल्शियम जैसे खनिज भी होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है।

## वितरण

मंडुवा की खेती मुख्य रूप से अमेरिका, यूरोप, भारत, चीन, अरब और मिस्त्र आदि देशों में की जाती है। हमारे देश में सबसे अधिक मंडुवा की खेती कर्नाटक में की जाती है। इसके बाद, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, उत्तर प्रदेश तथा महाराष्ट्र का स्थान है। उत्तरी बिहार में भी इसकी खेती कुछ क्षेत्रों में की जाती है।

## जलवायु

मंडुवा या रागी की अच्छी उपज के लिए गर्म एवं नम जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक वर्षा का फसल पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अत: वैसे सभी क्षेत्रों में जहाँ वर्षा 50-90 से.मी. के बीच होती है, वहाँ इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

## भूमि

मंडुवा की फसल की अच्छी उपज के लिए अच्छी जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। वैसे पहाड़ी क्षेत्रों में पायी जाने वाली पथरीली, कंकरीली एवं ढ़ालू मिट्टी में भी इसकी अच्छी उपज प्राप्त होती है। इस फसल की यह विशेषता है कि इसे ऊसर एवं कमजोर मिट्टी में भी उगायी जा सकती है।

## भूमि की तैयारी

मंडुवा की खेती के लिए खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करने के बाद एक से दो जुताई कल्टीवेटर से करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेनी चाहिए। साथ ही जुताई के बाद पाटा लगाकर खेत को समतल कर देना चाहिए।

## उन्नतशील प्रभेद

वैसे मंडुवा की अच्छी उपज के लिए कई प्रभेद विकसित किये गये हैं, उनमें से कुछ निम्नलिखित प्रचलित किस्में हैं- पी. आर. 202, बी.एल.-149, पी.ई.एस.-176, पन्त मंडुवा-3, ए. 404, एच.आर.-374, रा.ए.यू.-3, रा.ए.यू.-8 आदि।

## बीज बोने का समय

वर्षा प्रारंभ होने के बाद खेत की तैयारी कर इसकी बुआई कर देनी चाहिए। वैसे उत्तरी भारत में मंडुवा की बुआई जून से अगस्त तक कभी भी की जा सकती है। यदि रोपाई द्वारा इसकी खेती करनी हो तो 15 से 30 जून तक इसके बीज नर्सरी में डाल देना चाहिए। जब बिचड़े 21-25 दिन के हो जाए तब इसे मुख्य खेत में रोपाई कर देनी चाहिए। रोपाई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी 22.5 से.मी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखनी चाहिए। सीधी बुआई करने हेतु बीज 2.0 से.मी. से ज्यादा गहराई में नहीं डालना चाहिए।

## बीज दर

मंडुवा की फसल से अच्छी उपज लेने के लिए 10-12 कि. ग्रा./हेक्टेयर की दर से बीज की बुआई करनी चाहिए। बीज को बोने से पहले फफूँदनाशक दवा से उपचारित अवश्य कर लेनी चाहिए।

## सिंचाई

खरीफ ऋतु की फसल होने के कारण सिंचाई की आवश्यकता प्राय: कम ही पड़ती है लेकिन रोपाई द्वारा बुआई करने पर सिंचाई करना आवश्यक होता है। वैसे रोपाई के तिसरे दिन और आवश्यकतानुसार खड़ी फसल में वर्षा नहीं होने पर 2-3 सिंचाई करनी चाहिए।

### निराई-गुड़ाई

बीज बोने के 15 दिन बाद ही खेत की पहली बार निराई-गुड़ाई की जाती है। पंक्तियों में फसल की बुआई करने पर निराई-गुड़ाई हैरो द्वारा करनी चाहिए। वैसे मंडुवा की खड़ी फसल में 2-3 निराई-गुड़ाई पर्याप्त होता है।

### खाद एवं उर्वरक

मंडुवा की अच्छी फसल लेने के लिए 40-60 कि.ग्रा. नेत्रजन, 20-30 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 20-30 कि.ग्रा. पोटाष की जरूरत होती है। सभी उर्वरकों को अच्छी तरह मिला कर अंतिम जुताई के समय मिटट्ी में मिला देना चाहिए अथवा बीज के बुआई के समय ही बीज की पंक्ति से 4-5 से.मी. की दूरी पर एक दूसरी कूड़ बनाकर उसेमें डाल देनी चाहिए। वैसे बुआई से पहले 100 क्विंटल/हेक्टर गोबर की खाद देना लाभदायक होता है।

### कटनी एवं दौनी

बाल पक जान पर हँसिये की सहायता से कटाई कर ली जानी चाहिए। इसके बाद बालियों को सुखाकर और पीटकर अथवा बैल द्वारा दाना अलग कर लेना चाहिए। इसके बाद दाना को अच्छी तरह सूखा कर भण्डारण कर लेना चाहिए। उपरोक्त वैज्ञानिक विधि से खेती करने पर औसतन 20-25 क्विंटल तक उपज ली जा सकती है।

### रोग नियंत्रण

मंडुवा की फसल में निम्नलिखित कीड़े लगते हैं जिसका नियंत्रण निम्न प्रकार करते हैं।

#### 1. बिहार रोएँदार सूँडी/ग्रास हॉपर

यह दोनो कीड़े पौधे की पत्तियों को हानि पहुँचाती है। इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोरपीड 17.8 प्रतिशत दवा की 1 मि. ली. मात्रा तीन लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए ।

#### 1. तना छेदक

इसके नियंत्रण के लिए साइपर मेथरीन दवा की 2 मिली. मात्रा को प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए।

#### 2. ब्लास्ट रोग

यह रोग मुख्य रूप से मंडुवा में लगता है। यह रोग कवक द्वारा फैलता है। इसमें पहले कत्थई रंग के धब्बे पत्तियों पर पड़ते हैं और पत्तियाँ सूख जाती है। रोग बढ़ने पर बालियाँ सूख कर गिर पड़ती है। इसके नियंत्रण के लिए रोग रोधी किस्में लगाने चाहिए। खड़ी फसल में वीटवेक्स या डायथेन जेड-78 का 2.0 ग्राम दवा को प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 15-20 दिनों के अंतराल पर खड़ी फसल पर छिड़काव करनी चाहिए।

# बदलते मौसम में सोयाबीन की खेती

संजय कुमार, आर.के. तिवारी, रंजन कुमार एवं विद्यापति चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, बिरौली, समस्तीपुर

वर्तमान में सोयाबीन भारत में होनेवाली लोकप्रिय फसलों में से एक है। उसे गोल्डन बीन्स भी कहा जाता है। यद्यपि यह एक दलहनी वर्ग की फसल है किन्तु पाश्चात्य देशों में उसकी खेती तेलहन फसल के रूप में की जाती है।

हमारे देश में भी कुछ वर्ष पहले तक कम उपज, देर से पकने, बाजार की कमी एवं उपयोगिता की जानकारी का अभाव आदि कारणों से इसकी खेती नही के बराबर होती थी किन्तु, पिछले कुछ वर्षों में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली एवं पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय के सार्थक प्रयास के बाद आजकल सोयाबीन का स्थान भारतीय कृषि में मुख्य फसलों में आ गया है। उसका प्रयोग हमारे देश में प्रोटीन एवं तेल की अधिक मात्रा होने के कारण विभिन्न प्रकार के घरेलू और औद्योगिक कार्य जैसे- सोया आटा, सोया मिल्क, पशु आहार, जैव ईंधन आदि बनाने में होता है। यह हमारे देश में 18 प्रतिशत तेल की पूर्ति करती है और इसमें 42 प्रतिशत प्रोटीन, 22 प्रतिशत वसा तथा 30 प्रतिशत तक कार्बोहाइड्रेट होते हैं।

## वितरण एवं क्षेत्रफल

पूरे विश्व में सोयाबीन का उत्पादन 3 करोड़ 50 लाख टन है, जिसका 60 प्रतिशत उत्पादन केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में ही पैदा होता है। उत्पादन में दूसरा स्थान चीन का है। हमारे देश में इसकी खेती मुख्यत: उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब तथा हिमांचल प्रदेश में की जाती है। पिछले वर्षों में सोयाबीन का क्षेत्रफल मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, बिहार व गुजरात में बढ़ा है। बदलते मौसम में या कम वर्षा होने के कारण किसान, धान की जगह सोयाबीन की खेती करने लगे हैं।

## जलवायु

सोयाबीन की फसल साधारण शीत से लेकर साधारण ऊष्ण वाले क्षेत्रों में आसानी से उगायी जा सकती है। 100 डिग्री फॉरेनहाईट से अधिक तापमान होने पर वृद्धि, विकास एवं बीज के गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। तापमान कम होने पर तेल की मात्रा में कमी हो जाती है।

## प्रकाश

सोयाबीन की अधिकांश किस्मों में दिन छोटे व रातें लम्बी होने पर फूल आता है। फूल आने से फलियाँ लगने तक की अवधि, पकने की अवधि, गाँठों की संख्या तथा पौधों की ऊँचाई पर दिन की लम्बाई का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। सोयाबीन में फूल तभी आता है जब दिन की लम्बाई एक क्रान्तिक अवधि से कम हो।

## वर्षा

सोयाबीन में बीजों के अच्छे अंकुरण के लिए अधिक नमी या लगातार कम नमी दोनों ही स्थितियाँ हानिकारक हैं। यदि फूल आने के 2-4 सप्ताह पहले नमी की कमी हो जाए तो पौधों की वनस्पतिक वृद्धि रूक जाती है और फूल एवं फलियाँ गिर जाती है। फलियों के पकते समय वर्षा होने पर फलियाँ रोगग्रस्त होकर सड़ जाती हैं। अच्छी फसल के लिए 60-75 सेमी. वर्षा की आवश्यकता होती है। अत: फलियों के पकते समय वर्षा का होना हानिकारक होता है।

## भूमि

सोयाबीन की खेती सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है परन्तु अच्छी फसल के लिए अच्छी जल निकास वाली मिट्टी अधिक उपयुक्त है। मिट्टी का पी.एच. मान 6.0-6.8 के बीच होनी चाहिए।

## उन्नत प्रजातियाँ

जे.एस. 355, अनामिका, के.एस.एल.-20, जे.एस. 97-52, पी.एस.-1042 एवं पी.एस. 1241, पी.एस.1347 इत्यादि।

## भूमि की तैयारी

सोयाबीन के बीज के अच्छे अंकुरण के लिए आवश्यक है कि मृदा को भुरभुरी बना लिया जाये। इसके लिए एक बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई के बाद 5-6 बार कल्टीवेटर चलाना चाहिए और अंत में रोटावेटर चलाकर मिट्टी महीन कर लेनी

चाहिए। इससे खेत में बचे हुए फसलों के अवशेष भी समाप्त हो जाते हैं साथ ही, बुआई में आसानी होती है। मृदा नमी की कमी होने पर पलेवा करके खेत की तैयारी करनी चाहिए। पाटा लगाकर भूमि को ढ़ेले रहित बना लेना चाहिए।

## बीज उपचार

बीज को 3 ग्राम थीरम 75 डब्लू. पी.+कार्बेन्डाजीम 50 डब्लू.पी. (2:1) अनुपात में या ट्राइकोडरमा विरिडी की 4–5 ग्राम/किला बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए। बीजों का उपचार राइजोबियम जैपोनिकम कल्चर की 5 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से तथा फॉस्फेट घोलक वैक्टीरिया की 5 ग्राम/किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना लाभदायक है। इसे फफूँद व कीटनाशी दवा से उपचार के कम से कम 12 घंटे बाद उपयोग किया जा सकता है।
बोने का समय खरीफ– 15 जून से 15 जुलाई तक।

## सोयाबीन की बुआई एवं बीज दर

सोयाबीन की बुआई सीड ड्रील से करनी चाहिए। बीज की मात्रा 55–65 किलो/हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए, जिसकी अंकुरण क्षमता 80–85 हो। दो पंक्तियों की दूरी 45–50 सेमी. एवं बीज की गहराई 3–5 सेमी. से ज्यादा नहीं होनी चाहिए।

## खाद की मात्रा

5 टन सड़ी हुई गोबर की खाद बुआई के 20–30 दिनों पहले खेत में डालें। 25 किलोग्राम नत्रजन, 80 किलोग्राम स्फुर, 40 किलोग्राम पोटाष, 30 किलोग्राम सल्फर/हेक्टेयर बुआई के पहले खेत में डालना चाहिए। दलहनी एवं तिलहनी फसलों में सल्फर का प्रयोग अवश्य करें।

## खाद देने का समय और विधि

खाद सदैव बुआई के समय मृदा संस्थापन विधि द्वारा ही दिए जाने चाहिए। नेत्रजन की आधी मात्रा एवं स्फूर एवं पोटाश की पूरी मात्रा बोने के समय एवं आधी नाइट्रोजन बोने के 20–30 दिन बाद देते हैं।

## सिंचाई व जल निकास

चूँकि यह खरीफ की फसल है। अतः सोयाबीन में जल की पूर्ति वर्षा से प्राप्त हो जाती है। यदि वर्षा नहीं हो तो एक सिंचाई दिया जा सकता है। खेत में अधिक पानी का जमाव होने पर उसे बाहर निकाल देना चाहिए।

## निराई–गुड़ाई व खरपतवार नियंत्रण

फसल की प्रारम्भिक अवस्था में 30–40 दिन तक सोयाबीन के पौधे खरपतवार का मुकाबला नहीं कर पाते। अतः इस समय में निराई–गुड़ाई या रासायनिक विधि से खरपतवार का नियन्त्रण इमेजाथाई पर 10 प्रतिषत नामक दवा का 75–100 ग्राम बुआई के 15–20 दिन बाद 700–800 लीटर पानी/हे. की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। इससे चौड़ी पत्ती और संकरी पत्ती दोनों नष्ट हो जाती है, बाद में फसल स्वयं खरपतवार को नियंत्रित रख सकती है।

## कटाई–मँड़ाई

सोयाबीन की विभिन्न जातियाँ 90–110 दिन में पककर तैयार की जाती है। फसल के पौधे पकने पर पत्तियाँ पीली होकर गिर जाती है और फलियाँ सूखने लगती है। जब फलियों में बीज के अन्दर 15–18 प्रतिशत नमी रह जाए तो हंसिए से या कम्बाइन हावेस्टर से फसल की कटाई कर लेते हैं।

मँड़ाई करने के लिए सोयाबीन के बण्डल खेत से उठाकर अच्छी प्रकार सूखा लेने चाहिए। मँड़ाई डण्डों या ट्रैक्टर या बैलों द्वारा कर सकते हैं। सोयाबीन का बीज मुलायम होता हे। अतः मँड़ाई कभी ज्यादा दवाब के साथ नहीं करना चाहिए अन्यथा बीजों के टूटने का डर रहता है।

## रोग व रोकथाम

सोयाबीन में मूल गलन, पत्ती धब्बा, रोमिल फफूँद, कली झुलसा का रोग हो सकता है। इसकी रोकथाम के लिए डाइथेन एम–45 / 2.5 ग्राम/लीटर पानी का 1000 लीटर घोल प्रति हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए। यदि पत्तियाँ पीली होकर सूखने लग जाती हैं तो इसके रोकथाम के लिए बाने से 20, 30, 40 व 50 दिन बाद 0.1 प्रतिशत मैटासिस्टाक्स का छिड़काव करना लाभदायक पाया गया है।

## हानिकारक कीट एवं उनकी रोकथाम

सोयाबीन में विभिन्न कीटों जैसे– दीमक, कजरा, जड़ भृंग आदि का प्रकोप होता है। इसके रोकथाम के लिए थिमेट–10 जी. दानेदार दवा का 10 कि./हे. की दर से बुआई के समय खेत में प्रयोग करना चाहिए या क्लोरोपाइरीफॉस 20 प्रतिशत ई.सी. दवा की 2.5–3.0 लीटर मात्रा को 25 किलोग्राम बालू में मिलाकर खेत में अंतिम जुताई के समय छिड़काव करना चाहिए।

### लाही

उसके रोकथाम हेतु डाएमेथोएट 30 प्रतिशत 1.0 लीटर दवा 1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

### भण्डारण

बीज को भण्डार में रखते समय बीज में 10 प्रतिशत से अधिक नमी नहीं रखनी चाहिए। बीज के लिए रखे दानों को थीरम व कैप्टान आदि से उपचारित करके रखना चाहिए। अधिक समय तक भण्डार में अनाजों को नहीं रखना चाहिए अन्यथा इनमें खटास पैदा हो सकती है। बीज उपयोग के लिए भण्डारण करते समय गर्मियों के तेज धूप से बचाना चाहिए अन्यथा अंकुरण क्षमता प्रभावित हो सकती है।

### उपज

उपरोक्त उन्नत तकनीक अपनाकर 27-30 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सोयाबीन की उपज प्राप्त की जा सकती है।

*"व्यवहार अगर अच्छा हो तो मन ही मंदिर है,*
*आहार अगर अच्छा है तो, तन ही मंदिर है।*
*विचार अगर अच्छे हैं तो, मस्तिष्क ही मंदिर है।*
*यह तीनों अगर अच्छे हैं तो जीवन ही मंदिर है"*

# बाजरा की वैज्ञानिक खेती

**विद्यापति चौधरी, शैलेश कुमार, संजय कुमार एवं आर.के. तिवारी**
कृषि विज्ञान केन्द्र, बिरौली, समस्तीपुर

विश्व के कई देशों में बाजरे की खेती प्राचीनकाल से ही हो रही है, उनमें से भारत भी एक है। यह एक ऐसी फसल है जो विपरीत परिस्थितियों एवं सीमित वर्षा वाले क्षेत्रों में भी उगायी जा सकती है। देश के उत्तरी एवं दक्षिणी क्षेत्रों में यह गरीबों के भोजन का मुख्य स्त्रोत है। बाजरे में प्रोटीन 11.6 प्रतिशत , वसा 2.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 67 प्रतिशत, खनिज 2.7 प्रतिशत तथा विटामिन "ए" और "बी" पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इसको हरे एवं सूखे (कड़बी) चारे के रूप में जानवरों को खिलाया जाता है। भारत में इसकी खेती मुख्य रूप से राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात एवं उत्तर प्रदेश में की जाती है।

## जलवायु

बाजरा आमतौर पर कम वर्षा वाले क्षेत्रों में (40–75 सेमी. वार्षिक वर्षा) उगाया जाता है। इसमें सूखा सहन करने की अद्भुत शक्ति होती है। पौधे की वृद्धि के समय नम एवं उष्ण जलवायु अच्छी होती है लेकिन, फसल में फूल लगने और दाना पकने के समय तेज धूप की आवश्यकता होती है। फूलने के समय वर्षा का होना इसकी फसल के लिए हानिकारक होता है क्योंकि वर्षा से परागकण के धुलने से बालियों में दाने कम बनते हैं। अतः इसकी खेती के लिए सबसे उपयुक्त तापक्रम 28–320 से.ग्रे. होता है।

## भूमि

बाजरे की खेती अच्छी जल निकास वाली सभी तरह की मिट्टी में की जा सकती है लेकिन, बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए अधिक उपयुक्त होती है।

## उन्नत प्रभेद

बाजरे की अच्छी उपज के लिए देश में निम्नलिखित देशी एवं संकर किस्में प्रयोग में लायी जाती है

1. के.वी.एच. (एम.एच.–1737), जी.वी.एच. (एम.एच. –1055), 86 एम. 89 (एम.एच.–1747), एम.पी.एम.एच. (एम.एच.–1663), 86 एम. 86 (एम.एच.–1684), 86 एम. 86 (एम.एच.–1617), आर.एच.बी.–173 (एम.एच. –1446), सी.जेड.पी. 9802, जवाहर बाजरा–3, जवाहर बाजरा–4 आदि।

## भूमि की तैयारी

रबी की फसल कटने के बाद एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिए। इसके बाद 2–3 बार कल्टीवेटर से जुताई कर खेत में पाटा देकर समतल कर लेनी चाहिए। अंतिम जुताई के समय ही जल निकास की नाली बना लेनी चाहिए। यदि मिट्टी में दीमक लगने की सम्भावना हो तो 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से क्लोरोपायरीफॉस दवा को खेत में बिखेर कर मिट्टी में मिला देनी चाहिए।

## बीज एवं बीज की मात्रा

हमेशा प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए। प्रति हेक्टर के लिए 4–5 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बीज की बुआई से पहले 2.5 ग्रा.म. कार्बेन्डाजिम दवा से उपचारित कर लेना चाहिए।

## बुआई का समय एवं विधि

वर्षा प्रारम्भ होने से (जून के अंतिम सप्ताह) जुलाई के दूसरे सप्ताह तक इसे पंक्तियों में (कूड़ों में) 2–3 सेमी. गहराई पर बुआई कर देनी चाहिए। बुआई सीडड्रील मशीन के द्वारा करना अच्छा होता हैं। इसमें समय की बचत होती है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45 सेमी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 10–15 सेमी. उपयुक्त होता है। वैसे क्षेत्रों में जहाँ वर्षा देर से आती है, वहाँ बुआई देर से करना ही लाभदायक होता है।

## पौध रोपण

मानसून देर से आने या भारी एवं लगातार वर्षा होने पर बाजरा की खेती, पौध रोपण विधि से करना ही लाभदायक होता है और उपज भी अच्छी मिलती है। इस विधि में पौधशाला में पहले बिचड़ा उगाया जाता है। पौधशाला में क्यारियों का आकार 10 मी. लम्बा एवं 1.0 मी. चौड़ा रखा जाता है। एक हेक्टेयर खेत की रोपाई हेतु उपरोक्त आकार के 50 क्यारियाँ तैयार की जाती है। इस आकार के एक क्यारी में 100 ग्राम बीज 5 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में बोयी जाती है। बिचड़े के पौधे 20–25 दिनों में रोपाई करने के लिए हो जाते हैं। बिचड़ा के पौधे उखाड़ने से तीन दिन पूर्व क्यारियों में सिंचाई कर देनी चाहिए जिससे पौधे की जड़ों को

क्षति न हो। मुख्य खेत में पौधे को 45 x 15 सेमी. की दूरी पर एक स्थान पर केवल एक बिचड़ा रोपा जाता है। रोपाई के तुरंत बाद खेत की सिंचाई कर देनी चाहिए। इस विधि से बाजरे की खेती उन्हीं स्थिति में की जाती है जब बीज द्वारा बुआई समय से करना सम्भव न हो।

## खाद एवं उर्वरक

बाजरे की खेती में उर्वरकों की मात्रा, उगायी जाने वाली प्रभेदों एवं मिट्टी की उर्वरता के अनुसार प्रयोग करनी चाहिए। वैसे देशी उन्नतशील प्रभेदों में 40–50 किग्रा. नत्रजन, 30–40 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 20–30 किग्रा. पोटाश की प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए लेकिन संकर प्रभेदों में यही अनुपात 100–120 किग्रा. नत्रजन, 50–60 किग्रा. फॉस्फोरस एवं 40–50 किग्रा. पोटाश की दर से देना चाहिए।

कार्बनिक/गोबर की खाद बुआई या रोपाई से एक महीना पहले जुताई के समय देना लाभदायक होता है। लेकिन उर्वरकों की कुल मात्रा में से नत्रजन का एक तिहाई भाग और फॉस्फेटिक एवं पोटाशिक उर्वरकों की कुल मात्रा बुआई के समय गहरे स्थापन विधि से देना चाहिए। नत्रजन की शेष दो तिहाई मात्रा में से एक तिहाई बुआई के 20–25 दिनों बाद एवं एक तिहाई भाग बालियाँ निकलने समय देने से अच्छी उपज मिलती है।

## सिंचाई एवं जल निकास

प्राय: असीमित क्षेत्रों में बाजरे की खेती वर्षा पर ही निर्भर करती है परन्तु, बुआई के समय खेत में पर्याप्त नमी का होना आवश्यक है। इसके लिए पलेवा करके बाजरे की बुआई करनी चाहिए। आजकल बाजरे की संकर प्रभेदों की भी खेती की जा रही है। ऐसी स्थिति में सिंचाई के साधन का होना नितांत आवश्यक है। खेत में मिट्टी में 50 प्रतिशत नमी के रहते ही सिंचाई कर देनी चाहिए। कभी भी पौधे नमी की कमी के कारण मुरझाने नहीं चाहिए। खड़ी फसल में पानी का जमाव नहीं होना चाहिए, इसका फसल की उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अत: बुआई के समय ही जल निकास की नाली बना लेनी चाहिए।

## निराई–गुड़ाई एवं खरपतवार नियंत्रण

फसल की प्रारंभिक अवस्था में खरपतवार का प्रकोप अधिक रहता है। अत: खेत में एक–दो निराई खुरपी से कर देनी चाहिए। खड़ी फसल में पहली निकाई 20 दिनों बाद करनी चाहिए और उसी समय पंक्तियों से अधिक पौधों की छटाई भी कर देनी चाहिए। साथ ही, वर्षा वाले दिनों में पंक्तियों के रिक्त स्थानों पर अधिक उग आये पौधों को उखाड़कर रोपाई कर देनी चाहिए। खरपतवार के रासायनिक नियंत्रण हेतु बुआई के तुरंत बाद या 3 दिनों के अंदर अंकुरण से पहले, एंट्राजिन दवा का 1 किग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टर की दर 800–1000 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव कर देनी चाहिए। इसके बावजूद भी यदि खड़ी फसल में चौड़ी पत्ती वाली खरपतवार उग आये तब बुआई के 25–30 दिनों बाद 2–4 डी दवा की 0.5 किग्रा. मात्रा/हेक्टर की दर से 400–500 लीटर पानी में घोलकर पंक्तियों के बीच में छिड़काव करनी चाहिए।

## रखवाली

बालियों में दाने बनने पर चिड़ियों के आक्रमण से उपज में क्षति होती है। अधिक क्षेत्र में खेती होने पर नुकसान कम होता है। अत: छोटे क्षेत्रों में रखवाली आवश्यक है।

## कटाई एवं दौनी

किस्मों के अनुसार पौधे की बालियाँ 75–95 दिनों में पक कर तैयार हो जाती हे। खड़ी फसल में हँसिए की सहायता से बाली काटकर खलियान में सुखा लेना चाहिए। जब दानों में नमी की मात्रा 20 प्रतिशत हो तब बाली काटनी चाहिए बालियों को खलियान में सुखाकर बैल द्वारा या थ्रेसर से दौनी करनी चााहिए। और दाने को धूप में सुखाने के बाद जब दाने में 10–12 प्रतिशत नमी हो तब भण्डारण करना चाहिए।

## उपज

देशी उन्नतशील किस्मों की उपज 15–20 क्विंटल एवं संकर किस्मों की दानों का औसम उपज 30–35 क्विंटल/हेक्टर तक प्राप्त होती है। हरा चारा 250–300 क्विंटल एवं कड़बी की उपज 80–125 क्विंटल प्रति हेक्टर तक होती है।

**समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन**

| | |
|---|---|
| तना छेदक, दीमक, टिलस्टर, बीटल, ईयरहेड आदि | ❖ प्रारंभिक अवस्था में कीट प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।<br>❖ एन.एस.के.ई. 5 प्रतिशत का छिड़काव दो बार करना चाहिए।<br>❖ तना छेदक के अधिक प्रकोप होने पर कार्बोफ्यूरॉन उजी दवा की 8–10 किग्रा./हेक्टर की एस.एल. की 750 मि.ली.मात्रा/हेक्टर की दर से 600 लीटर में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। |
| डाऊनी मिल्ड्यू, कंडुआ रोग आदि | ❖ रोग रोधी प्रभेदों का प्रयोग करें।<br>❖ बीजों को फफूँदनाशक दवा कार्बेण्डाजिम की 3 ग्राम मात्रा/किला बीज दर से उपचारित कर बोआई करनी चाहिए।<br>❖ बुआई के 30 दिन बाद 0.2 प्रतिशत मैन्कोजेब का छिड़काव डाऊनी मिल्ड्यू के नियंत्रण हेतु करनी चाहिए।<br>❖ कंडुआ रोग के रोकथाम हेतु फसलचक्र अपनाना चाहिए।<br>❖ कल्ले फूटने पर 0.15 प्रतिशत वाउटवेक्स या 0.10 प्रतिशत प्लान्टवैक्स दवा का छिड़काव लाभदायक होता है। |

*"कोटि-कोटि कंठों की भाषा जनगण की मुखरित अभिलाषा*
*हिन्दी है पहचान हमारी हिन्दी हम सबकी परिभाषा"*

# अरहर की वैज्ञानिक खेती

**संजय कुमार, आर.के. तिवारी, शैलेश कुमार एवं विद्यापति चौधरी**

कृषि विज्ञान केन्द्र, बिरौली, समस्तीपुर

हमारे देश की कृषि में दलहनी फसलों का अपना एक अलग महत्व है। शाकाहारी भाजन में प्रोटीन का मुख्य स्त्रोत दाल ही है। टिकाऊ कृषि में भी दलहनी फसलें एक विशेष योगदान प्रदान करता है। देश के दिन-प्रतिदिन बदलते परिदृष्य में बढ़ती जनसंख्या की रफ्तार, औद्योगिकीकरण, नगरीय विकास के कारण घटते कृषि योग्य भूमि, जलवायु परिवर्तन आदि जैसी विशेष परिपेक्ष्य में, इस विशाल आबादी को भोजन उपलब्ध कराना किसानों एवं कृषि वैज्ञानिकों के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। साथ ही, प्रति इकाई व्यक्ति को दलहनों की समुचित मात्रा उपलब्ध नहीं होने वाले कारणों में से यह एक मुख्य कारण है। यह एक आश्चर्य किन्तु दु:खद बात है कि हमारा देश दलहन का सबसे बड़ा उत्पादक देश होते हुए भी यहाँ के लोंगों की थाली में प्रोटीन की कमी पायी जाती है और वे कुपोषण के शिकार होते जा रहे हैं। अरहर जिसे तुर भी कहते हैं, देश में चना के बाद दूसरा सबसे महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। इसकी खेती मुख्य रूप से महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात, उत्तर प्रदेश कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, बिहार, उड़ीसा एवं तमिलनाडु में की जाती है। भारत में इसकी खेती लगभग 36.3 लाख हेक्टेयर में की जाती है और इसकी औसत उपज 622 किग्रा. प्रति हेक्टेयर है।

## जलवायु

अरहर आर्द्र एवं शुष्क दोनों प्रकार के परिस्थितियों में उगायी जा सकती है कि शुष्क क्षेत्रों में सिंचाई की जरूरत होती है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में, पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए, गर्म एवं नम जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक वर्षा इसकी खेती के लिए अच्छी नहीं होती है क्योंकि इसमें उकठा रोग का प्रकोप अधिक होता है एवं राइजोबियम जीवाणुओं की क्रियाशीलता धीमी हो जाती है। अत: 75-100 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र इसकी खेती के लिए अच्छी होती है। पौधों पर फूल एवं फली और दाने बनने के समय शुष्क मौसम एवं तेज धूप का होना आवश्यक है। पाला का फसल पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है।

## भूमि

अरहर की खेती लगभग सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है किन्तु यह मुख्य रूप से हल्की बलुई दोमट एवं नम भूमि, जिसका पी.एच. उदासीन से हल्का क्षारीय हो में अच्छी वृद्धि करती है। अरहर की अच्छी उपज के लिए अच्छी जल निकास एवं जलधारण क्षमता वाली तथा कैल्शियम युक्त मिट्टी सर्वोत्तम होती है।

## उन्नत प्रभेद

देश की विभिन्न क्षेत्रों के लिए वहाँ की जलवायु एवं मिट्टी के अनुसार अरहर की विभिन्न प्रभेद उगायी जाती है। यहाँ मुख्य रूप से बिहार में उगायी जाने वाली प्रभेदों का वर्णन किया गया है- बहार, मालवीय-13, नरेन्द्र अरहर-1, राजेन्द्र अरहर-1, पूसा-9 एवं शरद आदि।

## भूमि की तैयारी

गर्मी के मौसम में मिट्टी पलटने वाले हल से एक गहरी जुताई के बाद 2-3 बार कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिए। मिट्टी को भुरभुरा बनाने, समतल करने और नमी संरक्षण के लिए जुताई के बाद पाटा अवश्य चलाना चाहिए।

## बीज एवं बुआई

अरहर की अकेली फसल के लिए 20 कि.ग्रा./बीज की जरूरत होती है। बीज हमेशा प्रमाणिक एवं फफूँदनाशक (1 ग्राम कार्बेण्डाजिम/कि.ग्रा. बीज की दर से) से उपचारित करके बोना चाहिए। बुआई से ठीक पहले 2 मि.मी. क्लोरोपायरीफॉस कीटनाशक एवं राइजोबियम कल्चर से उपचारित कर बुआई करें। खरीफ फसल में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 70 से.मी. एवं बीज से बीज की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। सितम्बर अरहर के लिए बीज दर 45-50 कि.ग्रा./हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए एवं पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी. और बीज से बीज की दूरी 15 सेमी. रखना चाहिए।

## बोने का समय

बुआई के समय का प्रभाव उपज पर सीधा पड़ता है। अत: खरीफ अरहर को 15 जून से 15 जुलाई तक एवं सितम्बर अरहर को 25 अगस्त से 15 सितम्बर तक अवश्य बुआई कर देनी चाहिए।

## खाद एवं उर्वरक

अरहर यद्यपि दलहनी फसल है और अपनी नत्रजन की पूर्ति राइजोबियम जीवाणु द्वारा स्वंय कर लेती है परन्तु प्रारंभ में जीवाणुओं की कार्य क्षमता बढ़ने तक पौधों की वृद्धि के लिए नेत्रजन की जरूरत पड़ती है। अतः इसकी फसल से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए 25 कि.ग्रा. नत्रजन, 45 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 20 कि.ग्रा. पोटाश एवं 20 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा मिट्टी में यदि जिंक की कमी हो तो बुवाई के समय 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से जिंक सल्फेट का प्रयोग करना चाहिए।

## सिंचाई एवं जल निकास

खरीफ की फसल होने के कारण इस फसल में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है किन्तु, यदि लम्बे समय तक वर्षा न हो या सूखा पड़ जाए तो एक या दो हल्की सिंचाई करनी चाहिए। फूल आने एवं दाना बनने के समय मिट्टी में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। खेत में बीज की बुआई के समय ही जल निकास का नाला की व्यवस्था कर लेनी चाहिए क्योंकि खेत में पानी ठहरने पर उपज में भारी कमी हो जाती है और पौधे सूखने लगते हैं।

## निराई-गुड़ाई

अरहर की अकली बोयी गयी फसल में 1-2 निराई खुरपी से करनी चाहिए। पहली निराई, बुआई के 20-25 दिनों बाद करनी चाहिए। वैसे रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार नियंत्रण हेतु 1.0 किग्रा. वासालीन दवा को 800 लीटर पानी में घोलकर बीज बुआई से पहले ही जुताई के समय 4-5 से.मी. गहराई में मिट्टी में छिड़काव कर मिला देना चाहिए।

## कटाई-मड़ाई

फसल के प्रभेद के अनुसार अरहर की फसल 120-130 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। अगेती फसल नवम्बर दिसम्बर में एवं देर से पकने वाली प्रभेद मार्च-अप्रैल में कटाई के तैयार हो जाती है। फसल को अच्छी प्रकार सुखाकर, दंडों से पीटकर दाना निकाल लेते हैं। वैसे मंड़ाई के लिए आजकल थ्रेसर भी उपयोग में लाया जाता है।

## उपज एवं भण्डारण

खरीफ अरहर के प्रभेदों की उपज 20-30 क्विंटल/हेक्टेयर तक एवं सितम्बर अरहर के प्रभेदों की उपज 20-25 क्विंटल/हेक्टेयर तक होती है।

## पौधा संरक्षण

### हानिकारक कीट

1. **फली छेदकः** इसके कैटरपिलर हरे -काले-पीले रंग के होते हैं और फली के अंदर बनने वाले दानों को खाते हैं। इसके रोकथाम के लिए जब पौधों पर 50 प्रतिशत फूल आ जाए तब प्रोफेनोफॉस दवा की 1500 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से 600-800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए। दूसरा छिड़काव जब पौधों पर 50 प्रतिशत छिमी लग जाए तब डायमेथोएट 30 ई.सी. का 1.0 लीटर/हेक्टेयर की दर से पानी की उपरोक्त मात्रा में घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए।
2. **फल मक्खीः** इस मक्खी का लार्वा मुख्य रूप से हानिकारक होता है और फलियों में बढ़ते हुए दानों को खाता है। इसके रोकथाम हेतु इमिडाक्लोरपीड 17.8 प्रतिशत दवा की 1.0 मि.ली. तीन लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए।

### रोग एवं उसका नियंत्रण

1. **उकठा रोगः** यह एक मिटट्री जनित रोग है जो फफूँद द्वारा फैलता है। इस रोग में पौधे की जड़ें काली पड़ जाती है और टहनियाँ सूखकर गल जाती है। इसके नियंत्रण के लिए रोगरोधी प्रभेदों को लगाना चाहिए। साथ ही, जिस खेत में इसका प्रभाव हो उस खेत में अगले साल इसे नहीं बोना चाहिए। खेत में जल निकास का भी समुचित व्यवस्था होना चाहिए। बीज को उपचारित कर ही बोआई की जानी चाहिए।
2. **पत्तियों पर धब्बा या पत्रलांक्षनः** यह भी एक फफूँद जनित रोग है जिसमें पत्तियों पर पीले या काले रंग के धब्बे दिखाई देते हैं और पत्तियाँ मुड़ कर गिर जाती है। इसके नियंत्रण के लिए बीज को कार्बेण्डाजिम 2 ग्राम या 6 ग्राम ट्राइकोडर्मा प्रति किलो बीज की दर उपचारित कर ही बोना चाहिए। इसके अलावा मैनकोजेब दवा की 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करनी चाहिए।
3. **बंझा रोगः** यह एक विषाणु जनित रोग है। इसमें पौधे पर पत्तियाँ अधिक लगती है तथा पौधे में फूल एवं फलियाँ नहीं बनती है। यह रोग माइट नामक कीट के द्वारा एक से दूसरे पौधों में फैलाता है। उस रोग से बचाव हेतु प्रभावित पौधे को जड़ समेत उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। साथ ही रोग रोधी प्रभेद का व्यवहार करनी चाहिए।

क्षमा उन फूलों के समान है
जो कुचले जाने के बाद भी खुशबु देना नहीं भूलते

# उच्च–तकनीकी बागवानी एवं इसके कारक

**दिनेश कुमार यादव, एम.एल. जाखड़ एवं एम.आर. चौधरी**

एस.के.एन. कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर

भूमि पर बढ़ता दबाव और बढ़ते पारिस्थितिक संकट के मद्देनजर कृषि–बागवानी प्रणाली में टिकाऊपन बनाये रखना एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। मनुष्य की जीविका सुरक्षा तथा पोषण सुरक्षा को बनाये रखने के लिए बागवानी को एक कारगर विकल्प के रूप में देखा जाता है। यद्यपि बागवानी फसलें देश के कुल कृषित क्षेत्रफल के 15 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगायी जाती है तथापि कृषि से प्राप्त सकल घरेलू उत्पाद में इनका 30.4 प्रतिशत योगदान है। ये फसलें कृषि जनित कुल निर्यात में 37 प्रतिशत अंशदान करते हैं। बागवानी विशेषकर छोटे और सीमान्त कृषकों के लिए टिकाऊ व आर्थिक दृष्टि से अव्वल उद्यम है। इसे प्रति इकाई आदान उपयोग संसाधन उपयोग के मद्देनजर और अधिक लाभकर बनाने के प्रयास जारी है। आदान व संसाधन उपभोग दक्षता अधिक उपज करने के लिए उच्च गुणवत्ता युक्त बागवानी की आवश्यकता है।

बागवानी यानि हार्टिकल्चर फसलोत्पादन में हमारे देश का समूचे विश्व में विशेष योगदान है फल तथा सब्जी दोनों के उत्पादन में हमारे देश का दूसरा स्थान है। इसी प्रकार अन्य बागवानी फसलों के उत्पादन में हम किसी से कम नहीं। परन्तु अंतर्राष्ट्रीय बाजार में हमारे बागवानी उत्पादों की कीमत अन्य देशों की तुलना में कम आंकी जाती है, यही नहीं कुछ उत्पादों के निर्यात पर भी हमारी सरकार को रोक लगानी पड़ी। बागवानी उत्पादों के अंतर्राष्ट्रीय बाजार के चलते हमारी बागवानी परम्परागत स्वरूप धूमिल पड़ने लगा है। इस विशाल समस्या का समाधान जो उभरकर सामने आया है वह है बागवानी की आधुनिक तकनीकी रूप जिसे आमतौर पर "हा –टेक हार्टिकल्चर" कहा जाता है। यह यह तकनीकी सघन बागवानी प्रणाली है। इसमें समय और स्थान सापेक्ष्य आदान और संसाधनों का इस तरह संगत संयोजन किया जाता है कि प्रति इकाई पारम्परिक उत्पादन विधि की अपेक्षा अधिक उत्पादन प्राप्त हो। इस तकनीकी से लागत को कम करना है एवं उत्पाद अच्छी गुणवत्तायुक्त एवं कीट व व्याधी रहित होना चाहिए। इस तकनीकी में प्राकृतिक संसाधनों जैसें पानी, भूमि, वातावरण इत्यादी का दोहन कम से कम किया जाना सुनिश्यत होता है। बागवानी फसलों का उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ अच्छी गुणवत्ता वाले उत्पादों को पैदा करके विश्व व्यापार संघ में अपनी फिर से धाक जमा सकते हैं। बागवानी का यही आधुनिक रूप ही उन्नत बागवानी के नाम से जाना जाता है, यही आज हमारे देश के लिये सफलता की कुँजी है। इस तकनीक के मुख्य रूप से घटक सूक्ष्म–सिंचाई, प्लास्टिक का उपयोग, संरक्षित खेती, सूक्ष्म–प्रवर्धन, सटीक खेती, होइड्रूपोनिक्स, उच्च सघनता रोपण, समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन, समेकित नाशीजीव प्रबन्धन, यांत्रिकीरण, जैव प्रौद्योगिकी एवं फसल प्रौद्योगिकी हैं।

## सूक्ष्म–सिंचाई

इस विधि में पानी बूँद–बूँद रूप में पौधे को उपलब्ध कराया जाता है। इसमें फव्वारा, फुहार, सूक्ष्म–नली, पंखा–फुहार आदि मुख्य हैं। इस विधि में 70 से 100 प्रतिशत उपज में बढ़ोत्तरी तथा 70 प्रतिशत जल की बचत होती है। जल उपयोग दक्षता बढ़ाने तथा सिंचाई–जल की बढ़ती मांग पूरा करने के लिए सूक्ष्म सिंचाई का प्रचलन बढ़ रहा है। इस विधि का अधिकतम फैलाव (34 प्रतिशत) फल वृक्षों में, इसके बाद रोपण बागानी फसलों (13 प्रतिशत) में एवं सब्जियों में (14 प्रतिशत) में हुआ है। अभी तक 86.21 (2016) लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल सूक्ष्म सिंचाई के अन्तर्गत लाया गया है।

## प्लास्टिक का उपयोग

खेती में प्लास्टिक के उपयोग को पलास्टिक खेती के नाम से जाना जाता है। प्लास्टिक बागवानी फसलों के उत्पादन व उत्पादों के तोड़ाई उपरान्त प्रबन्धन में अनेक रूप में प्रयोग किया जाता है। हरित गृह, जाली गृह, छाया गृह पौधशाला, छत बागवानी, बेमौसम सब्जी, उत्पादन, पलवार बिछाने, सूक्ष्म सिंचाई, प्रवर्द्धन, आदि में प्लास्टिक का उपयोग होता है। प्लास्टिक का उपयोग इसके घनत्व व मोटाई के हिसाब से होता है। बागवानी में प्लास्टिक के कई महत्तवपूर्ण उपयोग हैं। कम रखरखाव खर्च, जल और ऊर्जा का दक्ष उपयोग, तापक्रम व आर्दता में उतार–छढ़ाव रोकना, पोषक तत्वों का बेहतर उपयोग, पौषक तत्वों का ह्रास बचाव, मृदा कटाव में कमी, खरपतवार की सघनता में कमी आदि कार्यों में पालीथीन का प्रयोग सफल पाया गया है।

## संरक्षित खेती

तकनीक का समुचित विकास एवं इससे फसलोत्पादन भारत की कृषि नीति का महत्त्वपूर्ण अंग बनता जा रहा है। खाद्यान्न के मामले में देश भले ही स्वावलम्बी हो चुका है, परन्तु बागवानी फसलों के उत्पादन और आवश्यकता में बहुत अन्तर है। इस अन्तर को परंपरागत बागवानी द्वारा पाटने के लिये जितने कृषि योग्य क्षेत्र की आवश्यकता है उतनी बढ़ती जनसंख्या के कारण उपलब्ध कराना संभव न होगा। ग्रीन हाउस तकनीकी का उपयोग करने से प्रतिकूल कृषि वाले क्षेत्रों में आवश्यक फसलें पैदा की जा सकती हैं यही नहीं बेमौसमी सब्जियों एवं अन्य पौधे भी आसानी से पैदा किये जाते हैं। संरक्षित खेती की दशा में उगाई गई सब्जियाँ धूप, हवा और बरसात से सुरक्षित रहती है। इस से फसल का उत्पादन अधिक होता है। हरित गृह फसल की अगेती परिपक्वता, उपज, गुणवत्ता आदि में वृद्धि करता है। यह कुछ रोग और कीटों के आक्रमण को भी कम करता है।

## सूक्ष्म-प्रवर्धन

सूक्ष्म-प्रवर्धन और प्रयोगशाला में पादपों के गुणों में हेर-फेर करने की विधि अभी हाल में ही विकसित हुई है। इसने औद्योगिक प्रौद्योगिकी का रूप ले लिया है पिछले दो दशकों में इन तकनीकों ने बागवानी फसलों के नये आयाम खोले हैं। आज बागवानी करने वालों को बीज या कलम की को कमी नहीं है। 'टिशू कल्चर' की आधुनिक तकनीक इन्हें भारी मात्रा में उम्दा क्वालिटी की पौध सामग्री उपलब्ध करा रही है। 'जीन इंजीनियरी' तथा प्रजनन की उन्नत तकनीकों के द्वारा मनचाही गुणों वाली बागवानी फसलें तैयार की जा रही है। जैसे अधिक लाल तथा ज्यादा मीठा तरबूज, डिस्को पपीता, कम कड़वा करेला, अधिक टिकाऊ टमाटर, मिर्च आदि सब्जियाँ, ज्यादा समय तक तरोताजा बने रहने वाले फूल आदि चमत्कार इसी आधुनिक तकनीक के हैं। इस तकनीक के द्वारा हमारे देश में अनेक औद्योगिक कम्पनियाँ विभिन्न बागवानी फसलों की पौध तैयार कर रही हैं।

## सटीक खेती

यह खेती का एक तरीका है जिसमें आदानों और संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित किया जाता हैं। इस तकनीकी में खेत की अवस्था विशेष की मांग को ध्यान में रखते हुए खाद, उर्वरक, सिंचाई जल, रक्षी रसायन जैसे आदानों का उपयोग किया जाता है। इसमें खेत की स्थल, यानि की स्पॉट विशेष की विभिन्नता के अनुसार भिन्नकारी प्रबंध प्रक्रियाओं को अपनाया जाता है। वैश्विक स्थल निर्देशी प्रणाली (Global Positioning system), भैगोलिक सूचना प्रणली (Geographic Information System), दूरस्थ संवेदक (Remote Sensing) उपज पर्यवेक्षण युक्तियाँ (Yield Monitoring Devices), मृदा, पौधा, नाशीजीव संवेदक (soil, plant and pest sensors), भिन्न दर अनुप्रयोग तकनीकी (Variable rate application technology), आदि सटीक खेती की सहायक घटक तकनीकी है। सूक्ष्म-सिंचाई, प्लास्टिक का उपयोग, संरक्षित खेती, सूक्ष्म-प्रवर्धन, समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन, समेकित नाशीजीव प्रबन्धन, परिवर्तित फसल एवं फसल प्रौद्योगिकी आदि सटीक खेती का हिस्सा है।

## उच्च सघनता रोपण

सामान्य रोपण की अपेक्षा प्रति इकाई अधिक पौधा लगाना, सघन रोपण के नाम से जाना जाता है। वर्तमान में जब भूमि मनुष्य का अनुपात घटता रहा है, उच्च सघनता रोपण प्रणाली प्रचलित किए जाने की आवश्यकता है। यह प्रणाली लघु अवधि के साथ-साथ बहुवार्षिक प्रकृति के पौधे दोनो मे प्रति इकाई अधिक उत्पादकता प्रदान करती है। इस प्रणाली में बौने मूलवृन्तत व सांकुर किस्मों, वृद्धि नियामकों का प्रयोग के साथ-साथ समुचित सधाई व काट-छाट एवं उपयुक्त फसल प्रबन्धन प्रक्रियाएँ का भी ध्यान रखा जाता है।

## समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन

उर्वरकों की उपलब्धता के पूर्व देश में जैविक खादों के माध्यम से खेती होती थी परन्तु हरित क्रान्ति के उद्भव के साथ उर्वरकों का अंधाधुन्ध प्रयोग शुरू हुआ। प्रथमतया तो नाइट्रोजनी उर्वरकों का प्रयोग हुआ परन्तु धीरे-धीरे फास्फेटिक एवं पोटेशिक उर्वरकों का भी प्रयोग हुआ। जिसके कारण मिटट्ी से प्राप्त किये जाने वाले अन्य पोषक तत्वों की मैंग्नीशियम, सल्फर, जिंक, आयरन, कापर, मैगनीज, मालेब्डिनम, बोरान एवं क्लोरीन की सतत् कमी होती रही और पौधों को ये तत्व आवश्यकतानुसार उपलब्ध नहीं हो सके फलतः अधिकांश क्षेत्रों में उत्पादन में ठहराव आया और सिंचित क्षेत्रों में उत्पादन में कमी भी आयी। मृदा के जीवांश में भी कमी आयी। फलतः मृदा में भौतिक रसायनिक एवं जैविक क्रियाओं में परिवर्तन हुआ। मृदा उर्वरता का संतुलन इस प्रकार किया जाय कि फसल की भूख के अनुसार उन्हें आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध होते रहे तथा सम्बन्धित फसल की वांछित उपज भी मिले और मृदा स्वास्थ्य सुरक्षित रहे। इसी को आधार मानकर समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन की

आवश्यकता महसूस हुई। इसमें टिकाऊ आधार पर पौधे से अधिकतम उत्पादकता प्राप्त करने के लिए पोषक तत्वों के विभिन्न स्रोतों का मृदा के उर्वरापन को बनाऐ रखते हुए समुचित उपयोग किया जाता है। इस तकनीकी में पोषक तत्वों के कार्बनिक और अकार्बनिक स्रोतों का इस प्रकार संयोजन करते हैं कि मृदा उर्वरता में बगैर ह्रास के अधिकतम उपज प्राप्त हो सके। आज कार्बनिक स्त्रोतों में जैविक खादों का चलन बढ़ रहा है। इससे पौधे के द्वारा मृदा से आवश्यक सूक्ष्म व बृहद् पोषक तत्वों के बेहतर अवशोषण व उपलब्धता सुनिश्चित होती है। जैविक खादों की मांग लगातार बढ़ रही है। इसकी पर्याप्त उपलब्धता के लिए प्रयास किए जाने की आवश्यकता है।

### समेकित नाशीजीव प्रबन्धन

यह तकनीकी शस्यात्मक (cultural), यांत्रिक (mechanical), रासायनिक व जैविक समस्त विधियों का नाशीजीव प्रबन्धन हेतु समावेश है। चूँकि नाशीजीवों की संख्या बढ़ती जा रही है और पद्नुसार रसायनों क प्रयोग भी जो स्वास्थ्य हानिकर होने के कारण समेकित नाशीजीव प्रबन्धन कीड़े-मकोड़े नियंत्रण के लिए बेहतर विकल्प है। नाशी जीवों के नियंत्रण की सस्ती और वृहद् आधार वाली विधि है जो नाशीजीवों के नियंत्रण की सभी विधियों के समुचित तालमेल पर आधारित है। इसका लक्ष्य नाशीजीवों की संख्या एक सीमा के नीचे बनाये रखना है। इस सीमा को 'आर्थिक क्षति सीमा' (economic injury level) कहते हैं। एकीकृत नाशीजीव प्रबंधन एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें फसलों को हानिकारक कीड़ों तथा बीमारियों से बचाने के लिए किसानों को एक से अधिक तरीकों को जैसे व्यवहारिक, यांत्रिक, जैविक तथा रासायनिक नियंत्रण इस तरह से क्रमानुसार प्रयोग में लाना चाहिए ताकि फसलों को हानि पहुंचाने वालें की संख्या आर्थिक हानि स्तर से नीचे रहे और रासायनिक दवाईयों का प्रयोग तभी किया जाए जब अन्य अपनाए गये तरिके से सफल न हों।

### यांत्रिकरण

कृषि में सस्ते और पर्याप्त मात्रा में श्रमिकों को उपलब्धता एक समस्या बनती जा रही है। इसमें यांत्रिकरण को संबल प्रदान किया है। इसमें विभिन्न प्रक्षेत्र क्रियाओं को स्वचालित मशीनों की सहायता से सम्पन्न किया जाता है। आज अनेक कार्य जैसे-पौधे रोपण हेतु गड्ढ़े की खुदाई, बुआई, उर्वरक प्रयोग, रसायनों का प्रयोग, खरपतवार नियंत्रण, संधाई, कटाई-छटाई, सिंचाई, कटाई, उत्पादों की छँटनी, मोमीकरण, संवष्ठन और मूल्य संवद्धन आदि यंत्रों की सहायता से पूर्ण किए जाते हैं।

### जैव प्रौद्योगिकी

बागवानी फसलों में जैव प्रौद्योगिकी की अनंत संभावनाएं हैं। बागवानी फसलों में रंग, गंध, गुणवत्ता आदि में थोड़ा सा परिवर्तन भी बहुत व्यवसायिक महत्त्व रखता है। आनुवांशिक परिवर्तन, सूक्ष्म संवर्धन, जनन द्रव्य का प्रयोगशाला में संरक्षण, सिनसीड प्रौद्योगिकी, एस.टी.जी. तकनीक से विषाणु जैव उर्वरक, जैव कीटनाशक, फसल कटाने के बाद जैव प्रौद्योगिकी आदि ऐसे क्षेत्र हैं जिनसे बागवानी फसलों में काफी सुधार किया गया है तथा भविष्य में ढेर सारी संभावनाएं हैं। आनुवांशिक इंजीनियरी द्वारा विभिन्न वांछित प्रजातियों द्वारा करना संभव हो गया है सेब की फसल में एरबीनिया एमीलोवोरा स्कैब और झुलसा प्रतिरोधी और पपीते में गोल धब्बे रोधी जीन प्रतिरोपित किये गये हैं टमाटर में कपराजीनी किस्मों का विकास किया गया है।

### फसल प्रौद्योगिकी

फलों, सब्जियों तथा फूलों की तुड़ान के बाद सही ढंग से देखभाल न की जाए तो काफी नुकसान हो जाता है। हमारे देश में फलों और सब्जियों के वितरण के साधन ठीक न होने के कारण प्रतिवर्ष लगभग 80 अरब रुपये की फल सब्जियाँ सड़-गलकर नष्ट हो जाती हैं। ताजे फलों एवं सब्जियों को विभिन्न उपायों द्वारा परिक्षण के मूल सिद्धांतों के अनुसार फलों एवं सब्जियों को क्षतिग्रस्त करने वाले एंजाइमों और सूक्ष्मजीवों को निष्क्रिय या नष्ट करना होता है। इसके अतिरिक्त पैकेजिंग भण्डारण और व्यापार के दौरान सूक्ष्मजीवों को पैदा न होने देना अति आवश्यक है। फलों की तुड़ान के बाद की जैव प्रौद्योगिकी में जीन इंजीनियरों के इस्तेमाल को बढ़ावा दिया जा रहा है और जीनों की क्लोनिंग से फलों को पकने की अवधि बढ़ रही है। क्लोनिंग और जीन परिवर्तन द्वारा फलों की तुड़ान के बाद उनमें रोगाणुओं से होने वाली हानि से बचा जा सकता है। भविष्य में कम लागत की पराजीनी विधि द्वारा फलों को पकाने से देर तक रोका जा सकेगा तथा ज्यादा समय तक ताजा रखा जा सकेगा। इससे फलों और सब्जियों को ताजा बेचकर किसान ज्यादा लाभ कमाने में कामयाब हों।

जल संरक्षण हो, हम सब का नारा
ताकि संतुलित रहे, पर्यावरण हमारे

# ढींगरी (आयस्टर) मशरूम का उत्पादन कैसे करें?


**आर०सी० जोशी**

इण्डो डच मशरूम प्रोजेक्ट, ज्योलीकोट


मशरूम जिसे ऑम बोलचाल की भाषा में खुम्ब च्यूँ भी कहा जाता है, पौष्टिक तत्वों से भरपूर होते हैं। मशरूम में पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन, विटामिन्स व अथवा मिनरल्स मौजूद होते हैं। मशरूम की कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं, जिसमें बटन मशरूम, आयस्टर मशरूम मिल्की मशरूम, के अलावा बहुत सारी मेडिसनल मशरूम, जिसमें शिटाके गैनोडर्मा, कोडिसेप्स का उत्पादन भी किया जा रहा है। इन सब में आयस्टर/मिल्की मशरूम उत्पादन की तकनीक बहुत सरल है। आयस्टर मशरूम बहुत स्वादिष्ट, सुपाच्य व पौष्टिक तत्वों से भरपूर है। उत्तराखण्ड में पिछले चार-पाँच वर्षों में आयस्टर मशरूम का उत्पादन बहुत तेजी से बढ़ा है। कम लागत, उत्पादन की सरल तकनीक, स्वाद एवं पौष्टिकता से भरपूर होने के कारण आम आदमी के साथ युवाओं की रूचि इस मशरूम के उत्पादन की ओर बढी है। ढींगरी (आयस्टर) मशरूम खाने में स्वादिष्ट, सुपाच्य, मुलायम तथा पौष्टिक तत्वों से भरपूर होती है।

## उत्पादन की विधि

ढींगरी मशरूम की बहुत सारी प्रजातियाँ पायी जाती हैं। जिन्हें 16-32°C तापक्रम पर आसानी से उगाया जा सकता है। ढींगरी मशरूम उत्पादन के लिए 80-85% आर्द्रता/ नमी की आवश्यकता होती है। इसकी प्रमुख एवं प्रचलित प्रजातियों में प्लूरोट्स सजोरकाजू, प्लूरोड्स फ्लोरिडा, प्लू० इरन्जाई, प्लू० आस्ट्रेटस, प्लू० सेपिडस, प्लू० फ्लेबुलेट्स आदि प्रमुख है।

ढींगरी मशरूम की बहुत सारी प्रजातियाँ पाई जाती हैं। जिन्हें 16-32°C तापक्रम पर आसानी से उगाया जा सकता है। ढींगरी मशरूम उत्पादन के लिए 80-85% आद्रता/नमी की आवश्यकता होती है। इसकी प्रमुख एवं प्रचलित प्रजातियों में प्लूरोट्स सजोरकाजू, प्लूरोड्स, प्लू० आस्ट्रेटस, प्लू० सेपिडस, प्लू० फ्लेबुलेट्स आदि प्रमुख है।

ढींगरी मशरूम को किसी भी प्रकार के कृषि अवशेषों जैसे गेहूँ का भूसा धान की पराली, गन्ने /मक्के की (खोई) सोयाबीन/दालों के कृषि अवशेषों इत्यादि पर आसानी से उगाया जा सकता है। इन सब में गेहूँ का भूसा ज्यादा प्रचलित एवं आसानी से उपलब्ध होने के कारण ज्यादातर उपयोग में लाया जाता है। मशरूम उत्पादन के लिए प्रयोग में लाए जाने वाले भूसे/पुआल को 1.5-2" के टुकडो में काट लेते है। जिसे 16-18 घण्टे तक पानी में भिगोया जाता है। भूसा भिगाने के लिए 200 ली० के ड्रम में 10-12 किलोग्राम भूसा डालने के बाद 100 ली० पानी से भर देते हैं, जिसे 16-18 घंण्टे तक भिगोने के बाद पानी से निकाल कर निथारने के बाद छाया में सुखाया लिया जाता है।

## उपचार करने की विधि

मशरूम उत्पादन में साफ-सफाई का बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता होती है, इसलिए हम जो भी कृषि अवशेष भूसा इत्यादि उपयोग में लाते है, उसको उपचारित करने के बाद ही प्रयोग में लाया जाता है। उपचार करने की मुख्यत: तीन विधियॉं प्रचलित है।

1. पाश्चुरीकृत करना।
2. भाप द्वारा उपचारित करना।
3. रासायनिक उपचार।

1. पाश्चुराईजेशन विधि में प्रयोग में लाए जा रहे कच्चे माल (Raw Material) को अच्छी तरह से भिगोने के बाद बन्द कमरे में 70-80°C तापक्रम पर 4 घंण्टे पाश्चुरीकृत किया जाता है। इस विधि से बटन मशरूम की कम्पोस्ट को भी पाश्चुराईजेशन किया जाता है। इस विधि में लोगो के पास पाकृचुराईजेशन कक्ष की सुविधा होनी चाहिए तभी प्रयोग में लाया जा सकता है। ज्यादातर लोगों के पास पाश्चुराईजेशन कक्ष की सुविधा नही होने के कारण इसका उपयोग बहुत कम किया जाता है। व्यवसायिक रूप से ढींगरी मशरूम के उत्पादन की यह तकनीकी सबसे अच्छी है।
2. भाप द्वारा उपचारित करने के लिए गीले भूसे को खौलते हुए पानी में 5-7 मिनट तक उबाला जाता है। जिसके बाद भूसे को निकालकर छाया में सुखाने के बाद स्पॉनिंग (बिजाई) करने का कार्य किया जाता है। यह विधि खर्चीली होने के कारण बहुत कम प्रयोग में लाई जाती है।
3. रासायनिक उपचार की तकनीकी सबसे सरल एवं व्यवहारिक मानी जाती है। 200 ली० में ड्रम इस विधि मे 10-12 किलोग्राम भूसे को में डालकर 100 ली० पानी से भर देते है, जिसमें 125 उस जिसमें 125 उस घोल बनाकर ड्रम में मिला दिया जाता है। फार्मलीन एवं 7-50 gm बैवस्टीन का रसायन के अच्छी तरह से मिक्स करने के लिए एक लकडी के लम्बे डण्डे से हिलाकर मिला दिया जाता है, ताकि रसायन का घोल पूरे ड्रम में समान रूप से मिल जाए। इसके बाद ड्रम का मुह प्लास्टिक की चादर अथवा ढक्कन से सील कर दिया जाता है, ताकि फार्मलीन की महक ड्रम से बाहर नही आने पाये। 16-18 घण्टे बाद ड्रम से भूसे को निकालकर 4-5 घण्टे छाया मे सुखाने के बाद स्पॉनिंग (बिजाई) का कार्य किया जाता है।

### बिजाई/स्पॉनिंग कैसे करें

अच्छी तरह से भीगे हुए भूसे को, जिसमें 58 से 60 प्रतिशत तक नमी की मात्रा हो, को साफ फर्श तथा प्लास्टिक की चादर में फैलाकर सुखाने के लिए रख देते है। एक टब में स्पॉन (बीज) को निकालकर आपस में चिपके हुए दानों को हल्के हाथ से अलग करने के बाद में फैलाये हुए भूसे के उपर छिडक दें। भूसे में स्पॉन को हल्के हाथों से मिक्स करने के बाद पालीथीन के थैलों में भर दें। भरते समय हल्के हाथों से दबाते रहे, ताकि सामग्री के बीच में खाली स्थान अथवा हवा ना रहे। बैगों को अच्छी तरह से भर कर सिलेण्डरीकल आकार दे। 10 किलोग्राम भूसे में 1000gm स्पॉन पर्याप्त होता है। भूसा भरने के लिए 55X35 cm के थैलों को प्रयोग में लाया जाता है। आवश्यकतानुसार थैलों का साईज छोटा/या बड़ा किया जा सकता है, लेकिन ध्यान रहे ढींगरी उत्पादन के लिए सिलेण्डरीकल बैग का ही प्रयोग करना चाहिए।

अच्छी तरह से भरे हुए बैगों का मुँह सुतली से टाईट बाँध कर बैगों के दोनो तरफ 10-12 छिद्र कर दे। छेद करने के लिए पेन्सिल के आकार की लकड़ी का उपयोग कर सकते है,जिसे छिद्र करने से पहले फार्मीन से उपचारित करना आवश्यक हैं।

### माइसिलियम का फैलाव/उत्पादन

अच्छी तरह से बिजाई किये हुए बैगों को पहले से तैयार एवं फार्मलीन से उपचारित किये हुए कक्ष में रख दें। कमरे के अन्दर बैगो को लकड़ी/बॉस की सहायता से बने हुए रैकों अथवा प्लास्टिक की डोरी से तैयार हैंगिंग सिस्टम पर भी रख सकते हैं। बैगो को 12–15 दिन तक बन्द कमरे में रखे कक्ष का तापमान 25–28°C तक नियंत्रित करे। इस दौरान कक्ष में किसी प्रकार का स्प्रे अथवा प्रकाश की आवश्यकता नही होती है। निश्चित तापक्रम में 12–15 दिन मे बैगों में माइसिलियम अच्छी तरह से फैल जाता है। जिनमें 2–3 दिन के अन्दर पिनहेड्स आने लाते हैं। उत्पादन की अवधि में 3–4 घण्टे प्रकाश एवं साफ हवा की आवश्यकता होती है। जिसके लिए खिडकियाँ खोलने एवं लाईट जलाने की आवश्यकता होगी। कमरे में 80–85 प्रतिशत तक नमी बनाये रखने के लिए साफ पानी का स्प्रे करे। इस प्रकार 6–7 दिन में पिनहेड्स मशरूम के छत्रक का आकार ले लेते है, जिन्हे किनारों पर मुड़ाने से पहले तोड़ लिया जाता है।

### उपज/पैदावार

उपरोक्त विधि से तैयार बैगों में 40–45 दिन तक मशरूम का उत्पादन लिया जा सकता है। कमी का रख-रखाव, साफ-सफाई, प्रयोग में लाई जाने वाली सामग्री की गुणवत्ता के अनुसार 50–70 प्रतिशत तक उत्पादन लिया जा सकता है। तैयार मशरूम के छत्रकों को दाये और बायें घुमाकर तोड़ लिया जाता है। जिसमें से चिपके हुए भूसे इत्यादि को हटाकर सफाई से पैक कर लेते हैं। ढींगरी मशरूम की पैकिंग पालीथीन बैग अथवा प्लास्टिक की ट्रे,/बाक्स में किया जाता है। आवश्यकतानुसार बाजार की मांग के अनुरूप 200 ग्रा. से 500 ग्रा. तक की पैकिंग की जा सकती है।

### विपणन/मार्किटिंग

अच्छी तरह से पैंक किये हुए मशरूम को व्यक्तिगत सम्पर्क कर बिक्री करना ज्यादा लाभदायक है। तैयार पैकेट्स को डिपार्टमेण्टल स्टोर, दूध/फ्रोजन विक्रेताओं, होटल, रेस्टोरेन्ट अथवा कार्यालयों में भी बेचा जा सकता है। जितना सम्भव हो मशरूम को ताजा ही विक्रय करने का प्रयास करें। ताजा मशरूम की बिक्री नही होने की दशा में ढींगरी मशरूम को सुखाकर भी बेचा जा सकता है। सुखाकर तैयार की गई मशरूम का पावडर बनाकर भी बेचा जा सकता हैं। जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार के सूप, बिस्कुट एवं बड़िया बनाने में किया जाता है।

*शिक्षा का नहीं है कोई मोल है जीवन की भाँति अनमोल*

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# उत्तराखण्ड में व्यवसायिक पुष्प–ग्लैडियोलस के उत्पादन की तकनीक

हरीश चन्द्र आर्या
मुख्य उद्यान कार्यालय, विकास भवन, भीमताल

अलंकृत पौधों का उत्पादन तथा व्यापार जोकि पहले एक माली के कार्यकलापों तक ही सीमित था। वर्तमान में विशेष उद्योग का स्थान प्राप्त कर चुका है। वर्तमान समय में पुष्प उत्पादन अन्य फसलों की तुलना में बहुत ही लाभप्रद हुआ है। पिछले दशक में पुष्प व्यवसाय में विशेष वृद्वि हुई है। उत्तराखण्ड़ के पुष्प उत्पादकों ने वैज्ञानिक ढंग से पुष्प उत्पादन आरम्भ कर दिया है। अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में गुलाब, कारनेशन, गुलदाउदी, ग्लेडियोलस, जरबेरा, लिलियम, आर्किड्स, एन्थयूरियम मुख्य पुष्प हैं। विश्व में 140 से अधिक देशों में इस समय पुष्प व्यवस्साय हो रहा है। हालैण्ड विश्व का सबसे बड़ा कटे फूलों का निर्यातक है तथा पुष्पोत्पादन मे भी इसका स्थान प्रथम है। केन्द्र तथा राज्य सरकार की आर्थिक नीतियों ने पुष्प व्यवसाय में उत्साहित व्यक्तियों को निर्यात करने वाली इकाई को स्थापित करने के लिये प्रोत्साहित किया है। भारतीय पुष्प तथा पुष्प उत्पादकों का बाजार यूरोप (जर्मनी, हालैण्ड तथा इंग्लैण्ड) अमेरिका, खाड़ी देशों तथा जापान में है। उत्तराखण्ड में देहरादून, नैनीताल, अल्मोड़ा, उद्यम सिंह नगर एवं टिहरी आदि मुख्य पुष्प उत्पादक जनपद हैं। उत्तराखण्ड़ में पुष्प की अपार संभावनाएं हैं। वर्तमान में जनपद नैनीताल के अन्तर्गत 122.73 हे० क्षेत्रफल में पुष्प की खेती होती है। जिसमें 28.86 मैट्रिक टन पुष्प तथा 1403.00 लाख स्पाइक का उत्पादन हो रहा है। जनपद नैनीताल में विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत वर्ष 2003–04 से अब तक 271000 वर्गमीटर पालीहाउस का निर्माण कराया जा चुका है। जो भविष्य में पुष्प उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करेगा। जनपद नैनीताल में वर्तमान में कट प्लावर के अतिरिक्त विभिन्न प्रजातियों में पुष्प का छोटे गमलों में उत्पादन हो रहा है जिसकी आपूर्ति उत्पादकों द्वारा दिल्ली, लुधियाना, चण्डीगढ़, सहारनपुर, लखनऊ, गोरखपुर आदि शहरों में किया जा रहा है।

## ग्लैडियोलस

| | |
|---|---|
| अंग्रेजी नाम– | ग्लैडियोलस |
| वैज्ञानिक नाम– | ग्लैडियोलस स्पिसीज |
| कुल– | इरिडेसी |
| उद्गम स्थल– | मैक्सिको |

ग्लैडियोलस का नाम लैटिन शब्द ग्लैडियस से लिया गया है जिसका अर्थ है "तलवार" ग्लैडियोलस की पत्तियाँ तलवार जैसी होती है। इसलिए इसको "सोर्ड लिली" के नाम से भी जाना जाता है। ग्लैडियोलस की खेती दिन प्रतिदिन लोकप्रिय होती जा रही है। उत्तराखण्ड़ के मध्य एवं ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी खेती उस समय की जाती है जब मैदानी क्षेत्रों मे प्रतिकूल जलवायु होने के कारण इसकी खेती बिल्कुल ही संभव नहीं होती है। इसी कारण इन क्षेत्रों मे पैदा किये गये फूल बे–मौसमी होने के कारण मैदानी क्षेत्रों में अच्छें भावों पर बिकते हैं।

## भूमि एवं जलवायु

ग्लैडियोलस की सफल खेती के लिए जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी, थोडी अम्लीय जिसका पी०एच० मान 5.5 और 6.5 के बीच हो उपयुक्त रहती है। ग्लैडियोलस की खेती के लिए खुली धूप वाली जगह का चयन करना चाहिए। पहाड़ी क्षेत्रों में दक्षिणी ढ़लान वाले स्थान इसकी खेती के लिए उपयुक्त माने जाते हैं। इसकी अच्छी वृद्वि के लिए 18–25° सेल्सियस तापमान उत्तम रहता है।

## किस्में

ग्लैडियोलस की लगभग 30000 किस्में उपलब्ध हैं। इसकी कुछ अच्छी एवं उन्नत किस्में निम्नलिखित हैं:–

| | | |
|---|---|---|
| लाल | – | आस्कर, फ्रेन्डशिप, मैलोडी, सिलविया, रेड सुप्रिम, ट्रेडरहार्न। |
| गुलाबी | – | सुचित्रा, फिडेलो, समर पर्ल, डिस्को पिंक, शोभा, अमेरिकन ब्यूटी। |
| ओरेंज | – | रोज सुप्रिम, सेन्सेरे, पिटर पिर्यस। |
| बैंगनी | – | किंगलियर, कार्पर किंग, हरमैजेस्टी, मयूर। |
| पीली | – | टोपाज, सनसाइन, नोवालक्स, जैस्टर, विक्स ग्लोरी, टापब्रास, अरका गंगा, अरका कावेरी। |
| सफेद | – | अमेरिकन व्हाइट, अप्सरा, व्हाइट फ्रैन्डशिप, व्हाइट प्रोस्पेरिटी एम्सर्टडम। |

### खाद एवं उर्वरक

| प्रकार | प्रति वर्ग मीटर | प्रति नाली | प्रति हैक्टेअर |
|---|---|---|---|
| गोबर की खाद | 4–5 किग्रा० | 8–10 कु० | 400–500 कु० |
| नाइट्रोजन | 30 ग्राम | 6 किग्रा० | 300 किग्रा० |
| फॉस्फोरस | 20 ग्राम | 4 किग्रा० | 200 किग्रा० |
| पोटाश | 20 ग्राम | 4 किग्रा० | 200 किग्रा० |

खेती की तैयारी के बाद गोबर की सड़ी हुई खाद, फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा भूमि में अच्छी तरह मिलाएं। आधी नाइट्रोजन तीन पत्तियाँ आने पर तथा शेष आधी 6 पत्तियाँ आ जाने पर डालनी चाहिए। 4–5 पत्तियाँ आ जाने पर 2 ग्राम यूरिया प्रति लीटर पानी में घोलकर प्रत्येक 15 दिन में अन्तर पर छिड़काव करने से पुष्प स्पाइक अच्छे गुण्वत्ता वाले प्राप्त होते हैं।

### कंदों (कार्म्स) की बुवाई

फूलों की अच्छी पैदावार लेने के लिए 4 सेमी० या इससे अधिक व्यास के कन्दों का चुनाव करना चाहिए। धातु रहित, उठी हुई क्राउन वाले कार्म्स फलेट कार्म्स से अच्छे गुणवत्ता वाले होते हैं। कन्दों की आपसी दूरी 15 सेमी० एवं कतार की दूरी 30 सेमी० होनी चाहिए कन्दों को 6–8 सेमी० गहराई पर बोना चाहिए।

| क्षेत्रफल | औसत कन्दों की संख्या |
|---|---|
| प्रति वर्ग मीटर | 22 |
| प्रति नाली | 4400 |
| प्रति हेक्टेअर | 2,20,000 |

### प्रर्वधन

ग्लैडियोलस का प्रवर्धन कन्दों (कार्म्स) तथा लघु कन्दों (कार्मलेट्स) द्वारा किया जाता है। फसल पूरी होने पर पौधों के नीचे प्राय: एक बड़ा कन्द तथा कई छोटे–छोटे लघु कन्द निकलते हैं। लघु कन्दों से 2 वर्षों के बाद पुष्प योग्य कन्द प्राप्त किये जा सकते हैं।

### सिंचाई

ग्लैडियोलस में सिंचाई की अवधि जलवायु क्षेत्र, मिट्टी और वर्षा पर निर्भर करती है। पतझड़ एवं बसंत ऋतु में 10 दिन के अन्तराल पर तथा ग्रीष्म ऋतु में 5 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करना चाहिए। पत्ती आने की अवस्था में तथा स्पाइक बनने के समय सिंचाई की विशेष आवश्यकता होती है।

### कन्द रोपण एवं फूल आने का समय

| क्षेत्र | रोपाई का समय | फूलने का समय |
|---|---|---|
| निचले क्षेत्र | अगस्त से नवम्बर | नवम्बर से अप्रैल |
| मध्यम ऊँचाई वाले पर्वतीय क्षेत्र | फरवरी से अप्रैल | अप्रैल से अक्टूबर |
| ऊँचे पर्वतीय क्षेत्र | अप्रैल से जून | जुलाई से अक्टूबर |

ग्लास हाउस/पॉली हाउस में वर्ष भर खेती की जा सकती है।

### प्रभावी बिन्दु

- अच्छी तरह अंकुरण के बाद सिंचाई करनी चाहिए तथा प्रत्येक सिंचाई के बाद निराई गुड़ाई करनी चाहिए।
- जब पौधे 20 सेमी० से ऊँचे हो जायें उस समय 10–15 सेमी० की ऊँचाई तक मिट्टी चढ़ा दें जिससे पौधे हवा या वर्षा से नीचे न गिरें।
- जिन प्रजातियों के स्पाइक ज्यादा लम्बे हो जाते हैं या तना कमजोर पड़ जाता हैं उन्हें बांस के 1.5 मी० लम्बे डण्डों से सहारा दें। समय पर स्टेकिंग करने से स्पाइक बिल्कुल सीधे रहते हैं।

## फूलों की तोड़ाई

ग्लैडियोलस की पुष्प डंडियों को काटते समय निम्न बातें ध्यान में रखना चाहिए:

- स्थानीय बाजार के लिए फूलों की डंडियों को उस समय काटना चाहिए जब निचली पंखुड़ी खिल जाए तथा दूर की मंडियों के लिए जब सबसे निचली पंखुडी केवल रंग दिखाए, तब काट लेना चाहिए।
- केवल सुबह या शाम जब धूप नहीं हो फूलों को काटना चाहिए।
- स्पाइक काटने के लिए तेज धार वाला चाकू प्रयोग करना चाहिए।

## फूलों की तुड़ाई के उपरान्त प्रबन्धन

- ग्लैडियोलस की स्पाइक को पौधों से काटने के तुरन्त बाद ताजे पानी में रखकर स्टोर में लाया जाना चाहिए।
- स्थानीय बाजार में फूल भेजने के लिए 60 सेल्सियस तापमान पर तथा दूर की मण्डियों के 2.30 सेल्सियस से 2.80 सेल्सियस तापमान पर सप्ताह भर के लिए रखा जा सकता है।
- यदि 1-2 दिन भण्डारण करना हो तो 4.50 सेल्सियस तापमान पर भण्डारण किया जाता है।
- फूलों की आयु बढ़ाने के लिए इन्हें 400 पी०पी०एस० 8 एच०क्यू०सी० 4 प्रतिशत चीनी के घोल में रखा जाता है।
- स्थानीय मण्डियों के लिए फूलों को बाल्टियों में भरकर तथा दूर की मण्डियों के लिए फूलों को ट्यूब लाइट के डिब्बों (1.2 मी० लम्बे, 60 सेमी० चौड़े तथा 30 सेमी० ऊँचे) का उपयोग किया जाता है।

## ग्रेडिंग

| ग्रेड | स्पाइक की लम्बाई सेमी० | प्रति स्पाइक फूलों की संख्या |
|---|---|---|
| फैन्सी | 107 से अधिक | 18-21 |
| स्पेशल | 96-107 | 18 |
| स्टैण्डर्ड | 81-96 | 15 |
| युटिलिटी | 81 से कम | 10 |

## उपज

बोए जाने वाले कन्दों की संख्या से 85 प्रतिशत फूल बिक्री योग्य प्राप्त होते हैं।

| | प्रति नाली | प्रति हैक्टेअर |
|---|---|---|
| फूलों की उपज | 3740 स्पाइक | 187000 स्पाइक |
| कन्दों की उपज | 4400 | 220000 |
| लघु कन्दों की उपज | 12.5-13.75 किग्रा० | 625-657.5 किग्रा० |

## प्रमुख रोग

### फ्युजेरियमराट

पत्तियाँ ऊपरी भाग से पीली पड़ने लगती हैं तथा बाद में तना भी पीला पड़ जाता है तथा पौधा सूखने लगता है।

### नियन्त्रण

- कन्दों का भण्डारण शुष्क एवं ठंडे स्थान पर 4-8 डिग्री सेल्सियस तापमान पर केवल एक तह बनाकर करें।
- कारवेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), मैल्कोजव (25 प्रतिशत) के घोल से उपचारित कर लें।
- लक्षण दिखाई देने पर कारवेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत), थीरम (0.3 प्रतिशत), विनोमिल (0.1 प्रतिशत) अथवा कैप्टान (0.3 प्रतिशत) के घोल से मृदा को उपचारित करें।
- रोग रोधी प्रजातियों जैसे व्हाइट प्रोस्पेरिटी, सोवेनियर, एप्रीकोट ग्लो, अलबेला, यलो सुप्रीम मयूर अपोलो, रोज सुप्रीम इत्यादि का रोपण करें।

### कन्द सड़न

भण्डारण के समय कन्दों पर फफूँद से काले धब्बें पड़ जाते हैं जिससे पत्ते पीले पड़ जाते हैं और फूलों के स्पाइक भी छोटे आकार के बनते हैं।

### नियन्त्रण

- भण्डारण के समय कन्दों को बाहरी चोट से बचायें।
- बुवाई से पूर्व कन्दों को कारवेन्डाजिम (0.1 प्रतिशत) अथवा बोर्डोमिक्चर (4:4:50) से उपचारित करें।

### नेक राट (बैक्टीरियल स्कैव)

इसमें पत्तियों पर छोटे गोल गहरे भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। बाद में धब्बों वाले स्थान में पत्तियों के निचले भाग से सड़न प्रारम्भ हो जाती है जिससे बाद में स्पाइक भी नेक रीजन से नीचे गिर जाती हैं।

### नियन्त्रण

- स्वस्थ कन्दों का रोपण करें।
- कन्दों का भण्डारण शुष्क तथा ठण्डे स्थान पर करें।
- रोग के लक्षण प्रकट होने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (100 पी०पी०एम०) का छिड़काव करें।
- रोपण एवं भण्डारण से पूर्व कन्दों को स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (200 पी०पी०एम०) के घोल में 2 घंटे तक उपचारित करें।

### ग्लेडियोलस की खेती की उत्पादन लागत (प्रति है०)

| क्र०सं० | मद का नाम | व्यय/प्रति नाली (रु०) में | व्यय रु०/है० |
|---|---|---|---|
| 1. | कार्म्स / 3.00 प्रति (2200 कार्म्स) | 13200.00 | 660000.00 |
| 2. | भूमि की तैयारी 2 जुलाई | 100.00 | 5000.00 |
| 3. | क्यारियाँ बनाना 35 मजदूर प्रति है० 140/-रु० प्रति मजदूर की दर से | 98.00 | 4900.00 |
| 4. | मिट्टी चढ़ाना व निराई-गुड़ाई 25 मजदूर/है० | 70.00 | 3500.00 |
| 5. | गोबर की खाद 400 कुन्टल 100 रुपये प्रति कुन्टल की दर से | 800.00 | 40000.00 |
| 6. | पौध सुरक्षा | 50.00 | 2500.00 |
| 7. | सिंचाई (तीन) | 200.00 | 10000.00 |
| 8. | फूलों की कटाई, पैकिंग व ढुलान रु० 0.20 प्रति स्पाइक की दर से | 748.00 | 37400.00 |
| | **कुल योग** | **15266.00** | **763300.00** |

### सकल आय

| आय के श्रोत | प्रति नाली (रु० में) | प्रति है० (रुपये में) |
|---|---|---|
| फूलों की बिक्री से | 3740x3.00=11220 | 187000x3.00=561000.00 |
| कन्दों की बिक्री से | 4400x2.00=8800 | 220000x2.00=440000.00 |
| कन्दिका (कार्मलेट्स) | 30 किग्राx200=6000 | 1500 किग्राx200=300000.00 |
| **कुल योग** | **26020** | **1301000.00** |

### शुद्ध आय

| | | |
|---|---|---|
| सकल आय | 26020.00 | 1301000.00 |
| घटाइए चलपूँजी | 15266.00 | 763300.00 |
| घटाइए 10 प्रतिशत ब्याज (प्लान्टिंग मैटेरियल की कीमत) | 1320.00 | 66000.00 |
| शुद्ध आय (रुपये में) | 9434.00 | 471700.00 |

*लोगो की कमजोरियों का पता लगाने से अच्छा है, मनुष्य अपने दुर्गुणों और कमजोरियों का पता लगाए*

# फूलों के शहर में

**पी.के. त्रिपाठी**

केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (उद्यान) निर्माण भवन, नई दिल्ली

फूलों की खुशबू और रंगीनियों में घुली फिजा बताती है कि मानसून आ गया है। नयी दिल्ली के केन्द्रीय लोकनिर्माण विभाग के उद्यान उप महानिदेशक डॉ. प्रसून कुमार त्रिपाठी बता रहे हैं कुछ ऐसे पौधों के बारे में, जो मानसून में बगिया महका सकते हैं।

**पर्सलेन**

छोटी–छोटी पत्तियों वाले इस पौधे में ढेरों फूल आते हैं। इन्हें टहनी से लगाना आसान है और एक बार आपके घर में जगह बना लें, तो हमेशा के लिए आपके हो जाते हैं। इनके गिरे हुए बीजों से हर साल नए पौधे निकल आते है।

**मॉस रोज**

सफेद, गुलाबी, लाल, रानी, पीले रंग के फूलों से भरे मॉस रोज के कुछ पौधे लाएं। वर्टिकल हुक हैगिंग प्लांटर में लगा कर बालकनी को इससे सजाएं। ध्यान रहे पॉम–पॉम की तरह दिखनेवाले मॉस रोज प्लांट्स को 7 से 8 घंटे की धूप की जरूरत होती है।

इन्सेक्टिसाइड्स इंडिया लिमिटेड के मैनेजिंग डाइरेक्टर राजेश अग्रवाल के अनुसार बरसात के मौसम में पौधों को रोगो से बचाने के लिए गमलों में पानी जमा नहीं होने दें। नियमित अंतराल पर नीम का तेल, खारा घोल, उबले हुए नीबू के छिलके का घोल या नील गिरी के तेल का छिड़काव करें।

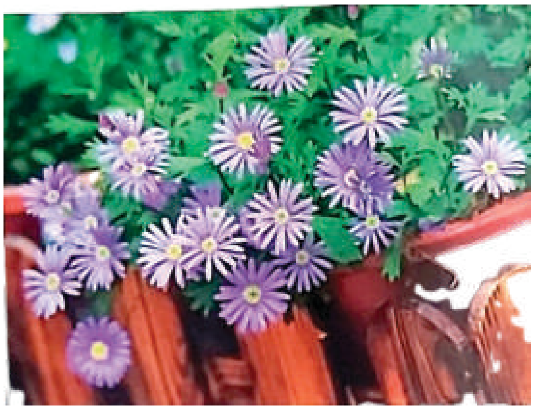

**विन्का**

ये सदाबहार के नाम से भी जाने जाते हैं। घने पत्तों के बीच से झाँकते इसके गहरे रंग के फूलों से बगीचा खिल उठता है। इसे सूरज की तेज रोशनी पसंद आती है। बरसात में ऊपर से पानी देने की जरूरत नहीं। पौधे गल जाते हैं।

**कॉसमॉस**

वैसे तो यह सालभर फूलों से गुलजार रहने वाला पौधा है, लेकिन इसे लगाने के लिए यह मौसम सबसे सही है इस पौधे के अलग-अलग रंगों के फूलों की कई प्रजातियाँ हैं। पर इसके हल्के बैंगनी रंग के फूल बहुत ही मोहक दिखते हैं। बारिश के महीने में लगाया जाए, तो पूरा बगीचा इसके फूलों से जल्दी भर जायेगा।

### साल्विया

लाल साल्विया को स्कारलेट सेज या ब्लड सेज भी कहते हैं। बैंगनी, सफेद और गुलाबी रंग की इसकी वेराइटी भी बहुत पॉपुलर है। इसके पॉट की ड्रेनेज सही होनी चाहिए। खासकर बरसात के मौसम में। इसे लगाने के लिए बलुई मिट्टी सबसे परफेक्ट मानी गयी है।

### बालसम

यह ब्राइट कलर के फूलों का पौधा है। हिंदी में लोग इसे गुलमेंहदी के नाम से भी जानते हैं। यह बरसात में लगाने के लिए बिलकुल सही है। इसके फूल लाल, मजेंटा,बैंगनी, गुलाबी रंग के होते हैं। अच्छा होगा अगर आप भी अपने यहाँ हर रंग के बालसम लगाएें। इसमें बहुत सारे बीज होते हैं, जिसे आप दूसरे सीजन के लिए स्टोर कर सकते हैं।

पूरी तरह वश में किया हुआ मन हमारा सबसे अच्छा मित्र होता है
लेकिन ये अनियंत्रित हो जाए तो सबसे बड़ा शत्रु हो जाता है

शीतजल मात्स्यकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# ऋतुवार मौनवंश प्रबन्धन

**हरीश चन्द्र तिवारी**
राजकीय मौनपालन केन्द्र ज्योलीकोट, नैनीताल

मधुमक्खी पालन में मौनवंशों का उनकी आवश्यकतानुसार उचित प्रबन्धन करना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। विभिन्न मौसमों के अनुसार मौनवंशो की देखरेख करके शहद उत्पादन में वृद्धि तथा मधुमक्खी परिवारों को बढ़ाया जा सकता है। प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य मधु श्राव से पूर्व मधुमक्खियों की संख्या में अधिक वृद्धि करना तथा प्रतिकूल मौसम में परिवारों को कमजोर होने या खत्म होने से बचाना है। मौन पालन को आजीविका का प्रमुख साधन बनाने के लिये यह आवश्यक है कि मौनालय से अधिक से अधिक आय अर्जित की जा सके। यह तभी सम्भव है जब मौनगृह/मौनवंशो का समुचित प्रबन्धन किया जाये, जिससे मौनवंशो की संख्या में वृद्धि के फलस्वरूप अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकेगा। मौन ही एक ऐसा कीट है जो अपने रहने के स्थान पर मौसम के अनुसार वातावरण बनाये रखता है। मधुमक्खी जाड़ो में अपने घर के अन्दर एक दूसरे से सटकर बैठी रहती है, जिससे गर्मी पैदा होती है तथा छत्तों में आवश्यक तापक्रम बना रहता है। गर्मियों में मौन तेजी से अपनी पंखों से हवा करते है जिसमें से कुछ प्रवेश द्वार के पास अपने पंखों से गर्म हवा बाहर निकालते है तथा मौनगृह के अन्दर का तापमान सामान्य बनाये रखते है। सफलता पूर्वक मौनपालन हेतु विभिन्न ऋतुओं में प्रबन्धन की विशेष आवश्यकता होती है। मधुमक्खियों का पराग तथा मकरन्द पूरे वर्ष भर उपलब्ध नही होता है। अभावकाल में मौनवंशों को जीवित रखने के लिये कृत्रिम भोजन की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार मौनवंशों के प्रबन्धन के लिये पूरे वर्ष अलग-अलग ऋतुओं में अलग-अलग कार्य होते है।

## बसन्त ऋतु में मौनवंशों का प्रबन्धन

शरद ऋतु के बाद बसन्त ऋतु का आगमन होता है तथा गुठलीदार फलों में पुष्पन आरम्भ होता है। मौसम धीरे-धीरे गर्म होने लगता है तथा प्रकृति में विभिन्न प्रकार के पुष्प खिलने लगते हैं। इस सुनहरे मौसम में मधुमक्खियाँ अपना प्रजनन बढ़ाने लगती हैं तथा परिवार में उपलब्ध शिशुओं की देखभाल अच्छी प्रकार होने लगती है। इन दिनों छत्तों में जमा शहद व पराग पूर्ण रूप से इस्तेमाल होने लगता है। इस मौसम में मौनवंशों की देख-रेख हेतु निम्न बिन्दूओं का ध्यान रखना चाहिये:

- बसन्त ऋतु के आरम्भ होने पर धूप के दिन मौनवंशों की शीतकाल में की गई व्यवस्था को आवश्यकतानुसार खोल देना चाहिये तथा मौनगृहों को अच्छी तरह साफ़ करना चाहिये।
- प्रत्येक मौनवंश मे आवश्यकतानुसार रिक्त छत्ते होने चाहिये। ऐसा करने से रानी मौन को अंडा देने में सुविधा होती है।
- जब मौनवंशो के शिशु खंडों में मौनों की संख्या बढ़ जाती है तो इस प्रकार के मौनवंशों के उपर मधुखंड चढा देना चाहिये अन्यथा मौनवंशों में बकछूट की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।
- यदि रानीकोश बन रहे हों तो उन्हें तोड़ते रहना चाहिये, यदि इसके बाद भी रानी कोश बन रहे हों तो मौनवंश का विभाजन कर देना चाहिये।
- घरछूट व बकछूट रोकने के लिये वायु के उचित आदान-प्रदान की ब्यवस्था होनी चाहिये।
- मधुमक्खियों में शहद भंडारण के लिये आवश्यकतानुसार अतिरिक्त फ्रेम देने चाहिये।
- रानी रोक पट (क्वीन एक्सक्लूडर) का प्रयोग करना चाहिये ताकि रानी ब्रूड चैम्बर में अंडे दे सके।
- शक्तिशाली मौनवंशों का विभाजन कर देना चाहिये ताकि अतिरिक्त मौनवंशों की संख्या बढ़ाकर शहद उत्पादन बढाया जा सके।

## ग्रीष्म ऋतु में मौनवंशों का प्रबन्धन

ग्रीष्म ऋतु में तापमान मैदानी क्षेत्रों में तेजी से बढ़ता है तथा दोपहर के समय गर्म हवायें चलती है। इस मौसम में तापमान लगभग 40–45 डिग्री से० तक चला जाता है। इस मौसम में प्रबन्धन के लिये निम्नलिखित उपाय किये जाने चाहिये:

- मौनगृहों को किसी छायादार स्थान में रखें लेकिन इस बात का ध्यान रखें की सूर्य का प्रकाश मौनगृहों तक पहुँच पाये।
- मौनालय के पास साफ तथा बहते पानी की व्यवस्था करें ताकि मौनों को आवश्यकता के अनुसार साफ पानी प्राप्त हो सके।
- यदि छायादार स्थान न हो तो बक्सों के उपर पुवाल या टाट डालकर उसे सुबह शाम पानी से भिगोते रहें जिससे मौनवंशों का तापमान बना रहे।
- कृत्रिम भोजन की व्यवस्था (50 प्रतिशत भाग चीनी 50 प्रतिशत पानी) दे।
- मौनगृह के स्टैंड की कटोरियों के पानी को प्रतिदिन साफ करें व उनमें ताजा पानी से भर दें।
- शहद निष्कासन के समय आवश्यकतानुसार शहद कालोनी में ही छोड़ देना चाहिये।
- शत्रुओं जैसे मोमी पतंगा, अष्टपदी, चीटीयों से बचाव का उपाय करें।
- कालोनीयों का निरीक्षण 10–15 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिये।
- कमजोर मौनवंशों को आपस में मिला देना चाहिये।

## मौनवंशों का वर्शाकालीन प्रबन्धन

वर्षा ऋतु मौनवंशों के लिये बहुत हानिकारक होती है क्योंकि पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक तथा लगातार वर्षा होने के कारण मौनों की मृत्यु दर अधिक बढ़ जाती है। इस मौसम में मौनों को मकरन्द बहुत ही कम प्राप्त होता है तथा परागकण भी धुल जाते है। इस मौसम में निम्नलिखित बिन्दुओं का ध्यान रखना चाहिये:

- मौनगृहों के आस–पास नियमित रूप से सफाई होनी चाहिये जिससे सीलन न होने पाये।
- मौनगृहों को चीटी रोधक प्यालियाँ लगाकर स्टैंडों के उपर रखना चाहिये ताकि मौनवंशों में चींटियों का प्रकोप न होने पाये।
- मौनवंशों में कम से कम फ्रेम रखने चाहिये तथा मौनगृहों को नियमित रूप से साफ करके सुखाते रहना चाहिये।
- ऐसे कमजोर मौनवंशों को जिनमें रानी ने अंडे देना बन्द कर दिया हो उन्हें अन्य मौनवंशों में मिला देना चाहिये।
- वर्षाकाल में मोमी पतंगा, अंगलार, विश्नार व अन्य शत्रुओं का प्रकोप रहता है। अत: मोमी पतंगे से ग्रसित छत्तों को निकालकर धूप में सुखाकर रखना चाहिये तथा मौनवंशों में अतिरिक्त खाली फ्रेमों को हटा देना चाहिये।
- मौनवंशों का निरीक्षण अवश्य करना चाहिये ताकि कीड़े व बीमारियों से बचाव किया जा सके।
- वर्षाकाल में मौनों के लिये कृत्रिम भोजन सामाग्री की व्यवस्था करनी चाहिये।
- मौनगृह के तलपट की सफाई 15 दिनों के अन्तराल पर अवश्य करनी चाहिये।
- मौनालय में पानी के निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिये।
- वर्षाकाल में मौनवंशों को परागपूरक मौनचर वाले क्षेत्रों में स्थानान्तरित करना चाहिये।

### शीतकाल में मौनवंशों का प्रबन्धन

इस मौसम में मौनवंशों की विशेष देख-रेख की आवश्यकता होती है। शीतकाल में मौनवंशों की देखरेख हेतु निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये:

- मौनवंशों को ठंडक से बचाने हेतु मौनगृह के चारों ओर की दरारों को गीली मिट्टी से बन्द कर देना चाहिये।
- मौनगृह के मुख्य द्वार को छोटा कर देना चाहिये।
- अक्टूबर माह में टाट की बोरी को आन्तरिक ढक्कन के नीचे बिछा देना चाहिये ताकि उचित तापमान बना रहे।
- अधिक ठंडे इलाकों में पुवाल तथा बोरी की टाट से मौनगृह को पूरा ढक दें।
- मौनगृहों को धूप वाले स्थानों पर रखें ताकि मधुमक्खियाँ अपना कार्य सुचारू रूप से कर सकें।
- मौनगृह में मौनों की संख्या अधिक बनी रहे, वे कमजोर ना हो, इसके लिये मौनवंशों को आवश्यकतानुसार शहद तथा चीनी का घोल 50:50 दें।
- मैनगृहों को फूल तथा पराग वाले क्षेत्रों में रखें ताकि कमेरी मधुमक्खियों को अधिक मकरन्द तथा पराग मिल सके।
- अक्टूबर व नवम्बर में मौनवंशों की अच्छी स्थिति होने पर विभाजन का कार्य किया जाता है जो अनुकूल मौसम तथा पुष्प के आधार पर सम्भव है
- इस मौसम में वैक्स मॉथ का प्रकोप भी रहता है। इससे बचाव के लिये मौनवंशों में अतिरिक्त फ्रेमों को हटा देना चाहिये तथा मौनगृह की सफाई करते रहना चाहिये।

*शिक्षक वो किसान है*
*जो दिमाग में ज्ञान के बीज बोता है*

कविता/कहानी

# हम पहाड़ी

**शारदा मालरा**
मुख्य उद्यान कार्यालय, विकास भवन, भीमताल

धरती पर जो स्वर्ग है कहते जिसे पहाड़,
वहाँ के हम नौनिहाल हैं।
ऊँचे पर्वत घने जंगल नदियाँ पंछी प्रयाग,
मीठी बोली, मीठा पानी, फूलों की बहार।
ऐसा है मेरा पहाड़....

लोग यहाँ के सीधे-साधे चालाकी ना इनको आए,
सीधा-साधा जीवन इनका,
बस एक "घुटुक चाहा" मिल जाए।
साल में न जाने कितने त्यौहार ये मनाएं,
कभी हरेला, कभी घुघूती, कभी "आवा" बटवाएँ।

"बेडू पाको" की धुन पर सबको ये नचाये,
दिल में लाखों दर्द लिए, होठों से मुस्काये।
कड़ी मेहनत करके बंजर धरती में भी, अन्न उगॉये,
"असोज" का महीना आते ही, काम में जुट जाएँ।

"असोज समीरण हूँ" कहकर, चार बजे उठ जाएं,
फिर खेतों में जाकर, खूब पसीना बहाऐं।
मौसम चाहे कैसा भी हो, ये न कभी घबराएँ,
धरती का सीना चीर के फसल ये उगायें।

"पैलाक पैलाक" कह के सबको अपना बनाए,
रुठ गए अगर फिर, तो कौन इन्हें मनाए।
मन के मौजी हम पहाड़ी,
फौजी बनना चाहें।

*"केवल ज्ञान ही एक ऐसा अक्षय तत्व है जो कहीं भी*
*किसी अवस्था और किसी काल में भी मनुष्य का साथ नहीं छोड़ता"*

# जलचरी

**इंदिरा पाण्डेय**
आज़मगढ़, उत्तर प्रदेश

कल-कल करती जल के अंदर
जल ही इसका जीवन,
जल ही खाना, जल ही पीना
जल ही में है, इसका विचरन।

प्रकृति ने इसको रूप दिया है
प्रकृति से ये है निखरी,
जब भी कोई हाथ लगाता
व्याकुल होकर ये घबराती।

जल में रहना, जल में जीना
बाहर सूनापन,
कल-कल करती, जल के अंदर
जल ही इसका जीवन।

जलचरी, जलपरी नाम है इसका
सबके मन को भाती,
ताल-तलैया इसका बसेरा
जीवशाला में है सजती।

आओ बच्चों तुम्हें सुनायें
जलपरी की कहानी,
बड़ी लुभावन है मनभावन
अपनी मछली रानी।

कल-कल करती जल के अंदर
जल ही इसका जीवन,
जल ही खाना, जल ही पीना
जल ही में है विचरन।

# ऐसा क्यूँ?

**शारदा मालरा**
मुख्य उद्यान कार्यालय, विकास भवन, भीमताल

कल "चाँद" से बहुत बात हुई मेरी,
परेशान था, कह रहा था.........
ऐसा क्यूँ है मेरे साथ?
कभी घटता हूँ, कभी बढ़ता हूँ।
कभी पूर्ण हो जाता हूँ...
फर भी तुम कहते हो
किसी की प्रशंसा करते हुए
"चांद" से सुन्दर हो तुम।

ऐसा क्यूँ?
मैने कहा, जानते हो!
तुम बहुत प्यारे "शिक्षक" हो......
सिखाते हो हमें, जीवन का पाठ।

घटना–बढ़ना, पूर्ण होना
क्रिया है, नियम है, सृष्टि का,
इससे घबराना कैसा?
बस धैर्य से, सब सहते रहना।

इसलिए तो सुन्दर हो तुम,
उदाहरण तो सबके लिए
जो जानते हो, सिखाते हो.......
झलकता है "स्वयं तुममें"।

अब कभी परेशान न होना
बस मुस्कराते ही रहना,
धवल, प्रकाश, शान्ति देते रहना।

# सूक्ष्म जीवन

कृष्णा काला
भा.कृ.अनु.परि.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

अति सूक्ष्म आँखों से ओझल, ऐसी छवि है तुम ने पायी।
जग में करते काम अनेकों, ऐसी प्रतिभा कहाँ से आयी॥

बारखड़ी से लगते मुझको, अंक अः या अर्ध विराम।
कभी तुम कौमा जैसे लगते, कभी लगते तुम पूर्ण विराम॥

मोती के माला की जैसी, अंगूरों के गुच्छों सी।
कहीं तुम्हारी पूँछ सी रहती, कहीं दाढ़ी और मूछों सी॥

बात करूं भोजन की तेरे, क्या-क्या तुमने खाया है।
जिस शीरा को हम ने फेंका, मदिरा भी उस से बनाया है।

प्रथम घटक तुमहीं जगत के, ह्यूमस को तुम ने बनाया है।
जैविक-अजैविक कैसी हो वस्तु, बिन नखरे सब खाया है॥

रक्षक कहूँ या भक्षक तुम को, रोग दिये, या कभी बचाया है।
धरती अम्बर या उबलता जल हो, हर जगह में तुम को पाया है॥

एक कोशिका जो दिखे न जग को, हाथी भी तुम से दूर रहे।
तुम ने किया आघात किसी पर, बल-बुद्धि भी मजबूर रहे॥

# छुट्टन की डाक्टरी

**सुभाष चंदर**
गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश

कोई भी गॉव अगर प्रसिद्ध हो जाए तो उसके पीछे कई कारण होते है, पर बेगमपुर गाव की प्रसिद्धि का सिर्फ एक कारण है और वो है छिद्दा चौधरी के सपूत छुट्टन की प्रतिभा। कहते है न कि होनहार बिरवान के होत चीकने पात। इसी कहावत की तर्ज पर छुट्टन ने छुट्टन से ही अपनी प्रतिभा का कमाल दिखाना शुरू कर दिया। पाँच बरस की उमरिया तक आते-आते वह मोहल्ले मे काफी नाम कमा चुके थे। लोगो के घर से दूध-दही-मक्खन चोरी करना, अपनी उमर के बच्चों की चंपी करना, एक सांस में आठ-दस गालियाँ बक जाना उनके प्रिय शगल रहे। उसके बाद छिद्दा चौधरी ने उन्हे स्कूल में दाखिला दिला दिया। स्कूल में उन्होने किसी तरह पूरे सात साल काटे। इन सात सालों मे उन्होने स्कूल की सात बेंच तोडी, हर सफेद दीवार पर स्याही की पच्चीकारी की। कई साथी लड़कों के कान उखाड़े। सातवीं कक्षा तक आते-आते वह छोटे बच्चो के पैसे भी छीनने लगे थे। पूरा स्कूल उनसे खौफ खाता था, पर खुद छुट्टन किसी से खौफ खाते थे तो वह थे उनके सगे बाप-चौधरी छिद्दा सिह। छिद्दा सिह गालिया बकने मे अगर बी.ए. थे तो लाठी बजाने मे एम.ए.। छुट्टन गाहे-बगाहे गाली-लाठी का प्रसाद चखते रहते थे। ऐसा न होता तो छुट्टन कतई स्कूल मे रूकने वाले जीव नही थे। सच कहू तो वह बहुत दु:खी थे और स्कूल रूपी जेल से जल्दी फरार होने की जुगत मे थे।

मास्टरजी की कृपा से जल्दी ही वह मौका भी आ गया। उस दिन मास्टरजी ने सब बच्चों को अपना होमवर्क दिखाने को कहा। छुट्टन भी तलब हुए, पर जैसी कि उम्मीद थी, छुट्टन स्कूल भी बाप के डर से आ जाते थे। यही क्या कम था, जो होमवर्क भी करते। बस मास्टरजी बमक उठे। उठाई छड़ी और दनादन धर दी छुट्टन के पिछवाडे पर। छुट्टन बिलबिला गए। गुस्से से मास्टरजी को देखा, निकाली बस्ते से गुलेल, लगाया गोल पत्थर और लगाय दिया निशाना। निशाना बिल्कुल ठीक लगा, ठीक मास्टरजी की बायी आँख पर। मास्टरजी चीखते-चिल्लाते रहे गए, पर छुट्टन तो ये जा और वो जा.....!

इस प्रकार मास्टरजी की आख फूट गई और छुट्टन की पढाई छूट गई। छिद्दा चौधरी ने हैडमास्टर के लाख हाथ-पाव जोडे, पर वो नही माने, इस पर उन्होंने गालियों के भंडार मे से सजी हुई चुनिंदा गालिया भेट की, हारकर तेल पिली लाठी दिखाई, पर हैडमास्टर तैयार नही हुए। हाथ जोडकर बोले, चौधरी चाहे तो जान ले ले, पर तेरे लौड़े कू स्कूल मे न लेने का हूँ। तेरी लाठी से तो सिर ही फूटेगा, पर तेरे लौड़े की गुलेल से तो आँख ही फूट जावैगी। मुझें और मेरे मास्टरो कू काना होने का शौक ना है। हारकर छिद्दा चौधरी घर लौट आए, आकर उन्होंने छुट्टन की जमकर खबर ली। छुट्टन दस-बारह दिन बिस्तर पर पडे हल्दी-दूध पीते रहे। ठीक हो जाने के बाद फिर से अपने काम मे लग गए। उनकी मुक्त प्रतिभा ने अपने कमाल दिखाने शुरू कर दिए। वो लगातार प्रगति के नए आयाम छूते रहे। बीडी से उठकर सिगरेट पर आए, सिगरेट से गाजे और गाजे से दारू तक आने मे उन्होने पूरे पाँच साल लिए। पैसे की कोई ज्यादा कमी नही थी, चैधराइन से ठग लेते, नही तो चोरी-छिपे घर का अनाज औने-पौने दामों मे बेच देते। घर में सख्ती होती तो आसपास के घरो को भी अपना समझ लेते। इसी तरह अपने कर्मों का विकास करते-करते वह बीस साल की उमरिया को प्राप्त हो गए। छुट्टन मस्त थे, पर छिद्दा सुस्त थे। भला इस लौड़े का क्या किया जाए? वह चाहते थे कि छुट्टन कुछ काम-धन्धा करे तो वह उसका ब्याह तय कर दे। ब्याह होगा तो अच्छा दहेज मिल जाएगा, सेत मे लौडा भी सुधर जाएगा।

एक दिन यही सोचकर उन्होने छुट्टन को तलब किया। छिद्दा चौधरी के चेहरे से गंभीरता टपक रही थी। छुट्टन समझ गए, मामला कुछ लफड़े वाला है। चौधरी हुक्का गड़गड़ाकर बोले, लल्ला, जे बताओ, तुम का चाहते हो? हम तो कुछ नाय चाहते। देना चाहो तो सौ रूपैया दे दो.... शहर में सिनेमा लगा है, देख आएगें। कहकर छुट्टन ने खींसे निपोर दी। छिद्दा बमगमा उठे। लाठी जमीन पर मारी। भड़ककर बोले, लल्ला.......लाठी मारकर पिछवाड़ा तोड़ देगे, जो मसखरी करी तो....। फिर थोडा मुलायम होकर बाले, लल्ला... अब तुम्हारी उमर होय गई है, कुछ काम-धाम करो तो तुम्हारा कुछ सादी-ब्याह करे...। रूककर बोले, अच्छा जे बताओ, तुम का काम करना चाहते हो....खेती करोगे? छुट्टन ने सिर हिलाय दिया। ते फिर कोई दुकान खोल लो। बताओ....दुकान खुलवाए देते है। छुट्टन ने गर्दन फिर दायें-बायें घुमाय दी।

खीचकर छिद्दा बोले, तो फिर नौकरी करोगे, करे रामधन से बात, वो फैक्टरी में नौकरी दिलवाय देगा, बोलो करोगे नौकरी.

छुट्टन हिनहिनाए, नौकरी तो हम हरगिज नाय करेंगे....।

छिद्दा का पारा सातवे आसमान को छूने वाला था, उसे थोडा नीचे लाकर बोले, तो फिर तुमही बताओ, क्या करेंगे।

इस पर छुट्टन शरमाय के बोले, बापू.... हमें हराम पच गयौ है, हम क्यू काम करेंगे। कहकर छुट्टन ने रेस लगा दी।

छिद्दा चौधरी ने एक हाथ से अपना माथा और दूसरे से छाती एक साथ पीट ली।

ऐसे ही कुछ दिन चलता रहा। एक दिन शहर का बुलाकी नाई चौधरी से मिलने आया। चौधरी ने छुट्टन की राम कहानी सुनाई। बुलाकी बोला, चौधरी लौड़े कू डाक्टर बनाय देयौ। चौधरी चैके, कैसे भैया.... ?

बुलाकी बोला, शहर में एक डाक्टर से मेरी पहचान है। उसकी दुकान में कंपौडर की जगह खाली है। मै कहूंगा तो वो छुट्टन को रख लेगा। भगवान ने चाहा तो दो–चार साल में छुट्टन काम सीख जाएगा, फिर आराम से गॉव मे डाक्टरी कर लेगा। दाल रोटी का अच्छा जुगाड़ हो जाएगा।

चौधरी की समझ मे बात आ गई। मजे की बात ये कि छुट्टन भी मान गए। अगले ही दिन छुट्टन का लदान शहर की तरफ हो गया। शहर में जाकर अब वह कंपाउडर छुट्टन कहलाने लगे।

छुट्टन ने पूरी लगन और मेहनत से पूरे आठ दिन तक काम सीखा। सफेद गोली बुखार की, पीली गोली दस्त की, नीली गोली दर्द की, लाल सिरप खांसी, पीला सीरप जुकाम....सब मामला उनकी समझ में आ गया। और तो और वह अपनी मेहनत से इंजेक्शन लगाना भी सीख गए। आठ दिन मे उन्होंने चार दवाईयों के नाम भी रट लिए थे। अभी वह कुछ और तरक्की करते, पर कमबख्त नौवा दिन आ गया। उस दिन डाक्टर की दुकान पर खासी भीड थी। डाक्टर दवाई लिख रहे थे, कंपाउडर छुट्टन दवाई दे रहे थे, तभी एक व्यवधान पडा। एक सुंदर–सी कन्या ने क्लीनिक में प्रवेश किया। कन्या को देखते ही छुट्टन दवाई भूल गए और कन्या पर ध्यान केंद्रित करने लगे। कन्या की आखे झील जैसी गहरी थी, छुट्टन उस झील मे कूद गए और काफी देर तक तैरते रहे। छुट्टन अपने काम मे मस्त थे, उधर डाक्टर छुट्टन–छुट्टन चिल्लाकर हलकान थे। उसके कंपाउडर रूम मे आकर देखा तो छुट्टन पर बरस पडे। शुद्ध अंग्रेजी में चार–छह गालियाँ फेक मारी छुट्टन पर। छुट्टन तो बिदक गए, एक तो गलिया अंग्रेजी मे दी, वो भी कन्या के सामने.....स्सारै डाक्टर के बच्चे.....तेरी तो ऐसी की तैसी.....तड़ातड़.....तड.... धर दिए पांच–सात झापड....चार–छह लात। डाक्टर चीखने–चिल्लाने मे व्यस्त रहा और छुट्टन ने बाहर की ओर दौड लगा दी। अलबत्ता जाते–जाते वह दवाईयों के पाँच डिब्बे और कुछ इंजेक्शन सेट और स्टेथोस्कोप अपने साथ लाना न भूले। आखिर शहर की कंपाउडरी की कुछ निशानी तो रखनी तो रखनी थी न।

इस घटना के तीसरे दिन ही गांव मे बोर्ड लग गया छुट्टन चौधरी की डाक्टरी की दुकान। मतलब अब छुट्टन शहर रिटर्न डाक्टर हो गए। अब सुबह–शाम छुट्टन बनेगा दुकान खोलते, पर इस दुकान में उनके गंजेड़ी–लगेड़ी साथी आते। टैम पास करने लौड़े–लपाड़े आते, पर वे नही आते जिनसे कमाई होनी थी। छुट्टन परेशान थे, सुबह–शाम दुकान की हाजरी बजाते। बोर होकर एकाध चिलम–गांजे की मार लेते। शाम को गम गलत करने की लालपरी का सेवन करते। अगले दिन फिर मरीज के आने का इंतजार करते।

एक दिन सच्ची में डाक्टर छुट्टन की किस्मत का ताला खुला गया। दोपहरी का टाइम था। छुट्टन अपनी डाक्टरी की दुकान मे गांजे की चिलम का सेवन कर रहे थे, तभी मन्नू लुहार चीखता–चिल्लाता आया, भैया डागदर बाबू हमै बचाय लौ। हमारे बडी जोर से सिर मे दर्द हो रहा है। कोई ऐसी गोली दे दो, जो हमारे सिर का दर्द टें बोल जाए। डाक्टर छुट्टन ने गांजे से ललियाए अपने नेत्र खोले, एक नजर मन्नू पर और दूसरी दवाइयों के डिब्बे पे डाली। दिमागे शरीफ पर जोर डाला तो याद आ गया सिर दर्द यानी नीले रंग की गोली। बस फिर क्या था, निकाली आठ–दस गोली। बांधी पुडिया और धर दी मन्नू की हथेली पर। मन्नू ने पूछा, डागदर बाबू.....कित्ती गोली, कित्ती देर मे खानी है।

छुट्टन सोच मे पड गए। डाक्टर तो एक–एक गोली दिन में तीन बार खाने को कहता था, पर एक गोली मे दर्द बंद न हुआ तो.. ....सो, उन्होंने मन्नू को लाख टके की सलाह दी, भैया, दो–दो गोली हर दो घंटे बाद खा लेना। पिरभु में चाही तो दर्द टें बोल जाएगा। मन्नू ने डागदर बाबू की सलाह रूमाल मे दवाईयों के साथ बांध ली। एक बाबा आदम के जमाने का नोट डागदर बाबू की हथेली में रखा और अर्न्तध्यान हो गया। अब पता नहीं, मन्नू का भाग्य था, वक्त का फेर था या छुट्टन की डागदरी का कमाल। मन्नू जो था, वह ठीक हो गया। ये खबर पूरे गांव मे फैल गई। बस फिर क्या था, इस घटना के बाद तो छुट्टन डागदर की डाक्टरी चमक गई। छिद्दा चौधरी ने लडकी वालो की जेबे टटोलनी शुरू कर दी। रात–रात भर बैठकर चैधरी–चैधराइन डाक्टर बेटे के दहेज का हिसाब लगाते। छुट्टन भी मां की सलाह पर शादी की शेरवानी का नाप दे आए।

कुल मिलाकर माहौल बहुत बढिया था। छुट्टन को डाक्टरी की दुकान खोले पूरे सोलह दिन बीत चुके थे। इन सोलह दिन मे

पूरे चालीस मरीज आए थे, जिनमें से चार तो छुट्टन की दवाइयों से ही ठीक हो गए थे। मामला चकाचक था। सत्रहवे दिन की शाम तक मामला चकाचक ही चलता रहा।

रात के कोई आठ बजे होंगे, तभी पडोस के गाव की एक बैलगाडी डाक्टर बाबू की दुकान के आगे रूकी। चार आदमी कंबल मे लिपटे एक मरीज को उतार ले आए। मरीज ने कराहते–कांखते हुए बताया कि उसके पेट मे घनी जोर का दरद होय रहा है। जल्दी ठीक कर दो। डाक्टर छुट्टन ने स्टेथोस्कोप से मरीज के पेट की जांच की। पूरे पेट पर स्टेथोस्कोप घुमाया। सारी बीमारी समझ ली। दिमाग पर जोर डाला तो याद आ गया–पेट का दर्द मतलब, पीली गोली। ज्यादा दर्द यानी डबल गोली। बस दे दी चार गोली। मरीज ने चारो गोली निकल ली और छुट्टन के साथ पेट दर्द ठीक होने का इंतजार करने लगा, पर पेट दर्द बैरी बहुत बेशरम था, ठीक ही नही हुआ। जब आधे घंटे बाद भी मरीज चिल्लाता रहा तो छुट्टन ने पिनककर दस–बारह गोली इकट्ठी मरीज के हलक मे ठूंस दी। साथ मे मूछो पर ताव देकर धमकी भी दी, हम देखे कि कैसे यू ससुरा पेट का दर्द ठीक ना हौवे। या तो दरद नही या मरीज नही।

पर दर्द भी वही रहा और मरीज भी। हा, उसके चिखने–चिल्लाने की आवाजे और बढ़ गई। वह बार–बार अपने पेट पर हाथ रखकर चीख रहा था। तभी छुट्टन को इंजेक्शन की याद आई। उन्होंने भरी सीरिंज और इंजेक्शन ठोक दिया पेट में। मरीज चिल्लाया, डैगदर बाबू जे का कर दिया। भला कही पेट मे इंजेशन लगत हैं। पर छुट्टन ने उन्हे धमका दिया, चुप पागल, डागदर तू है या हम है। जहाँ दर्द होगा, वही इंजेशन लगेगा। अब चुप कर जा। दो–चार मिनट मे आराम पड जाएगा।

आराम तो खैर क्या पडना था, पर दवाइयों और इंजेक्शनो की कृपा से मरीज का पेट भूल गया। फूलकर कल्लू लाला की तोंद सा हो गया। मरीज के तीमारदार चिल्लाने लगे, डागदर बाबू को कोसने लगे। अब छुट्टन डागदर घबराए। ये क्या मुसीबत गले पड़ गई। अब इस पेट को कैसे साइज मे लाए। सोच मे पड़ गए। दवाइयों ने ही पेट फुलाया है, जब तक दवाई बाहर न निकले, पेट फूला ही रहेगा। क्या करे...... क्या करे। दिमाग ने फार्मूला सुझा दिया–चीरा......। अब तो चीरा ही इलाज है।

बस फिर क्या था! छुट्टन ने सब्जी काटने वाला चाकू निकाला और लग गए चीरा ऑपरेशन में। मरीज चिल्लाया, तीमारदार चिल्लाए, डागदर जे का कर रहा है। मारेगा मरीज कू। पर छुट्टन कडक डाक्टर थे, उन्हें इलाज करना आता था। कडककर बोले, चुप करो, मूर्खो..... दवाइयों से पेट का दर्द एक जगह इकट्ठा हो गया है। बस एक चीरा लगाएंगे और दर्द बाहर निकल जाएगा। फिर जुट गए अपने काम मे, लगा दिया चीरा पेट में।

फिर क्या था, थोडी देर बाद पेट से दर्द तो बाहर नही निकला हा खून जरूर निकलता रहा जो बहुत देर तक बंद नही हुआ। मरीज की हालत बिगडती देखकर दो तीमारदारों ने उसे बैलगाड़ी पर लादा और बाकी के तीमारदार डागदर बाबू की सेवा मे जुट गए।

तेल पिली लाठियो ने छुट्टन की तब तक सुताई की, जब तक कि वह बेहोश नही हो गए। प्रत्यक्षदर्शी बुलाकी नाई बताते है कि उन लोगो ने छुट्टन की डागदरी उनके किसी विशेष स्थान मे घुसेड दी। तीमारदार तो मरीज को लेकर शहर के अस्पताल चले गए। वहाँ छुट्टन की कृपा के मारे मरीज ने दम तोड दिया। तीमारदारो ने छुट्टन के खिलाफ पुलिस मे रपट लिखा दी। पुलिस जिस समय छुट्टन के घर पहुची उस समय वह अपनी चोटो पर हल्दी का लेप करा रहे थे, जो उनके अनुसार रपट कर गिर जाने से आई थी। वह अपनी अम्मा को एक गंभीर मरीज के सफलतापूर्वक इलाज का किस्सा बयान कर रहे थे और दुकान पर कल करने वालो की कारनामो फेहरिस्त गिना रहे थे, पर पुलिस ने उनकी मंशा पूरी होने नही दी।

ताजा खबर यह है कि आजकल डाक्टर छुट्टन जेल मे डाक्टरी कर रहे हैं। अलबत्ता उनकी शादी की शेरवानी अब तक उनका इंतजार कर रही है।

# ट्रेल पास–आधी सदी बाद

**अनूप साहा**
नैनीताल, उत्तराखण्ड

नैनीताल पर्वतारोहण क्लब ने अपनी रजत जयंती तथा जॉर्ज विलियम ट्रेल की जन्म शताब्दी वर्ष (1994) में ट्रेल पास (5312 मी.) पार कर एक इतिहास रचा। यह दर्रा कुमाऊँ के प्रारम्भिक कमिश्नर ट्रेल के नाम से जाना जाता है और पिंडारी गल के शीर्ष पर स्थित है। कहा जाता है कि यह दर्रा पहले प्रचलित था और बीच में प्राकृतिक कारणों से बन्द हो गया। 1830 में इसे फिर पार किया गया ताकि पिंडर तथा गोरी घाटियों के निवासियों के बीच सम्पर्क का एक नया मार्ग खोला जा सके। एडोल्फ स्केलेगिनविट, जिसने इस दर्रे को 1855 में पार किया था, के मुताबिक यह पर्वतारोहण अभियान न होकर मिलम घाटी की ओर जाने हेतु एक छोटे रास्ते को खोजने का उपक्रम था।

पिंडारी के ठीक शीर्ष पर स्थित ट्रेल्स पास बर्फ के मैदान सा प्रतीत होता है, जिसके पश्चिम में नंदाखाट (6611 मी.) तथा उत्तर की ओर छ्यांगुच शिखर (6322 मी.) हैं। पिंडारी गल से पिंडर नदी निकलती है जो आगे चल कर कर्णप्रयाग में अलकनंदा से मिल जाती है। ल्वॉ घाटी की मुख्य धारा ल्वॉ ग्लेशियर तक निकलती है, जो नंदाकोट के उत्तरी ढलान का गल क्षेत्र है। ट्रेल्स पास का पूर्वी पनढाल, नंदादेवी का पूर्वी ढाल तथा माणा धूरा शिखर की धारा का जल मिलकर मरतोली के पास गोरी गंगा में मिलता है। यह सम्पूर्ण घाटी गोरी घाटी कहलाती है। यह क्षेत्र जोहार पिथौरागढ़ जिले के अन्तर्गत आता है।

ट्रेल्स पास का महत्व 18 वीं सदी में था, जब इससे मिलम घाटी के लिए व्यापारी जाया करते थे। इस रास्ते तिब्बत काफी कम समय में पहुँचा जा सकता था। कालान्तर में यह मार्ग बन्द हो गया। जब ट्रेल कुमाऊँ का कमिश्नर नियुक्त हुआ तो उसने इस रास्ते को पुन: खोलने में पहल की। उसने गोरी व पिंडर घाटियों के लोगो के सम्मुख इस मार्ग को खोलने का प्रस्ताव रखा। काफी प्रयास के बाद पिंडर घाटी की तरफ से सूपी गॉव के मलक सिंह

बूढा को इस दर्रे को पार करने में सफलता मिली। लगभग 100 वर्षो बाद रास्ता पुनः आबाद हुआ। बाद में ट्रेल ने स्वयं दर्रा पार कर गोरी घाटी में जाने का प्रयास किया किंतु उसे सफलता नहीं मिल सकी। एडोल्फ स्केलेगिनविट के अनुसार पिंडर घाटी के लोगों ने बताया कि ट्रेल को उस दौरान हिमअंधता की बीमारी हो गई थी। स्थानीय ग्रामीणों ने उसे सलाह दी कि वह अल्मोड़े में नंदादेवी की पूजा किये बिना इस क्षेत्र में आया, इस कारण देवी उससे कुपित हो गई है। कहा जाता है कि जमीन सम्बन्धी मुकदमे का फैसला भी नंदादेवी के पक्ष में किया।

मलक सिंह बूढ़ा के बाद यह दर्रा अनेक लोगों ने पार किया, जिसका विवरण इस प्रकार है:- एडोल्फ स्लागिनवेयट (1855), कैप्टन एडवर्ड स्मिथ (1861), कुर्ट बुच (1899), ह्यूम रटलज, उसकी पत्नी तथा विल्सन (1926), ह्यूम स्टिनलोर्ज (1930), दीवान सिंह मर्तोलिया तथा उसकी बकरियाँ (1931), अगस्त गैनसीर (1936), एस.एस. खेर (1941) तथा नैनीताल पर्वतारोहण क्लब (1944)। नैनीताल पर्वतारोहण क्लब ने 11 नौजवान सदस्यों ने इन पंक्तियों के लेखक के नेतृत्व में ट्रेल्स पास को 53 साल के अंतराल में पुनः पार किया। यद्यपि बीच के वर्षों में भी अनेक दलों ने दर्रे को पार करने का प्रयास किया लेकिन गल के कट-फट जाने के कारण वे लक्ष्य में सफल नहीं हो सके। अनेक लोगों इस प्रयास में जान से भी हाथ धोना पड़ा। हमने ट्रेल्स पास पार करते वक्त परम्परागत मार्ग का इस्तेमाल न कर दक्षिणी ढ़लान के कठिन व अपेक्षाकृत लम्बे मार्ग से होकर जाना सुरक्षित समझा। पूर्वी मार्ग गल मुख से ट्रेल्स पास तक छोटा तो है, किंतु हिमखण्डों के लगातार गिरने की आशंकाओं, दरारों तथा बर्फीली चट्टानों के कारण मार्ग पग-पग पर खतरों से भरा है। पिछले 164 वर्षों में यह दर्रा इस मार्ग से मात्र पाँच बार पार किया जा सका। दक्षिणी ढ़लान से ट्रेल्स पास की तरह जिस मार्ग से हम गये, उस पर अक्टूबर 1972 में हम नंदाखाट (6611 मी.) अभियान के दौरान कई दिनों तक फँसे रहे। अंततः 142 मी. रस्सा लगाने के बाद ही हम इसे पार कर पाये थे। नैनीताल पर्वतारोहण क्लब के उपाध्याय श्री चंदलाल साह ठुलघरिया के बार -बार प्रेरित करने के परिणामस्वरूप यह रास्ता कई दिनों के प्रयासों के बाद खुला। श्री अरविन्द आश्रम की माताजी के सम्मान में उन्होंने इस मार्ग का नामकरण मदर रॉक रूट किया। माता जी ने अभियान की सुरक्षा के लिए अपना आर्शीवाद भेजा था। आज भी इस रास्ते का इस्तेमाल यहीं जाने वाले अभियान दल कर रहे है। कई दिनों की तैयारियों के बाद हमारा दल 23 सितम्बर, 1994 को बागेश्वर, कपकोट होते हुए मार्ग के अंतिम बस स्टॉप सौंग पहुँचा। पोर्टरो व खच्चरो में सामान लेकर हम यहाँ से लोहारखेत पहुँचे। धाकुडी, खाती, द्वाली और फुरकिया होते हुए हमने अपनस आधार शिविर मारतोली खरक में 3275 मी. की ऊँचाई पर पिंडर को पार कर नदी के दाँये किनारे स्थापित किया। अणवालों (भेड़ चरवाहों) द्वारा बनाए गए पत्थरों के पुल से होकर हमने पिंडर नदी आसानी से पार कर ली। बाछम और खाती के चरवाहे अपनी भेड़ो व घोड़ो के साथ पहले ही जा चुके थे। उनकी बनाई गई झोपड़ियाँ हमारे रसोईघर और खाती गाँव के एक पोर्टर ने बताया कि कुछ साल पहले एक झोपड़ी में जाड़ो के दिनों में दो भरल चले गए। किसी कारणवश किवाड़ बंद हो जाने के कारण वे बाहर नहीं आ सके। अगले वर्ष जब गर्मी के मौसम में अण्वाल ऊपर आए तो उन्हें अब आगे बढते ही जाना था। पीछे आनें वाले साथियों के लिए हम कैम्प में संदेश लिख कर छोड़ गए कि उन्हें क्या लाना है और हमारे मार्ग का अनुसरण करना है। गल में हम बर्फ के दरारों के बीच रास्ता बनाते हुए 3 बजे तक चलते रहे। हर कदम फूँक कर रखना पड़ रहा था। अचानक मौसम खराब हो गया और जोरों की बर्फ गिरने लगी। एक सुरक्षित जगह ढूँढ कर आधे घण्टे की मशक्कत के बाद हम टेन्ट गाड़ने में कामयाब हो गये। चारों ओर बर्फ की दरारें थी और लीक से हट कर पाँव बढ़ाना मौत को दावत देना था। रात में मैगी नूडल्स खाकर भूख मिटाई और ग्यारह बजे तक बर्फ गलाकर अगले दिन के लिए पानी बनाते रहे।

सात अक्टूबर की सुबह मौसम चटख खुला हुआ था। सामने पिंडारी गलेशियर पसरा हुआ था और लामचीर, छ्यांगुच, नन्दाकोट और नन्दा भनार पर्वत श्रेणियाँ बाँहें फैलाए हुए जैसे हमें अपनी ओर आमंत्रित कर रही थी। सुबह छः बजे तक सारा सामान पैक हो गया। पहले हम बिना सामान लिये रास्ते का जायजा लेने के लिए बढ़े। आगे 45 से 60 डिग्री० के ढाल की कठोर बर्फ की दीवार को पार कर ऊपर पहुँचे। इस जगह से नन्दादेवी, पूर्वी नन्दादेवी और ट्रेल्स पास के भव्य दर्शन हुए। अब मंजिल पास थी लेकिन रास्ता कहीं अधिक खरतनाक। पूरा इलाका बर्फ की दरारों से पटा पड़ा था। नवीन और चंदोला ज्यादा आगे बढ़ कर रास्ता खोल रहे थे। यहाँ से हमें वापस पीछे लौटना था ताकि सामान लाया जा सके।

सामान के साथ हम धीरे-धीरे आगे बढ़ते है। बर्फ की बहुत चौड़ी दरार हमारा रास्ता रोके खड़ी थी। बहुत प्रयास के बाद एक चौड़ी जगह पर हमने दरार में उतर कर बाधा पार किया। एक-दो बार ऐसे बर्फ के पुल को भी रेंगकर पार किया। एक-दो बार ऐसे क्षण आए जब चंदोला ताजी बर्फ से छुपी दरार में गिर पड़ा लेकिन चौकन्ने नवीन ने उसे रोक लिया। हम सब रस्से में साथ ही बाँधे थे। ट्रेल्स पास की दूरी घटती जा रही थी। नीचे उतरकर बर्फ के लम्बे मैदान को पार कर दर्रे की ओर चढ़ना था। अब रास्ता अपेक्षाकृत कम खरतनाक था। लगभग 4 बजे हमने ट्रेल्स पास के

ठीक नीचे अपना आखिरी पड़ाव डाला। पीछे वाले के ठीक नीचे अपना आखिरी पड़ाव डाला। पीछे वाले दल का, जिसे आज रिज कैम्प से चलना था, कही कोई चिन्ह नहीं दिखाई पड़ रहा था। लेकिन शाम 6 बजे वे लोग भी हमारे पड़ाव मे पहुँच गये। आज जश्न का माहौल था। कई दिनों बाद 11 सदस्य साथ मिल रहे थे। हमारे कैम्प के ठीक सामने ट्रेल्स पास था, जिसके पार्श्व में नंदादेवी के दोनों शिखर हमारी ओर देख कर मुस्कुरा रहे थे। आज सूर्यास्त का जो नजारा हमने देखा वह हमारे जीवन का दुर्लभतम क्षण गया। नंदादेवी के दोनों शिखर सूरज की विदा होती किरणों के सुनहरे दुशाले में सो गए। मेरा कैमरा इस अविस्मरणीय दृश्य को कैद कर लेता है। ग्यारह लोगों की चाय उबलने में तीन घंटे लग गये। पहले बर्फ पिघलाओं और फिर गैस की घटती जा रही लौ में उसे उबालो। रात को पहले भोजन फिर दूसरे दिन के लिए पानी पिघलाया। बाहर का तापमान शून्य से 15 डिग्री नीचे था। कैमरा, पानी, जूते, मोजे जैसे सामान को स्लीपिंग बैग में रख लिया ताकि सुबह सब गर्म मिलें। तीन–चार घंटे सोने के बाद आगे की यात्रा की तैयारियों में जुट गये।

आठ अक्टूबर की सुबह हम तडके खाली हाथ ट्रेल्स पास की ओर लपके। आधे घंटे में दर्रे पर थे। 53 साल बाद आज हम इस मुकाम तक पहुॅचने में कामयाब रहे। ट्रेल्स पास से नंदादेवी मुख्य व पूर्वी शिखर सामने दिखाई पडते है। लौंगस्टाफ कोल भी सामने है जो नंदा देवी पूर्व को नंदाखाट से जोडता है तथा नंदादेवी सेंक्चुरी की बाहरी दीवार की रचना करता है। दर्रे पर हम देश, नैनीताल पर्वतरोहण क्लब, पहाड़ (अस्कोट–आराकोट अभियान) तथा श्री अरविंद आश्रम की माताजी के ध्वज लगाते है। लक्ष्य,जो अजेय व दुर्गम था, को आज हम पार कर चुके थे। इस तरह 53 वर्षो के बाद हमने यही पहुॅच कर इतिहास को दुहराया था। सभी सदस्य प्रसन्न और रोमांचित थे। फोटोग्राफी के बाद हम वापस कैम्प में आए और वहाँ से सामान ले कर वापस कैम्प में आए और वहाँ से सामान ले कर वापस दर्रे में लौटे।

दर्रे के दूसरी ओर ठीक नीचे ल्वां गल है। 2000 फीट का तीखा ढलान था, जिसे हमने रस्सों की मदद से पार किया। एक बार यह भी विचार बना कि वापस लौट चलें। लेकिन सभी जोश में थे और हमारे पास रस्सा भी 500 मी. लम्बा था। तय हुआ कि रस्सा निकाल कर बार–बार उसका उपयोग किया जाय। ट्रेल्स पास पार करने में एकमात्र महिला सदस्य लता जोशी भी सफल रहीं। इस तरह इस मार्ग से जाने वाली पहली महिला होने को गौरव उन्हें प्राप्त हुआ। 11 बजे काफी प्रयासों के बाद ढीले पत्थरों के बीच हमें पहला बेस बनाने में कामयाबी मिली। यहाँ से 200 फीट रस्सा डाल कर 6 सदस्य अनिल, गजेन्द्र, असलम, अकरम और नवीन नीचे उतरे। फिर अगला बेस बनाकर आगे उतरना शुरू किया। पहला पिच खड़ी ढलान 90 डिग्री तक हो गई थी। मैंने हिदायत दी कि रोप वहाँ पर वैसी ही छोड़ दी जाय। पहले वाले दल के 6 सदस्य करीब 2500 फीट उतरे ही थे कि अचानक बर्फ का तूफान आने लगा। अब न तो नीचे उतर चुके सदस्यों का ऊपर आना संभव था और न ऊपर के सदस्यों का नीचे जा पाना। चंदोला ओर में बराबर नीचे गये सदस्यों पर निगरानी रखे हुए थे। डॉ० पांगती, कीर्ति और लता को पिछले ट्रेल्स पास वाले कैम्प में जाने को कहा जा चुका था। आगे जा चुके साथी बॉई ओर की गली में रेंग कर आगे बढ़े और किसी तरह एक बर्फीली गुफा में शरण ली। मैने उन्हे वही रूकने का इशारा किया। दोनों गैस सिलेण्डर भी नीचे चले गए थे। चंदोला किसी प्रकार रस्से से उतर कर नीचे गया और जुमार की मदद से एक सिलेण्डर को वापस ऊपर ले आया। हम साढे पाँच बजे तक कोहरे और बर्फ के तूफान व तेज हवाओं के बीच ट्रेल्स पास में खड़े रहे। अंत में सीटी की आवाज से हमें वापस लौटने का इशारा मिला। उन्हें सुरक्षित जानकर चंदोला और मैं वापस ट्रेल्स पास कैम्प में लौट आए। चाय बनाई और कुछ खाकर सोने का प्रयास किया। लेकिन आगे जा चुके 6 साथियों की चिंता से घबराहट हो रही थी। रात के 1 बजे दर्रे की ओर से सीटी की आवाज आ रही थी। कोई आवाज भी लगा रहा था। किसी अनहोनी की आंशका से हमारे हाथ–पॉव फूल रहे थे। बाहर आए तो अशरफ और अकरम की आवाज आई कि वे आ रहे है। चंदोला व कीर्ति टार्च ले कर ऊपर की तरफ बढ़े। हमने जल्दी से गैस में पानी गर्म होने को रख दिया। दोनों जब कैम्प में पहुँचे तो उनका बुरा हाल था। उन्हें तुरन्त स्लीपिंग बैग में घुसाया, सुन्न हो चुके हाथों को रगड़ कर गर्म किया और गर्म काफी पिलाई तो कहीं जाकर उनकी जान में जान आई। अकरम ने बताया कि नीचे अशरफ की तबियत काफी खराब होने लगी तो अनिल ने ऊपर चले जाने का सुझाव दिया। जो बहुत ही गलत निर्णय सबित हुआ। रस्से की मदद से जब वे ऊपर चढने लगे तो ठंड के कारण वे अपने शरीर को ऊपर नहीं खींच पा रहे थे। रस्सा भी कड़ा हो गया था जिसमें हाथ नहीं टिक रहे थे। 7 बजे चलकर वे आधी रात तक संघर्श कर किसी प्रकार 1 बजे ऊपर पहुँच पाए। इस तरह एक बड़ा हादसा होते–होते टल गया। मेरे लिये तो यह एक चमत्कार ही था। अगले दिन सुबह जल्दी उठे। सामान पैक किया। खाना भी हमारे पास नहीं था। कुछ सूखे मेवे, बिस्किट और चाय पीकर 7 बजे ट्रेल्स पास पर पहुँच गये। आकाश बादलों से घिरा था लेकिन बर्फ नहीं गिर रही थी। हवा भी शांत थी। सुबह साढे सात बजे नीचे की ओर उतरने अग्रिम दल के 4 साथी दिखाई दिये। हमने उन्हें रूकने का इशारा किया लेकिन ये धीरे–धीरे आगे बढते लगभग 1500 फीट नीचे उतर चुके थे। हम रस्सों के सहारे रैपलिंग करते हुए एक के बाद

एक नीचे उतरने लगे। बाद में हमारे पास दो ही रस्से बचे थे। अब उन्हें बार-बार लगाना और एक सिरे से निकाल कर फिर आगे लगाना और एक सिरे से निकाल कर फिर आगे लगाना पड़ रहा था। अंत में रस्सा खींच कर चंदोला और कीर्ति उतर रहे थे। क्रैम्पोन और जूतों के नीचे बर्फ चिपक जाती थी और आइस एक्स से बार-बार ठोक कर उसे झाड़ना पड़ रहा था। एक-एक कदम संभाल कर रखना पड़ता। ऊपर से एवलांच और पत्थर आने का खतरा भी था। हम मुश्किल से 1000 फीट ही उतर पाए थे। दोपहर का 1 बजे चुका था। नीचे गली संकरी होती जा रही थी और ढीली चट्टानो में पीटान गाडने के लिए जगह ढूढंने में काफी दिक्कत आ रही थी। लता भी कठिनाईयों का मुकाबला बड़ी बहादुरी से कर रही थी। रस्सा कड़ा होने के कारण उसमें सिलवटें आ गई थी जिससे उतरने में बहुत समय बरबाद हो रहा था। 4 बजे के लगभग अनिल, नवीन, गजेन्द्र और प्रेम बहादुर नीचे ल्वा ग्लेशियर में पहुँचते दिखाई दिये। हमने उन्हें रूकने का इशारा किया। हम इस उम्मीद में थे कि नीचे उतर कर टेंट लगे मिले और गर्म चाय पीने को मिले। कुछ देर रूकने के बाद वे हमारी आवाजो की परवाह किये बिना और हमें खतरनाक जगह पर छोड़ कर नीचे की ओर उतरने लगे। अनिल आगे था, शेष पीछे चल रहे थे। हमारे इन साथियों ने आज कायरता की एक मिसाल कायम कर दी। अपने पीछे छूटे साथियों की परवाह किये बिना उन्होंने स्वयं को सुरक्षित करना ही श्रेयस्कर समझा। हमारा चिल्लाना भी व्यर्थ गया। ल्वों गल तक पहुँचते-पहुँचते हमें रात के आठ बज गये। अंतिम 200 फीट आइस थी जिसमें हमें रस्सी छोड़नी पड़ी। अब हमारे पास कोई रस्सी शेष नहीं थी। हम ल्वों गल पर थे, जो बर्फ की दरारों से भरा हुआ था। जल्दी ही एक सुरक्षित जगह जानकर हमने टेंट लगाया और सब उसी में घुस गए। चाय के साथ पिट्ठू टटोलने पर जो कुछ मिला उसे खा कर सो गए। खाने की सामग्री भी आगे जाने वाले साथी ले जा चुके थे। रात भर बर्फ और पत्थरों के लुढ़कने की आवाजें आती रही। हमारे टेंट के पास ही एक बहुत बड़ी दरार थी। रात को बर्फ के खाकर टूटने पर कभी ऐसी गर्जना कि जमीन हिलने लगती। हम थकान से बेहाल थे और जल्दी ही सो गये, ज्यादा आवाजें नहीं सुन सके। अगले दिन डॉ० पांगती ने बताया कि यह रात उनके लिए सबसे डरावनी थी। उन्होंने बताया कि ट्रेल्स पास से तो वे सुरक्षित आ गए लेकिन जीवन का अंत यहाँ न हो जाय ऐसे विचार रातभर उन्हें भयभीत करते रहे।

10 अक्टूबर की सुबह उठे तो अद्‌भुत नजारा था। जहाँ से हम कल उतरे थे, वह गली साफ दिखाई पड़ रही थी। नंदादेवी ईस्ट और लौंगस्टाफ कोल सामने बहुत ऊँचे लग रहे थे। सुनहरी धूप की चादर बिछी हुई थी। चारों तरफ हैंगिग ग्लेशियर, सीरेक्स व बर्फ की दरारें ही दरारें थी। ट्रेल्स पास पार करने की खुशी में हमने एक-दूसरे को बधाईयाँ दी और गले लगाया। यह टीम स्पिरिट ही थी जिसके कारण हम सब खतरों को सफलतापूर्वक पार कर सके थे। चाय पीकर हम बर्फ की दरारों को फांदते हुए नंदादेवी की ओर बाई तरफ बढे। सीरेक्स के नीचे से गुजरते हुए हम नाशापट्टी नाम के स्थान पर पहुँचे, जहाँ एक बड़े मैदान में स्पेनिश नंदादेवी अभियान के सदस्यों से मुलाकात होती है। उन्होंने गर्मजोशी से हमारा स्वागत किया और चाय पिलाई। मेरे पास स्लाइड फिल्म खत्म हो गई थी। उन्होनें वह भी सहर्ष मुझे दी। इस स्थान से एक ओर नंदादेवी पूर्वी शिखर के भव्य दर्शन होते है तो दूसरी ओर मरतोली को उतरते हुए नंदाकोट व कुवेला पर्वत शिखर साथ-साथ दिखाई पड़ते है। आगे हमें मोरेन से होकर जाना पड़ा जिसमें एक सुन्दर कुंड भी था। एक जगह भोतपत्र और जूनिपर की झाड़ियों के ढेर लगे थे जो बर्फ से फिसलकर नीचे आ गए थे। यह क्षेत्र कस्तूरी हिरन के शिकारियों द्वारा बुरी तरह जलाया गया था। आज हम लगभग 30 किमी० चलकर शाम 7 बजे ल्वां गॉव पहुँचे। यहॉ अब एक ही परिवार रहता है। पूरा गॉव खण्डहरों में तब्दील हो चुका है। पानी का स्त्रोत भी दूर है। स्पेनिश दल के पोर्टरो से हमें चावल मिल गये थे। आज 3 दिन बाद चावल और आलू की रसदार सब्जी का जो जायकेदार भोजन किया उसका स्वाद जीवन में कभी विस्मृत नहीं होगा।

### ट्रेल्स पास पार करने वाले सदस्य

1. अनूप साह (टीम लीडर), 2. नवीन तिवारी, 3. सुबोध चंदोला, 4. डा० शेर सिंह पांगती, 4.कुमारी लता जोशी, 5. अनिल बिष्ट, 6. अशरफ अली, 7. असलम अली, 8.गजेन्द्र बोरा, 9. कीर्ति चंद्र तथा 10. प्रेम बहादुर।

### पूरी टीम

अनूप साह (टीम लीडर), नवीन तिवारी, सुबोध चंदोला, डॉ० शेर सिंह पांगती, कु० लता जोशी, अनिल बिष्ट, कीर्ति चंद्र, अशरफ अली, असलम अली, गजेन्द्र बोरा, नीरज कुमार राजेश जोशी, भुवन चंद्र पांडे, श्रीश कपूर, प्रेम बहादुर (पोर्टर) तथा ले. कर्नल जे.सी. जोशी (टेक्निकल एडवाइजर)।

### ट्रेकिंग टीम

डॉ० रघुवीर चंद्र, राजेश साह, किशन लाल साह, राकेश साह, सौमित्र पाठक, सिद्धार्थ साह, कु० प्रियंका साह तथा संदीप सिंह।)

तक क्रम चलता रहा। एडवांस बेस कैम्प सुराखरक में 4100 मी० पर बनाया गया। आधार शिविर से यहाँ तक पहुँचने में 7-8 घण्टे लग रहे थे। बुढ़िया गल से आने वाले नाले में पानी बहुत बढ़ जाता था। पहली बार हम शाम के वक्त उसे पार करने में असमर्थ रहे। लेकिन बाद में हम उस नाले को सुबह के समय पार कर लेते थे। बाद में दिन में एल्यूमिनियम की सीढ़ी की मदद से भी टीम के सदस्यों ने उसे पार किया। 30 सितम्बर को हमारा ट्रेकिंग दल वापस नैनीताल लौट गया। अब टीम में 15 सदस्य व 6 हाई एल्टीट्यूट पोर्टर शेष रह गए थे। हमने बुढ़िया ग्लेशियर के नाले को पार कर काफी चढ़ाई के बाद सुराखरक में अपना पड़ाव डाला। अगले दिन पहली तारीख को सुभाष चंदोला, नवीन तिवारी, अनिल बिश्ट व नीरज कुमार रूट सर्वे के लिए तखता कैम्प की ओर निकले। रास्ता बोल्डरों व स्क्री स्लोप से खड़ी चढ़ाई होकर गुजरता था। मार्ग में ऊपर से पत्थर व हैंगिंग गलों के टूटने का खतरा बना रहता है। शाम तक टीम तखता कैम्प में टेन्ट की जगह तालाश कर वापस सुराखरक लौट आई। सुराखरक कैम्प में रात भर हम पिंडारी ग्लेशियर में सिरेक्स टूटने की आवाजों को सुनते रहे। सुराखरक से पिंडारी गल का बड़ा मनोरम दृश्य दिखाई देता है। कैम्प के ठीक नीचे ट्रेलस के जमाने में बनाई गई सड़क के अवशेष कहीं-कहीं पर अब भी दिखाई पड़ते है।

2 अक्टूबर को हमने सुराखरक से 4560 मी० ऊचाई पर तख्ता कैम्प की ओर प्रस्थान किया। यह नन्दाखाट शिखर की दक्षिण पूर्वी ढलान पर स्थित है। इसका नामकरण 1972 के नन्दाखाट अभियान के दौरान पत्थरों व बर्फ में दबे तख्तों की वजह से किया गया। संभवतः कभी इनका उपयोग बर्फ में दबे तख्तों की वजह से किया गया हो। बर्फ में पड़े रहने के कारण ये जस के तस पड़े हुए थे। हमने दो-एक तख्तों को निकाल कर खड़ा किया ताकि नीचे से आने वाले पर्वतारोहियों को कैम्प की स्थिति का पता चल सके। तख्ता कैम्प में ठंड व लकड़ी के अभाव के कारण गजेन्द्र, अशरफ, कीर्ति व कुछ पोर्टरो को बेस कैम्प भेजना पड़ा ताकि आगे के लिए जरूरी सामान, ताजी सब्जी व रोटियों की व्यवस्था हो सके। अब हमें दुर्गम चढ़ाई से होकर गुजरना था। कैम्प से ट्रेवल करके 800 मी० का राक फेस गली से होता हुआ रिज की तरफ था। रोजाना 12-1 बजे के बाद हिमपात होने लगता, जो शाम तक चलता। शाम को कर्नल जोशी ने

दोनों भरल मृत मिले। द्वाली और आधार शिविर के बीच इन ढ़लानों में भरल ढ़लानों में भरल के अलावा कभी-कभार कस्तूरा मृग, हिम तेंदुआ, थार, भालू जैसे उच्च हिमालयी पशुओं के अतिरिक्त लूंगा, मोनाल, प्यूरा, कोकलाश फीजेन्ट और चेड़ जैसे पक्षियों के भी दर्शन हो जाते है। द्वाली से नीचे के इलाको में घुरल, काकड़, तेंदुआ,सांभर, जंगली सुअर, भालू, रेड फॉक्स आदि जानवर पाए जाते है। कलीज व कोकलाश जैसे पक्षी भी इस क्षेत्र में अच्छी खासी संख्या में है। रास्ते में हमने अखरोट व भोजपत्र के पेड़ो में उगी हुई प्लूरोटस प्रजाति की मशरूम एकत्रित की। यह खाने में बहुत स्वादिष्ट होती है। हमारे कैम्प में नित्य एक सब्जी मशरूम की बनती थी।

अगले दिन हम पिंडर को पार कर छ्यांगुच खरक की ओर बढे। इस दिशा की ओर आने के दो उद्देश्य थे शरीर को ऊँचाई से अनुकूलन कराना और पिंडारी गल के ऊपर ट्रेल्स पास तक जाने का सुगम मार्ग तलाशना। छयांगुच खरक के ऊपर नदीकुण्ड पार करते हुए हम 4880 मी० की ऊँचाई तक जाने में सफल हुए। वहाँ से पिंडारी गल, ट्रेल्स पास, बलजूरी, पवालीद्वार, नंदाखाट, छ्यांगुच, नदाकोट, नंदाभनार तथा लामचीर पर्वतों का अत्यन्त मनोहारी दृष्य दिखाई पड़ता है। पिंडारी गल की तरह से ट्रेल्स पास तक जाना खतरों से खाली न था। रह-रह कर बर्फ की चट्टानों के टूटने की आवाज आ रही थी। इसलिए हमने 1972 के नंदाखाट अभियान का रास्ता लेना ही उचित समझा नंदाखाट की ओर ऊपर चढ़कर फिर गल होते हुए ट्रेल्स पास की ओर जाया जा सकता था। कैम्प में लौटते-लौटते शाम हो चुकी थी।

अगला दिन विश्राम का था और आगे की यात्रा के लिए पोर्टर लोड बनाए जाने थे। दूसरे दिन एडवांस बेस कैम्प के सदस्यों व ट्रेकिंब पार्टी द्वारा लोड फेरी की गई। आगे के दो दिनों

सुझाया कि यदि राक फेस वाले रास्ते से न जा कर सीधे पिंडारी गल के बीच काली चट्टानों को पार कर एक ही दिन में दर्रे तक पहुँचा जा सकता है। अनिल और चंदोला ने यह प्रयास किया जो भयानक खतरों से भरा था। उस दौरान आसपास कई बार गल भी टूटा लेकिन 3-4 घंटे की मशक्कत के बाद उन्हें किसी पूर्व अभियान दल का हैलमेट, टेंट व बोरे में लिपटी कुछ चीजें भी दिखाई दी।

उस मार्ग में रात का भीषण गर्जना के साथ काफी देर तक एक हिमस्खलन होता रहा। हम सभी उसकी आवाज से सहम गए। अतत: हमने लम्बा व अनजान रास्ता पकड़ना ही उचित समझा। लामचीर पर्वत की तरफ एक अमेरिकन, ओ.एस.डी. एडवेंचर अल्मोड़ा का दल भी जाते हुए दिखा। यह दल शिखर के पास तक जाने में सफल रहा था।

दो दिन के कठिन प्रयासों के बाद रिज कैम्प का रास्ता खुल पाया। दिन में हिमपात व ठंड से चट्टानों में कठोर बर्फ जम जाने के कारण रास्ता कठिन व फिसलन भरा हो गया था। पर्वतरोहियों को जुमार की भी आवश्यकता पड़ रही थी अन्यथा रस्सों के सहारे सामान के साथ ऊपर रिज कैम्प का रास्ता खोलने में चंदोला, नवीन व अनिल ने अहम भूमिका निभाई। उस मार्ग को खोलते समय उन्हें पुराने अभियानों के सदस्यों का पीटान व सामान भी मिला। दुर्भाग्यवश नंदाखाट आरोहण करते समय उनके 6 सदस्य हिमस्खलन की चपेट में आकर मौत के मुँह में चले गए थे। अनिल ने बताया कि रिज कैम्प में रात को सपने में एक जापानी उसकी छाती में चढ़ गया और उसकी श्वांस कुछ देर के लिए रूकने सी लगी। किसी तरह उसने अपने को बचाया और उसकी नींद खुल गई। उस कैम्प में वह काफी भयभीत सा रहता था।

पॉच अक्टूबर की सुबह चंदोला, नवीन, कीर्ति और दो कुलियों के साथ रिज कैम्प स्थापित करने निकल पड़े। रॉकफेस पर क्रैम्पॉन की मदद से हमने कैम्प स्थापित किया। डॉ० रघुवीर चंद, नीरज, राजेश और भुवन वापस लौट गये। साथ में 6 में से 5 पोर्टरों ने भी रास्ते की कठिनाईयों को देखते हुए आगे चलने से इंकार कर दिया। दिन में 11 बजे कर्नल जोशी, ध्रीश, लता, अनिल, अशरफ, असलम व पांगती जी रिज कैम्प की ओर बढ़े पर अथाह फिसलन के कारण वे ऊपर नहीं पहुँच सके और किसी तरह रात 11 बजे तखता कैम्प में वापस लौट आए। हमें रात भर नीचे रूके साथियों की चिंता सताती रही। सुबह उठकर रिज कैम्प में आगे जाकर जब दूरबीन से साथियों को सुरक्षित देखा तो तसल्ली हुई। सुबह मैंने एकमात्र पोर्टर के जरिये चिट्ठी लिखकर नीचे संदेश भिजवाया कि आगे और भी दुर्गम रास्ता है।

अत: कर्नल जोशी व ध्रीश की उम्र का खयाल करते हुए वापस लौट जायें और बेस में 3 दिन तक हमारा इंतजार करें और हमारे न लौटने पर यह समझ लें कि हमने दर्रा पार कर लिया है। रिज कैम्प से सीधे गल में उतर कर ट्रेल्स पास की ओर बढ़ना असंम्भव था। मार्ग में बड़ी-बड़ी दरारें थी। हम नंदाखाट की ओर चाँर-पाँच हजार फीट ऊपर की ओर बढ कर गल में उतरते है। चंदोला, कीर्ति और नवीन रूट मार्किंग फलैग दे कर रास्ता बनाने आगे की ओर बढ़ते है।

कुछ चढ़ने के बाद उन्हें नीचे उतरना था। रास्ते में बड़ी-बड़ी दरारें रास्ता रोके हुए थी। कई जगह आधा किमी० का चक्कर काटना पड़ा। जहाँ दरार सॅकरी होती, कूद-कूद कर पार कर जाते। तख्ता कैम्प से आगे अल्यूमिनियम की सीढी ले जाना भी संभव नहीं था। हम बड़ी दुविधा में पड़ गए थे। पोर्टरो क अभाव में हम तय नहीं कर पा रहे थे कि क्या सामान छोड़े और क्या ले जाये। मैंने अपनक निजी सामान में मात्र एक कैमरा और एक लैंस ही रखना उचित समझा। रस्से, कैराबाइनर, पीटान व 4-6 दिन का खाने का सामान, टैन्ट, गैस सिलेंडर आदि रखना ज्यादा जरूरी था। सभी साथियों ने 25-28 किग्रा० सामान बॉधा और करीब 10 बजे हम अगले पड़ाव की ओर बढ़ गये।

# अन्य

# अवध की मछलियाँः एक रोचक खोज

**रमेश सोमवंशी**

ए-336, राजेन्द्रनगर, बरेली, 243 122 (उ.प्र.)

पाठकों क्या आप कभी लखनऊ गये हैं? हां, तो कहीं यह भी पढ़ा या सुना होगा कि 'मुस्काराइये की आप लखनऊ में हैं'। लखनऊ अपने नवाबों, नजाकत व नफासत के लिये दूर-दूर तक जाना जाता था। यह भारत सरकार बनाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभानें वाले प्रांत उत्तर प्रदेश की राजधानी है। अब भारत के अन्य बड़े शहरों की भांति लखनऊ भी हर दिशा में फैल गया है। नये लखनऊ का नज़ारा ही कुछ और है। लखनऊ को नयी पहचान दिलाने में पूर्व मुख्यमंत्री सुश्री मायावती जी के कार्यकाल में बने स्मारकों/भवनों ने चार चांद लगाया है। लखनऊ पधारें और आप हज़रतगंज, अमीनाबाद, चौक, कैसरबाग आदि बाजारों में न जायें व चिकन के वस्त्र आदि न खरीदें ऐसा हो ही नहीं सकता। लखनऊ आयें यहाँ की पुरानी इमारतों, छोटा व बड़ाइमाम बाड़ा का भ्रमण न करें यह भी नहीं हो सकता।

लखनऊ के नवाबों की पुरानी इमारतों व बड़े-बड़े दरवाजों पर एक कलात्मक संरचना लगभग सब कहीं दिखती है- "दो मछलियां"। इमारतों के अन्दर भी कई स्थानों पर ऐसा ही अंकन है। बड़े इमामबाड़े में भी जगह-जगह दो मछलियां अंकित हैं। छोटे इमाम बाड़े में एक 8-10 फिट ऊंचे स्थान पर अति सुन्दर "एक सुनहरी मछली" प्रदर्शित है। उत्तर प्रदेश सरकार के राज्य-चिन्ह में एक धनुष-तीर, 'वाई' आकृति की दो मोटी काली रेखायें व दो मछलियां अंकित हैं। लखनऊवि वविद्यालय के प्रतीक-चिन्ह में भी दो मछलियां अंकित है और तो और उत्तर प्रदेश पुलिस के प्रतीक-चिन्ह में भी दो मछलियां विराजमान हैं। कहते हैं ये रोहू मछलियां हैं। उत्तर प्रदेश के राजाओं की पूर्व रियासतों जैसे रामपुर, बाऊनी, बनारस आदि के राज्य-चिन्ह में 'एक' या 'दो' मछलियां अंकित थीं। प्रश्न है आखिर ये मछलियां अवध के नबाबों से लेकर वर्तमान उत्तर प्रदेश सरकार के राज्य-चिन्ह में कहां से आयीं व इन्हें पूर्व रियासतों व वर्तमान सरकारी संस्थाओं ने क्यों अपनाया। यह अत्यन्त रूचिकर व खोज का विषय था जिस पर प्राप्त ज्ञान आप से साझा कर रहा हूँ।

सन् 1720 में मुगल बादशाह के मुहम्मद शाह ने निसापुर, खुरासान, फारस (ईरान) ने एक साहसी व्यक्ति तथा व्यापारी सआदत खान को अवध व आगरा सूबे का सूबेदार नियुक्त किया। कहते है जब वे नाव से गंगा नदी पार करके अवध जा रहे थे तो उनकी गोद में दो मछलियां आकर गिरीं। इसे शुभ लक्षण माना गया। नवाब सआदत खान ने इन मछलियों को अवध के सूबे के राज्य-चिन्ह में स्थान दिया। उनके बाद नवाब गाजी-ऊद्दीन-हैदर खान व अवध के अंतिम नवाब वाजिद अलीशाह ने इन्हें अपनाये रखा। जब नवाब गाजी-ऊद्दीन-हैदरखान की ताजपोशी हो रही थी तो अवध के अंग्रेज दरबारी कलाकर राबर्ट होम ने जो राज्य-चिन्ह बनाया उसमें दो मछलियों को भी अंकित किया। लखनऊ के नवाबों ने अपनी बनायी इमारतों, दरवाजों, इमामबाड़ों, सोने की मोहरों, चांदी के रूपयों, तांबे के पैसों, अस्त्रों, अन्य वस्तुओं आदि में भी दो मछलियों को अंकित करवाया।

## उत्तर प्रदेश की पूर्व रियासतों एवं सरकारी संस्थाओं के प्रतीक-चिन्हों में मछलियों का अंकन

*मुगल काल के सर्वोच्च सम्मान का प्रतीक 'माही-मुरातिब। इसे बादशाह शाहजहाँ के काल में शुरु किया गया*

*अवध रियासत के झंडे पर एक मछली का चित्रण। यह नवाबगाजी-ऊद्धीन-हैदर शाह (1814-1818) के काल में अपनाया गया*

अवध रियासत (1732-1859) के राज्य-चिन्ह में
दो मछलियों का अंकन

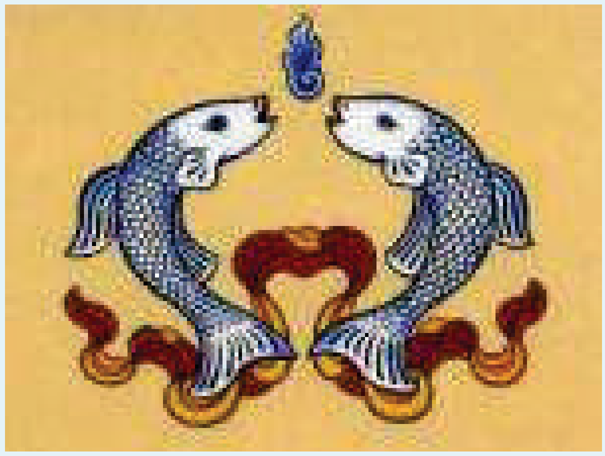

अवध रियासत के राज्य-चिन्ह की दो मछलियां

अवध रियासत के नवाब वाजिद अलीशाह
(1847-1856) के राज्य-चिन्ह में दो जलपरियों का अंकन

रामपुर रियासत (1774-1947)के राज्य-चिन्ह में एक
मछली का अंकन

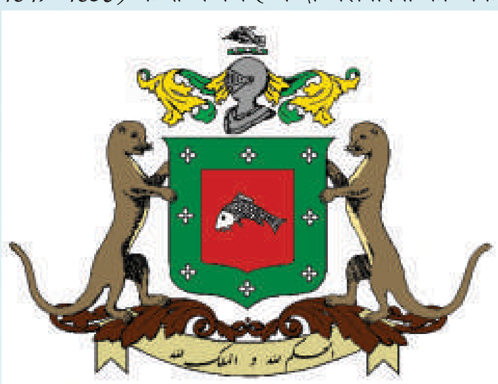

बाऊनी रियासत (1784-1948), बुदेलखण्ड के राज्य-चिन्ह
में एक मछली का अंकन

बनारस रियासत (1740-1948) के राज्य-चिन्ह में दो
मछलियों का अंकन

बनारस रियासत (1740-1948) के राज्य-चिन्ह में
दो मछलियों का अंकन

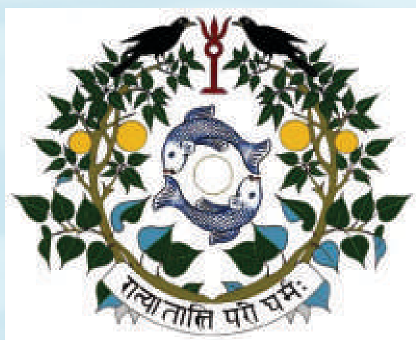

बनारस रियासत (1740 1948) के राज्य-चिन्ह में दो
मछलियों का अंकन

उत्तर प्रदेश सरकार के राज्य-चिन्ह में
दो मछलियों का चित्रण

लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रतीक-चिन्ह में
दो मछलियों का चित्रण

उत्तर प्रदेश पुलिस के प्रतीक-चिन्ह में
दो मछलियों का चित्रण

उत्तर प्रदेश पुलिस के बैज के प्रतीक-चिन्ह में
दो मछलियों का चित्रण

संयुक्त प्रांत (पूर्व उत्तर प्रदेश) की भारतीय सेना के बैज पर
दो मछलियों का चित्रण

भाकृअनुप0-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय,
भीमताल, नैनीताल, उत्तराखण्ड के प्रतीक-चिन्ह
पर एक मछली का चित्रण

## अवध के नवाबों द्वारा जारी सिक्कों में मछलियों का अंकन

मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय (1760–1788)
के नाम अवध में जारी किये गये एक पैसे पर
एक मछली का अंकन

मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय (1760–1788)
के नाम पर अवध के नवाब सआदत अली खान
द्वितीय (1798–1811) द्वारा जारी रूपये पर एक मछली का अंकन

नवाब गाजी–ऊद्धीन–हैदर शाह (1814–1818) की
ताजपोशी के अवसर पर जारी स्वर्ण पदक में
अंकित दो मछलियां

नवाब गाजी–ऊद्धीन–हैदर शाह (1814–1818)
के एक रूपये के सिक्के पर दो मछलियों
का अंकन

नवाब मुहम्मद अली शाह (1837–1842) के तांबे के
फलुस में एक मछली का अंकन

नवाब अमजद अली शाह (1842–1847) के रूपये पर
राज्य–चिन्ह में एक मछली का अंकन

नवाब वाजिद अलीशाह की स्वर्ण अशरफी पर
राज्य–चिन्ह में दो जलपरियों का अंकन

नवाब वाजिद अलीशाह के चांदी के रूपये पर
राज्य–चिन्ह में दो जलपरियों का अंकन

# अवध के नवाबों द्वारा बनवायी गयी इमारतों व राज्य-चिन्हों में मछलियों एवं जलपरियों का अंकन

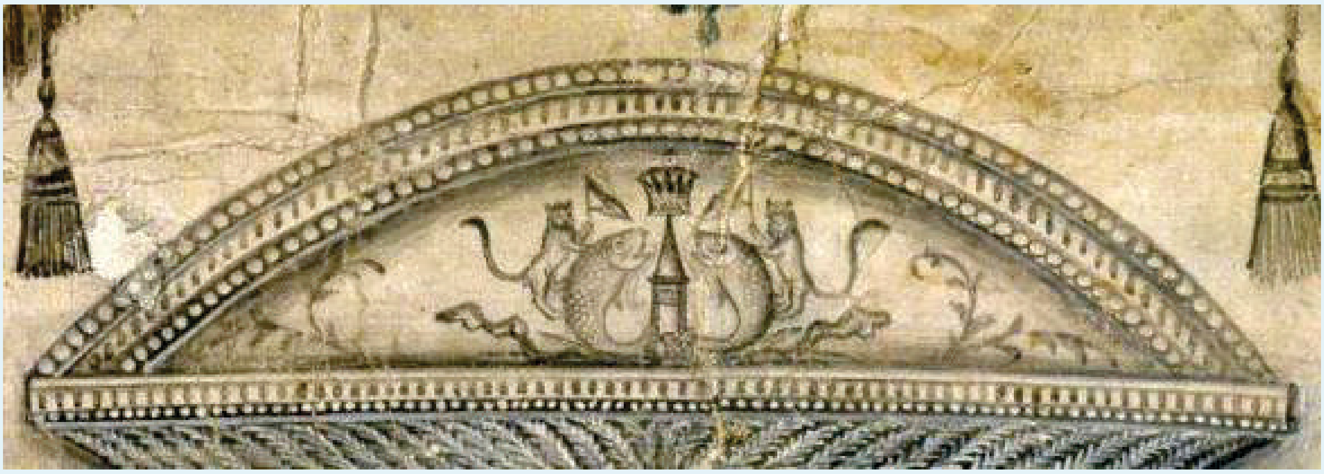

*अवध के नवाब सआदत अली खान-द्वितीय (1798-1814) के राज्य-चिन्ह में दो मछलियों का चित्रण*

*नवाब वाजिद अली शाह कालीन अवध के राज्य-चिन्ह में अंकित दो रंगीन जलपरियां*

*नवाब वाजिद अली शाह कालीन अवध के चांदी के राज्य-चिन्ह में अंकित दो जलपरियां (साभार-माईकल बैकमैन)*

*नवाब वाजिद अली शाह कालीन बड़े अलंकृत कांसे की वास्तुकला पट्टिका (प्लेक) में अवध के राज्य-चिन्ह में अंकित दो जलपरियां (साभार-माईकल बैकमैन)*

*नवाब वाजिद अली शाह कालीन अवध के राज्य-चिन्ह में चित्रित दो जलपरियां व छतर पर एक मछली*

*नवाब वाजिद अली शाह के कैसर बाग महल के लाखी दरवाजे पर अवध के राज्य-चिन्ह में अंकित लकड़ी की दो जलपरियां*

*सिब्तैनाबाद इमामबाड़ा, मटिया बुर्ज, कलकत्ता में अवध के नवाब वाजिद अली शाह के राज्य-चिन्ह में अंकित दो जलपरियां*

*सिब्तैनाबाद इमामबाड़ा, मटिया बुर्ज, कलकत्ता में अवध के नवाब वाजिद अली शाह के राज्य-चिन्ह में अंकित दो जलपरियां*

## रोहूमछली

रोहू या लेबियो रोहिता उत्तरी भारत तथा कुछ अन्य निकटतम देशों की प्रमुख कार्प मछली है। ये भारत की सिन्धु-गंगा नदी जल प्रणाली में पायी जाती हैं। इस मछली में प्रोटीन बहुल्यता, ओमेगा-3 वसीय अम्ल, विटामिन ए, बी व सी प्रर्याप्त मात्रा में होती है। खास बात यह है कि इसमें मरकरी स्तर मध्यम होता है तथा खाने में सुरक्षित होती हैं। ओमेगा-3 वसीय अम्ल ऊर्जा का अपार स्रोत तथा हृदय, फेफड़ों, रक्त वहनियों तथा प्रतिरक्षा तंत्र को वैसे ही रखते है जैसे उन्हें सामान्य होना व कार्य करना चाहिये। रोहू के सेवन से हृदय रोग, गठिया संधि शोथ, अवसादन, दमा आदि रोगों से बचाव व शरीर का विकास होता है। इस मछली को प्रति सप्ताह एक बार अवश्य खाना चाहिये।

### जलपरियां

मरमेडस या जल परियां मत्स्य कन्या, मत्स्य स्त्री आदि नामों से भी जानी जाती हैं।

इनके शरीर का ऊपरी भाग पंखों युक्त या पंख विहीन स्त्री व निचला भाग मछली का होता है। यह एक काल्पनिक प्राणी है जिसका उल्लेख एशिया, यूरोप व अफ्रीका की संस्कृतियों, साहित्य, संगीत नाटिकाओं, कामिक्स, सिनेमा आदि में मिलता है। नवाब वाजिद अली शाह संगीत प्रेमी व कला के संरक्षक थे। अतः उनके काल की इमारतों, राज्य–चिन्हों व सिक्कों में दो मछलियों का स्थान दो जलपरियों ने ले लिया। इन जलपरियों के हाथ में ध्वज या मुरछल चित्रित या अंकित किया गया है। किसी–किसी जलपरियों के मछलियों से भिन्न दो पैर दिखाये गये है जों कि मछली के निचले भाग या पूंछ जैसे दिखाये गये है।

## अवध के नवाबों द्वारा बनवायी गयी इमारतों व राज्य-चिन्हों में मछलियों एवं जलपरियों का अंकन

*बड़ा इमामबाड़ा, लखनऊ की बाहरी दीवार पर अंकित दो मछलियां*

*उपर्युक्त एक मछली का निकटतम बड़ा चित्र*

*बड़ा इमामबाड़ा, लखनऊ की बाहरी दीवार पर अंकित दो भिन्न मछलियां*

*लखनऊ में लगा अवध के नवाबों का प्रतीक–चिन्ह मछली नाम पट्ट। उपर्युक्त एक मछली का निकटतम बड़ा चित्र*

छोटा इमामबाड़ा, लखनऊ का भव्य चित्र।
केन्द्र में प्रदर्शित स्वर्णिम मछली

छोटा इमामबाड़ा, लखनऊ में प्रदर्शित
सुन्दर स्वर्णिम मछली

स्वर्णिम मछली के नीचे दीवार पर प्रदर्शित
अवध के राज-चिन्ह में दो जलपरियां

छोटा इमामबाड़ा (इमामबाड़ा हुसैनाबाद मुबारक)
के निर्माण कर्ता अवध के तीसरे नवाब
मोहम्मद अलीशाह (1837-1842)

छोटा इमामबाड़ा, लखनऊ के नक्कशी कृत स्वर्णिम द्वार
के ऊपरी भाग में प्रदर्शित दो मछलियां

छोटा इमामबाड़ा, लखनऊ के नक्काशीकृत स्वर्णिम
द्वार के निचले भाग में प्रदर्शित दो भव्य मछलियां

*एक कलात्मक स्टैण्ड में आधार में आठ भव्य स्वर्णिम मछलियां*

*नवाबगाजी-ऊद्धीन-हैदर (1814-1818) की तलवार के मुटठे पर अंकित दो मछलियां*

इनमें एक महत्वपूर्ण परिवर्तन नवाब वाजिद अली शाह के समय में यह आया की मछलियों का स्थान जलपरियों (मरमेडस) ने लेलिया। उनके काल के भवनों, सिक्कों, चिकन के वस्त्रों, राज्य-चिन्हों आदि में जलपरियों को अंकित किया गया। उपर्युक्त मछलियों के सम्बन्ध में एक मत यह भी है कि फारस के बादशाह खुशरू परवेज (सन् 591-628) ने एक दंड पर एक नुकीले दांतों वाली डरावनी मछली का स्वर्णिम सिर या धनुश्य से लटकती दो मछलियों का प्रतीक विकसित किया जो कि 'माही-मुरातिब' कहलाया व इसे दिल्ली के मुगल बादशाह तथा अवध के दरबार को प्रेषित किया। ये महाशीर प्रजाति मछलियां की थीं जिसे फारसी में 'महेशेर' कहते हैं जिसका मतलब है मछलियों में शेर। 'माही-मुरातिब' सर्वोच्च सम्मान का प्रतीक है जो कि मुगल बादशाह शाहजहां के काल से प्रारंभ हुआ। इन्हें मुगल भारत में रोहू या लेबियोरोहिता मछली माना जाता था। मुगलों के सर्वोच्च सेना नायकों के पीछे एक दंड पर 'माही-मुरातिब' लेकर चला जाता था। इसे अत्यधिक बहादुरी का प्रतीक माना जाता था। अवध के नवाबों के अतिरिक्त रामपुर के नवाब के राज्य-चिन्ह में एक मछली अंकित है। इसी प्रकार बुदेलखण्ड के कालपी के समीप निजाम वंश की बबानवीं रियासत (बावन गांवों) के राज्य-चिन्ह में भी एक मछली का अंकन है। बनारस राज्य के विभिन्न राजाओं के राज्य-चिन्ह में भी दो मछलियों का अंकन है। विदिशा, मध्यप्रदेश की पूर्व मुस्लिम कायवाही के राज्य-चिन्ह मेंभी एक मछली का चित्रण है। बुद्ध धर्म में द्वि-मछलियों (मत्स्य) का अर्थ कठोरता से स्वतंत्रता तथा जीवन देने वाले जल का गुण माना जाता है। इन्हें भारत की दो नदियों जमुना व सिंधु का प्रतीक भी माना जाता है। पहले ही कहा जा चुका है कि अवध के संदर्भ इन्हें 'माही- मुरातिब' से जोड़ा गया है जो कि सर्वोच्च सम्मान का प्रतीक हैं। इन्हें युवावस्था, बहादुरी, दृढ़ता, शक्ति आदि का प्रतीक भी माना जाता था। इस प्रकार से मुस्लिम तथा हिन्दू दोनो संस्कृतियों में मछलियों को शुभ माना जाता था।

एक बात स्पष्ट है कि मछलियों से हमें पौष्टिक आहार यथा प्रोटीन, ओमेगा-3 वसीय अम्ल, विटामिन ए, बी, व सी बहुल्य मात्रा में मिलती है। मनुष्य ही क्या अनेक जलचर व थलचर वन्य जीव भी इनका भक्षण करके अपना पेट भरते हैं। अत: इन्हें शुभ माना जाता हैं। मैंने अनेक स्थानों पर पढ़ा है कि यदि आप कहीं जा रहे हैं और मछुवारा भैंगी में मछली लेकर जाता दिखे तो यह शुभ माना जाता था। अत: कई एक्वेरियम दुकानों का नाम भी शुभ दर्शन' रखा जाता है। लोग घरों के 'एक्वेरियम' में रंग-बिरंगी, विभिन्न आकृति वाली मछलियां पालते हैं। इन्हें देखने में बच्चों ही क्या बड़ों को भी बहुत आनंद आता है। कई तीर्थ स्थानों के सरोवरों में मछलियां पाली जाती हैं व इन का दर्शन किया जाता एवं चारा खिलाया जाता है। इनका शिकार नहीं किया जाता है। ताजे जल की मछलियों का हमारे आहार, सभ्यता व संस्कृति में बहुत महत्व है। अवध की मछलियां इसी का प्रतिधित्व करती हैं।

शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# संचार माध्यम जागरूकता किसानो की पूँजी

**सत्य प्रकाश**

प्रसार शिक्षा विभाग, डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि., पूसा, समस्तीपुर, बिहार

## किसान का जीवन स्वरुप

किसान का जीवन बहुत कठिन है। वह अपने खेतों में लम्बे समय तक कार्य करता है। वह कठोर मौसम की परवाह किये बिना कार्य करता है। चाहे सर्दी हो या गर्मी या फिर चाहे बारिश ही हो रही हो, उसका ध्यान अपनी फसल में ही लगा रहता है। किसान बहुत गरीब व निर्धन होते हैं तथा अपनी मेहनत के बल पर वे केवल अपना जीवन ही व्यतीत कर पाते हैं। हालांकि कृषि की नवीव तकनीकों ने किसान की बहुत मदद की है, पर इस उपलब्धि का लाभ एक छोटा और निर्धन किसान नहीं उठा पाता है। क्योंकि वह अपने खेतों को उपजाऊ बनाने के लिए पर्याप्त औजार भी नहीं खरीद पाता।

## कृषि के बारे में जागरूकता अहम पहलू

सरकार को आगे बढ़कर कमजोर किसानों की मदद करनी चाहिए। उन्हें कम ब्याज पर ऋण की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए। उन्हें डेयरी उद्योग व खेती करने की नयी-नयी तकनीकों का विशेष ज्ञान दिया जाना चाहिए। उन्हें कम दामों पर उपयुक्त बीज उपलब्ध कराने चाहिए। किसान का काम बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। वह हमारे लिए अनाज, फसल व सब्जियां उगाता है। हमारी बहुत सी औद्योगिक संस्थाएं किसानों पर ही निर्भर करती हैं। भारत गाँवों और किसानों का देश है यहाँ की 65 प्रतिशत जनसंख्या आज भी कृषि कार्य में ही लगी है। इसलिए किसानों की सही देखभाल की जानी आवश्यक है। देश की सुख-शान्ति और धन-सम्पदा किसानों पर ही निर्भर है। अगर किसान ही भूखा और गरीब है तो देश कभी भी सुखी और समृद्ध नहळ हो सकता। उनके बच्चों का भली-भाँती ध्यान रखना चाहिए। गाँवों में अच्छे से अच्छे स्कूलों का निर्माण करवाना चाहिए। शिक्षा को छोटे स्तर पर मुक्त व सभी के लिए अनिवार्य बनाना चाहिए। उनको खुले दिल से छात्रवृत्ति प्रदान करनी चाहिए। हम किसान के बारे में तभी सोचते हैं जब सूखा पड़ता है या अनाज की कमी होती है। वास्तव में भोजन हर व्यक्ति की जरुरत है। कोई भी बिना अन्न के जीवित नहीं रह सकता है। इस प्रकार किसान हमारा अन्नदाता है। इसलिए हम सभी को किसानों का सम्मान करना चाहिए व उसके कार्य को महत्त्व देना चाहिए। वह कठिन परिश्रम, सादगी और सत्यता का उदाहरण है। हमें उसके जीवन से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

## कृषि संचार और तकनीक के बारे में जागरूकता

तकनीक ने इस संसार के स्वरुप को ही नहीं बल्कि मानव जीवन में भी बदलाव किए हैं। आज को भी क्षेत्र तकनीकी से अछूता नहीं है। इनमें कृषि एक ऐसा क्षेत्र है जिस पर पूरा मानव जीवन चक्र निर्भर करता है और इसमें तकनीक का अहम योगदान है। न तकनीकों के चलते देश की कृषि ने न राह पकड़ी है। देश की कृषि तकनीकी, कृषि मशीनरी, खाद्य एवं उर्वरक, सिंचाई और बाजार व्यवस्था पर निर्भर करती है क्योंकि किसान खेत तैयार करने से लेकर उत्पाद को बेचने तक तकनीकी का ही इस्तेमाल करता है। देश की जीडीपी में कृषि क्षेत्र की 15 प्रतिशत से अधिक की हिस्सेदारी है। यदि कृषि तकनीकी के क्षेत्रों की बात करें तो देश में कृषि मशीनरी उद्योग की हिस्सेदारी लगभग 60 प्रतिशत है जिसमें हर साल वृद्धि हो रही है। इस क्षेत्र को निम्न भागों ट्रैक्टर, रोटावेटर, थ्रेशर और पॉवर टिलर में बांटा गया है। फार्म मशीनरी की तकनीकों में पिछले एक दशक में काफी बदलाव आए हैं। रोटावेटर, सीडड्रिल मशीन, लैंड लेवलर, ड्राइवर लैस ट्रैक्टर, प्लान्टर और हार्वेस्टर जैसी कुछ तकनीक आ हैं जिन्होंने कृषि की परिभाषा को बदल दिया।

2022 तक भारत का फार्म मशीनरी क्षेत्र 6.6 सीएजीआर वृद्धि दर से रुपए 769.2 बिलियन तक पहुंच जाएगा। इसमें सबसे ज्यादा हिस्सेदारी ट्रैक्टर इंडस्ट्री की है। वहीं कृषि रसायन और उर्वरक तकनीक के जरिए किसानों की फसल पैदावार में वृद्धि होती है जिसमें कृषि रसायन और उर्वरक क्षेत्र का बहुत बड़ा योगदान है। देश में हर साल 32.4 मिलियन टन उर्वरक का उत्पादन होता है। वहीं कृषि रसायनों को बनाने के लिए भी न तकनीकों का इस्तेमाल किया जा रहा है। वैश्विक बाजार में भारत की हिस्सेदारी 10 प्रतिशत है जबकि घरेलू बाजार में बड़े स्तर पर कृषि रसायनों का इस्तेमाल हो रहा है। कृषि रसायन तकनीक से फसल पैदावार में बढ़ोत्तरी हुई है जिससे किसानों को लाभ भी मिला है। कृषि रसायनों के इस्तेमाल में भारत का चौथा स्थान है। अग्रणी तीन देशों अमेरिका, जापान और चीन की तुलना में भारत में 0.6 किग्रा प्रति हैक्टेयर की दर से कृषि रसायनों और उर्वरकों का इस्तेमाल होता है। वहीं अमेरिका में 5-6 किग्रा/ हैक्टेयर और जापान में 11-12 किग्रा प्रति हैक्टेयर की दर से इस्तेमाल होता है। भारत में 60 प्रतिशत कीटनाशक, 18 प्रतिशत फफूंदी नाशक, 16

प्रतिशत खरपतवार नाशक, 3 प्रतिशत बायोपेस्टिसाइड और अन्य फसल सुरक्षा उत्पाद इस्तेमाल होते हैं। फसल सुरक्षा के लिए कृषि रसायनों के साथ-साथ बायो उत्पाद और जैविक उत्पादों का इस्तेमाल भी किसानों के बीच काफी बढ़ा है।

### कृषि सिंचाई तकनीकों के बारे में जागरूकता

कृषि सिंचाई तकनीकों में भी काफी बदलाव हुए हैं। अब किसान टपक सिंचाई और सूक्ष्म बूंद सिंचाई जैसी तकनीक को अपना रहे हैं। कृषि सिंचाई की इन तकनीकों से पैदावार में बढ़ोत्तरी, पानी का सही मात्रा में उपयोग और पौधों को संतुलित रूप से पोषक तत्वों की पूर्ती करने जैसे लाभ किसानों को मिल रहे हैं। फिलहाल भारत में यह इंडस्ट्री 3.78 बिलियन डॉलर का कारोबार कर रही है। साल 2022 तक 11.60 सीएजीआर की वृद्धि दर से यह बढ़कर 6.54 बिलियन डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। कृषि फसलों के बीज व्यापार में भी तकनीकी के चलते बदलाव आए हैं। जो किसान पहले देशी किस्म के बीजों से कम पैदावार लेते थे आज वे किसान हाइब्रिड बीज से अधिक पैदावार ले रहे हैं। सरकार ने कृषि बाजारों को भी तकनीकी से जोड़ते हुए कृषि मंडियों को ऑनलाइन कर दिया है। इसी के साथ कुछ निजी क्षेत्र की कंपनियों ने इस पर काम करना शुरू किया। ये कंपनियां ऐसी तकनीक विकसित कर रही हैं जिनसे किसानों को उत्पाद का सही मूल्य, कृषि सलाह, मंडीकरण, मौसम की जानकारी, ऑनलाइन कृषि उत्पाद बेचना और खरीदना जैसी सुविधा मिल सकेगी। एक किसान आसानी से घर बैठे कृषि से जुड़ी अधिकतर जानकारी अपने फोन पर पा लेता है।

यह आधुनिक तकनीक के जरिए ही संभव हो पाया है। इसमें को संदेह नहीं है कि आधुनिक तकनीकों के चलते कृषि क्षेत्र में बड़े बदलाव हुए। इसका सीधा फायदा कृषि क्षेत्र से जुड़े हर एक व्यक्ति को मिला है लेकिन अभी भी कृषि की नवीन तकनीक से बहुत से किसान वंचित हैं। यदि आधुनिक कृषि तकनीकों को सही से किसानों तक पहुंचाया जाए तो इससे बड़ा फायदा हो सकता है और किसानों की आय में वृद्धि संभव है। यह को परिकल्पना नहीं बल्कि एक हकीकत हो सकती है।भारत की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले कृषि क्षेत्र में हो रहे इस नए प्रयोग को बेहतरीन तरीके से प्रभावी बनाने की दिशा में निरंतर प्रयास हो रहा है। किसानों को सूचनाओं से लैस कर, उनमें खेती के प्रति ललक पैदा करने और जो किसान खेती से जुड़े हैं, उन्हें अधिक लाभ दिलाने की दिशा में ई-खेती बेहद महत्वपूर्ण है। केंद्र सरकार की ओर से भी मशीनों से की जाने वाली खेती को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। लोकसभा में एक सवाल के जवाब में कृषि और खाद्य प्रसंस्करण राज्य मंत्री हरीश रावत ने जानकारी दी कि कृषि मंत्रालय केन्द्रीय क्षेत्र की विभिन्न योजनाओं के जरिए खेती के मशीनीकरण को प्रोत्साहन दे रहा है। इन योजनाओं में कृषि का व्यापक प्रबंध, राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय कृषि विकास योजना शामिल हैं। इसके अलावा इन योजनाओं से हितधारकों को मशीनीकरण के बारे में जागरूक बनाना और समुचित कृषि मशीनों और उपकरणों की खरीद के लिए किसानों और अन्य लाभार्थियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना शामिल है। इसी के तहत कृषि विभाग की ओर से किसानों के लिए ऐसी व्यवस्था बना गई है कि वे किसी भी स्थान से फोन करके कृषि संबंधी जानकारी ले सकते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की ओर से बनाई गई वेबसाइट के जरिए भी किसानों की कृषि से संबंधित सूचनाओं और जानकारियों को एक कोष के रूप में सहेजा गया है। एक औसत के मुताबिक, भारतीय कृषि की वैश्विक उपस्थिति को दर्शाते हुए करीब 166 देशों से प्रति माह 2 लाख से ज्यादा लोग इस साइट से जानकारी हासिल करते हैं। कृषि -संसाधनों से संबंधित संकाय, राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली (एनएआरएस) की 2900 से ज्यादा पत्रिकाओं और 124 पुस्तकालयों की पहुंच के लिए नि:शुल्क ऑनलाइन सुविधा प्रदान कर रहा है। इससे इस बात का संकेत मिलता है कि भारत भविष्य में ई-खेती की ओर तेजी से बढ़ रहा है।

### कृषि और संचार प्रौद्योगिकी के बारे में जागरूकता

#### इंटरनेट मंच, सोशल नेटवर्किंग और ऑनलाइन ज्ञान के आधार

दुनिया में को भी व्यवसाय इंटरनेट और संबंधित संचार प्रौद्योगिकियों (मोबाइल कंप्यूटिंग, ई-कॉमर्स इत्यादि) के आगमन और वैश्विक पहुंच से लाभान्वित हुआ है। कृषि अलग नहळ है। दुनिया भर में फैले किसानों, कृषि वैज्ञानिकों और अन्य विशेषज्ञों से जुड़ने के लिए इंटरनेट की शक्ति का उपयोग करने की कल्पना आज साकार रूप लेती दिख रही है। इंटरनेट पर कई मंच और सोशल नेटवर्किंग साइटें हैं जहां किसान अन्य किसानों और कृषि विशेषज्ञों के साथ जुड़ सकते हैं और जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। इसके अलावा कृषकों के लिए सीखने के कई भंडार हैं जो विभिन्न प्रकार के कृषि विषयों पर जानकारी प्रदान करते हैं। ये रास्ते ग्रामीण डिजिटल डिवाइड को उपयोग करने,

सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित करने और कृषि मूल्य श्रृंखला में सभी हित धारकों से जुड़ते हैं। उदाहरण के लिए, एक किसान आसानी से एक कृषि उद्यमी से संपर्क कर सकता है और विचारों या व्यावसायिक प्रस्तावों का आदान-प्रदान शुरू कर सकता है। दुनिया के किसी भी भाग में अनाज और पशुधन, कीट संबंधी जानकारी, वास्तविक समय की मौसम की जानकारी (वर्षा, तापमान, आर्द्रता, सौरविकिरण, हवा की गति, मिटट्ी की नमी और मिटट्ी का तापमान) की कीमत की समीक्षा जैसे कि किसी के उंगलियों पर सचमुच उपलब्ध है। ऐसा सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से समभाव हुआ है।

## डिजिटल कृषि की आवश्यकता और लक्ष्य

वर्तमान कृषि सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी), जैव प्रौद्योगिकी (बीटी), पर्यावरण प्रौद्योगिकी (ईटी), और नैनो प्रौद्योगिकी (एनटी) जैसी प्रौद्योगिकियों के साथ मिल गई है। (हवांग, 2002, पृष्ठ 12-2) और यह मुख्य रूप से उत्पादन स्तर के दौरान लागत में कमी, श्रम बोझ में कमी, उच्च गुणवत्ता और जैविक उत्पादन, और सुविधा में गुणवत्ता प्रबंधन जैसे क्षेत्रों पर केंद्रित है। दूसरा, एक प्रणाली के निर्माण के माध्यम से उत्पादन और वितरण चरणों में उपभोक्ताओं की जरूरतों को पूरा करना महत्वपूर्ण है, जो खाद्य सुरक्षा सूचना प्रदान करता है। आईटी लागू करके, जो डिजिटल कृषि का हिस्सा है, इसे पशुधन और नियंत्रित विकास पर्यावरण निगरानी और नियंत्रण प्रणाली के साथ उत्पादन चरण में हासिल किया जा सकता है। इसका मतलब है, कृषि खेती स्वचालन प्रणाली में आईटी अनुप्रयोगों का विस्तार किया जाना चाहिए। इसके अलावा, वितरण और प्रसंस्करण चरणों में, आईटी का उपयोग कर उन्नत वितरण प्रौद्योगिकियों को वितरण डेटा के अभिसरण समेत पेश करने की आवश्यकता है। ये डिजिटल कृषि प्रणाली के बहुत छोटे हिस्से हैं जो पूरे कृषि तंत्र का बड़ा डेटा बेस बनाने का हिस्सा हैं।

## ई-कृषि

कृषि पद्धतियों के एक उभरते हुए क्षेत्र, ई-कृषि, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, स्थायी कृषि विकास और खाद्य सुरक्षा मानकों के लिए मौजूदा सूचना और संचार प्रौद्योगिकियों (आईसीटी) का उपयोग करने के लिए नवीनतरी के और सर्वोत्तम अभ्यासों के साथ आने पर केंद्रित है। ई-कृषि में कृषि संबंधी सूचना विज्ञान, कृषि विकास और व्यवसाय जैसे अन्य संबंधित तकनीकी क्षेत्र भी शामिल हैं। इसका उद्देश्य किसानों के सशक्तिकरण और खाद्य मूल्य श्रृंखला में साझेदारी को सुदृढ़ करने के लिए सभी उपलब्ध प्रौद्योगिकियों (कम्प्यूटर, मोबाइल कंप्यूटिंग, उपग्रह प्रणाली, स्मार्टकार्ड) को तैनात करना है। डेटाबेस सॉफ्टवेयर और रेडियो फ्रीक्वेंसी पहचान टैग का उपयोग करने वाले पशुधन प्रबंधन और ट्रैकिंग प्रौद्योगिकों की भी समीक्षा की जाती है।

कृषि में कंप्यूटरों के उपयोग में कुछ वास्तविक बाधाएं होती हैं जैसे हार्डवेयर और सॉफ्टवेयर अवसंरचना, प्रशिक्षण और कौशल और शोध प्राथमिकताओं की कमी। हालांकि, इन्हें खत्म करने के बाद, कंप्यूटर का उपयोग पिछले स्वचालन और सॉफ्टवेयर अनुप्रयोग से चल जाता है। ई-कृषि को न केवल संयुक्त राज्य में, बल्कि दुनिया के अन्य विकासशील और उभरती हु अर्थव्यवस्थाओं में भी समृद्धि लाने के लिए महत्वपूर्ण माना जा सकता है। खेती, रोपण, निषेचन, कीट नियंत्रण और कटा की सटीकता में सुधार होने पर एक खेती के संचालन में फसलों का अधिक उत्पादन हो सकता है। यह स्वाभाविक रूप से तर्कसंगत लग सकता है, लेकिन सुधार प्रक्रिया से निपटना कृषि उपकरण डिजाइनरों के साथ-साथ कंप्यूटर एप्लिकेशन डेवलपर्स के लिए एक जटिल चुनौती है। इसे विभिन्न प्रकार के कृषि उपकरणों के लिए कंप्यूटर, इंटरनेट नेटवर्क, जीपीएस, जीआईएस, और प्रोग्राम करने योग्य नियंत्रण और सेंसर जैसी कई नई प्रौद्योगिकियों के अनुकूलन की भी आवश्यकता है।

शीतजल मात्स्यकी अनुसंधान निदेशालय
Directorate of Coldwater Fisheries Research

# शरीर के अंगो के समानांतर बनावट के खाद्य खाऐं स्वस्थ रहें

**ममता तिवारी**

मानव संसाधन विकास कृषि विश्वविद्यालय, कोटा

स्वास्थ्य की दृष्टि से शरीर को आगे के समानान्तर दिखाई देने वाले फल एवं सब्जियाँ कुदरत की अनमोल देन है जोकि पौष्टिकत और स्वाद से भरपूर है। प्रकृति प्रदत्त खाद्य न केवल शरीर के विभिन्न अंगो के लिए फायदेमंद है, बल्कि रूचिकर बात यह है कि जिन खाद्यों के आन्तरिक बाहरी आकार व बनावट हमारे शरीर के जिन अंगो जैसे है वो उसी अंग के लिए विशेष फायदेमंद है। अत: उत्तम स्वस्थ्य के लिए इनका सेवन अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

## स्ट्राबेरी

स्ट्राबेरी का अन्दरूनी भाग दातों के आकार का होता है अत: यह दाँतो के लिए विशेष लाभप्रद है, नियमित रूप से स्ट्राबेरी खाने से दातो को सफेद करने मे मदद मिलती है। स्ट्राबेरी मे मौलिक  एसिड होता है जो दाँतो के एनामेल को सफेद करने में मदद करता है। यह एक हाईकर्बोक्सिल अम्ल है। फलों में खट्‌टापन इसी अम्ल के कारण होता है। स्ट्रबेरी वजन कम करने मे सहायक है क्योंकि यह लो कैलोरी फल स्ट्राबेरी मे एंटीऑक्सीडेंट गुण है, स्ट्राबेरी ह्रदय संबधी समस्याओं से बचा सकती है और ह्रदय को स्वस्थ्य बनाए रखने मे मदद करती है। ह्रदय को स्वस्थ्य बनाए रखने के लिए सप्ताह मे तीन बार स्ट्राबेरी खाना लाभकारी है, तथा यह हड्डियो की मजबूती हेतु उपयोगी है।

## सेलरी

इसे आमतौर पर अजवाइन कहते हैं। इसके लंबे, दुबले डंठल हड्डियो की तरह ही दिखते है अत: यह हड्डियो की मजबूती के लिए फायदेमंद है, सेलरी सिलिकॉन का एक बडा स्त्रोत है। जो हड्डियो को उनकी ताकत देता है। इसके साथ ही यह पाचन और कब्ज की समस्या दूर करती है तथा ह्रदय रोग डायबिटीज व किडनी एवं लिवर की बीमारियों के लिए भी लाभदाय है।

## मशरूम

यह कान के बाहरी हिस्से को बनाने वाली सभी कार्टिलेज तथा नन्ही-नन्ही हक्रियो के आकार का होता है जो कानों को ध्वनि प्राप्त करने मे मदद करती है, जब मशरूम को काटा जाता है वह कानो की तरह दिखते है। मशरूम विटामिन डी युक्त होते है जो हक्रियो को मजबूत और अत्यधिक कार्य करने मे मदद करते है। स्वस्थ कान की हड्डियो के बिना, सुनने की क्षमता मे कमी हो जाती है। म ारूम मे एंटीऑक्सीडेंट भरपूर मात्रा मे पाया जाता है,यह बढती उम्र के लक्षणों को कम करने और वजन घटाने मे भी सहायक होता है तथा म ारूम विटामिन डी का भी अच्छा स्त्रोत है,यह हडिड्यों की मजबूती के लिए भी जरूरी होता है।

### एवोकाडो

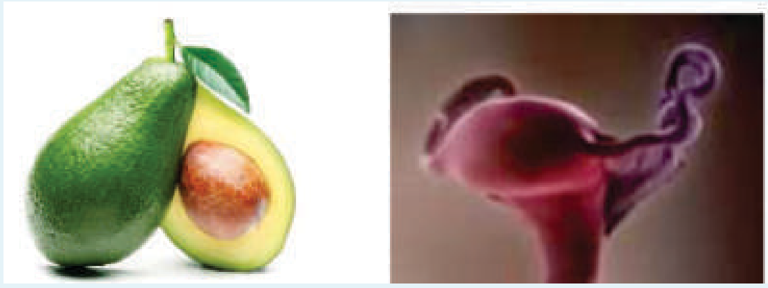

एवोकाडो का आकार गर्भाशय जैसा दिखता है, अत: यह प्रजनन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है। एवोकाडो फोलिक एसिड का अच्छा स्त्रोत है। एवोकाडो हृदय रोग, आर्थ्रइटिस कैंसर आदि की रोकथाम में सहायक है तथा लिवर को मजबूती भी देता है।

### टमाटर

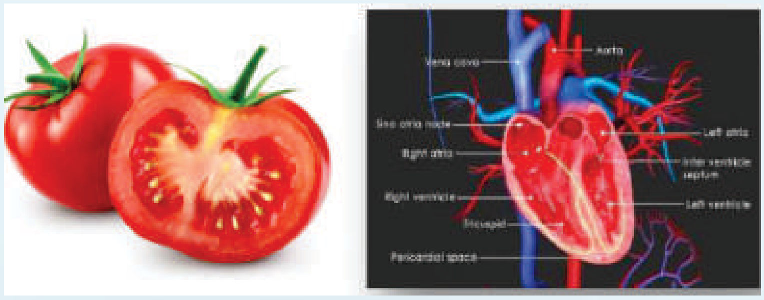

यह न केवल शरीर मे विटामिन A की आवश्यकता को पूरा करता है बल्कि यह कई बीमारियों से लड़ने मे सहायता करता है। इसका आन्तरिक आकार हमारे हृदय के सामान होता है। अत: यह हृदय के लिए विशेष फायदेमंद है।

### गाजर

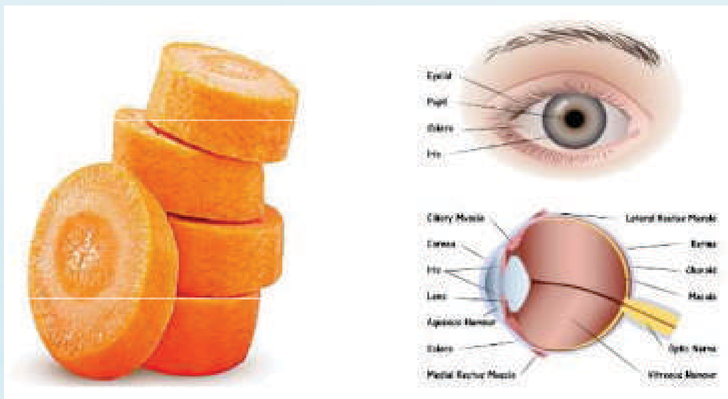

गाजर का आन्तरिक आकार हमारी आँख के समान होता है इसलिए यह आँखो की रोशनी के लिए फायदेमंद है। एक कटोरी कसी हुई गाजर में 25-किलो कैलरी ऊर्जा, कार्बोज-6 ग्राम, प्रोटीन-1 ग्राम, विटामिन ।. 210%, विटामिन C-6% एकेल्सीयम -2% लोहतत्व-2% बीटाकेरोटीन-विटामिन K पोटेशियम, फोलेट, मैग्नीज, फास्फोरस, मैग्नेशियम विटामिन- E व जिंक आदि प्रचुर मात्रा मे मिलते है।

### अंगूर

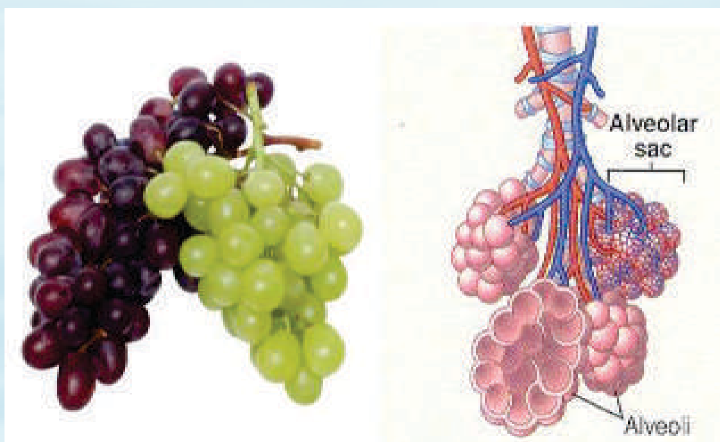


इसका आकार हृदय व फेफड़े के सामान होता है तथा यह हृदय व फेफड़े के लिए सबसे अधिक लाभप्रद है। 100 ग्राम अंगूर में 69 किलो कैलोरी, 0.3 ग्राम, प्रोटीन, वसा 1.4 रेशा, 2.9 मिलीग्राम विटामिन C, 10 माइक्रोग्राम फोलेट पाया जाता है। अंगूर में 70% तक जल की उपलब्धता होने से यह शरीर मे पानी की कमी नहीं होने देता है। इसमे एण्टीआक्सीडेन्ट-ल्यूटीन, जीक्सक्थीन, फोइटोकेमीकल्स मीरीटीनव क्वेरेसीटीन पाये जाते है। विश्व मे लाल, हरे, बैगनी रंग के अंगूर पाये जाते है जिनका जैम, जैली, स्क्वैश व ज्यूस बनाया जाता है। इसका प्रयोग वाइन व किशमिश बनाने में किया जाता है। काले रंग के अंगूर से स्मूदी बनाई जाती है बेहतर स्वास्थ्य के लिए इसके विभिन्न उत्पाद बनाकर खाये जा सकते है।

## प्याज

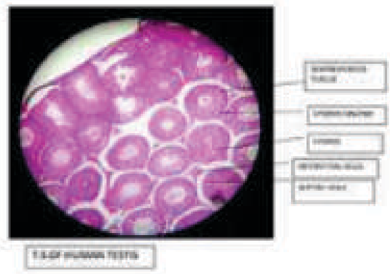

प्याज की आन्तरिक संरचना शरीर की कोशिकाओं जैसी होती है। अत: यह शरीर की कोशिकाओं को स्वस्थ रखने में सहायक है। 100 ग्राम प्याज मे 40 किलो कैलोरी ऊर्जा 9.3 ग्राम कार्बोज 1.7 ग्राम रेशा, 1.1 ग्राम प्रोटीन पाया जाता है।

## पनीर

दूध में अम्लीयता (नीबू या साइट्रिक एसिड) की मात्रा को बढ़ाकर पनीर बनाया जाता है। 100 ग्राम पनीर मे 408 किलो कैलोरी ऊर्जा, 21 ग्राम वसा,1 20 ग्राम फारफोरस व 84 ग्राम पोटेशियम, 2.1 ग्राम रेशे,10 ग्राम प्रोटीन होता है। इसकी सूक्ष्म संरचना हमारी हडिड्यों को सबसे अधिक लाभ पहुचाती है।

## ब्रोकली

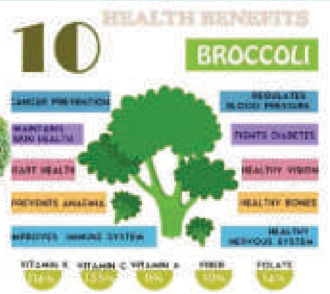


इसका आकार हमारे फेफड़ो के समान होता है ब्रोकली खाने के कई फायदे होते है। यह गहरी हरी सब्जी, ब्रेसिक्का, फेमली की है, जिसमें पत्तागोभी और फूल गोभी भी शामिल होती है। ब्रोकली को पकाकर या कच्चा भी खाया जा सकता है, लेकिन अगर इसे उबालकर खाएंगे तो अधिक फायदा होगा। इस हरी सब्जी मे लोहा, प्रोटीन, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, क्रोमियम, विटामिन ए और सी पाया जाता हैजो सब्जी को पौष्टिक बनाता है। इसके अलावा इसमें फाइटोकेमिकल्स और एंटीआक्सीडेंट भी होते है,जो बीमारी और इंफेक्शन से लडने मे सहायक होते है।

## अखरोट

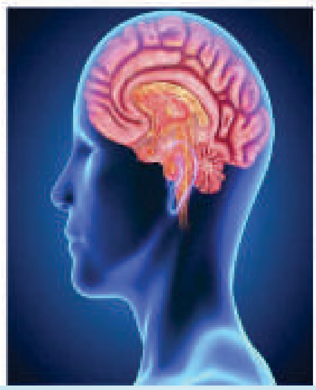

इसका आकार हमारे मस्तिष्क के अन्दरूनी हिस्से जैसा होता है। अत: यह मस्तिष्क के लिए सबसे अधिक फायदेमंद है। यह स्मरण शक्ति को बढाता है। 100 ग्राम अखरोट में 618 किलो कैलरी, वसा-59 ग्राम, रेशे 6.8 ग्राम, प्रोटीन 24 ग्राम, कैल्शियम 61 किलोग्राम, फास्फोरस 513 मिलीग्राम,पोटेशियम 523 मिलीग्राम, जिंक 3.37 मिलीग्राम पाये जाते है।

## शंकरकंद

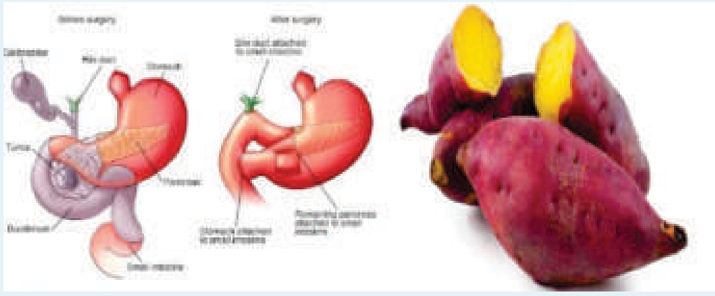

शकरकंद पेन्क्रियाज के आकार की होती है, इसलिए यह सबसे ज्यादा पेन्क्रियाज की कार्यक्षता बढाने मे सहायक होती है। यह इन्सुलिन की कमी नहीं होने देती है। अतः यह डायबीटिज में फायदेमंद है। इसका नियमित सेवन ब्लड शुगर को कम करता है। कैन्सर, दिल की बीमारी और हृदय की समस्या को कम करता है। शकरकंद में आयरन, फोलेट, कॉपर, मैगनीशियम, विटामिन्स आदि होते है, जिससे इम्यून सिस्टम मजबूत बनाता है। इसको खाने से त्वचा मे चमक आती है और चेहरे मे जल्दीं झुर्रिया नही पड़ती।

## अदरक

अदरक का आकार पेट की संरचना की भांति होता है। अतः यह पेट के विकार दूर करने मे सहायक होती है। अदरक आयुर्वेदिक महा औषधि अदरक मे शरीर के लिए आवश्यक सभी पोषक तत्व विद्यमान होते है। ताजा अदरक मे 8% पानी, 2.5% रेशे और 13% कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। अदरक मे आयरन, कैल्शियम, आयोडीन, क्लोरीन व विटामिन सहित कई पोशक तत्व विद्यमान होते है। अदरक को ताजा और सूखा दोनो ही प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है। अदरक एक मजबूत एन्टीवायरल होती है।

## राजमा

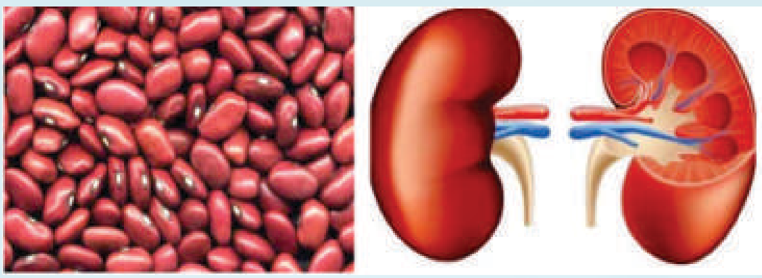

राजमा का आकार किडनी की भांति होता है। इसीलिए यह किडनी के लिए विशेष रूप से फायदेमंद है। राजमा मे रेशे की मात्रा अधिक होती है। यह शरीर मे कोलेस्ट्रांल के स्तर को कम करता है। इसके अतिरिक्त राजमा में प्रोटीन, की अच्छी मात्रा होती है।

# जल की रानी से मत्स्य उद्योग तक

एन.एन. पाण्डेय
भाकृअनुपरि–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

यूँ तो प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में मछली का प्रादुर्भाव वाल्यावस्था के उन मधुर प्रारम्भिक दिवसों से ही हो जाता है, जबकि वह माता की मधुरवाणी में 'मछली जल की रानी है,' 'जीवन उसका पानी है' मधुर शब्दों की लोरी को एक कविता के रुप में सुनता है। इस अवस्था में उसे इन शब्दों की मधुरता के अलावा मछली से जुड़े रहस्यों का कोई बोध नही होता। साहित्य की दृष्टि से मछली को कई नामों से जाना जाता है, जैसे–मीन, मत्स्य, झश, शफर या फिर जल जीवन इत्यादि।

हिन्दू पौराणिक कथाओं के अनुसार सृष्टि के पालक भगवान विष्णु के प्रथम अवतार के रुप में मत्स्यावतार का वर्णन आता है। मछली के रुप में अवतार लेकर भगवान विष्णु ने एक कृषि को सब प्रकार के जीव जन्तु एकत्रित करने को कहा और पृथ्वी जब जल में डूब रही थी, तब मत्स्य अवतार में भगवान ने उस कृषि की नाव की रक्षा की। इसके बाद ब्रह्मा ने पुनः सृष्टि की संरचना की। एक अन्य मान्यता के अनुसार एक राक्षस ने जब ज्ञान साहित्य वेदों को चुराकर सागर की अथाह गहराई में छुपा दिया, तब भगवान विष्णु ने मछली का रुप धारण करके उस साहित्य को पुनः प्राप्त किया। हिन्दू मान्यता के अनुसार 'ऊँ मतस्याय मनुकल्पाय नमः' मंत्र उच्चारण प्राकृतिक आपदा से सुरक्षा के लिए किया जाता है। प्राचीन भारत के इतिहास में राजा शान्तनु की दूसरी पत्नी निशाद कन्या सत्यवती को मत्स्यगंधा से सम्बोधित किया गया है। ज्योतिस शास्त्र में उल्लेखित बारह राशियों में से एक राशि का उल्लेख मीन राशि के रुप में किया गया है। हिन्दी वर्णमाला के 57 अक्षरों में हम सभी को 'म' की पहचान मछली से कराई गई है।

किसी सुन्दरी के नेत्रों की उपमा 'मीनाक्षी' या फिर उसकी चंचलता की उपमा मछली से की जाती रही है। वैसे तो मांसाहार का सेवन पूजा पाठ में वर्जित माना गया है। मगर क्षेत्रीय परम्परा के अनुसार बिहार के मिथलांचल सहित पूर्वांचल तथा नेपाल के कुछ क्षेत्रों में संतान की खुशहाली और लंबी आयु के लिए जितिया का व्रत किया जाता है जोकि प्रतिवर्ष अश्विन माह में कृष्ण पक्ष की अष्टमी तिथि को मनाया जाता है। इस व्रत की शुरुआत महिलाएं मछली खाकर करती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ क्षेत्रों में विवाह सम्बन्ध हेतु वधु पक्ष से वर के परिवार को मछली की सौगात भेजकर रिश्ता पक्का होने की पुष्टि की जाती है। पारम्परिक मान्यताओं में मछली को हमेशा शुभ संकेत के रुप में स्वीकार किया जाता रहा है। उत्तर प्रदेश प्रान्त के राजकीय चिन्ह में भी मछली को स्थान दिया गया है।

प्राचीन सभ्यता मे भी मछली का विभिन्न रुपों में सम्बन्ध रहा है। मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा की सभ्यता के अवशेषों में भी मछली की आकृति का प्रतीक मिलता है जो कि प्राचीन समय में मछली की उपयोगिता का परिचय है। समय–समय पर देसी एवं विदेशी सिक्कों पर मछली की मूरत छपती रही है। मुगल सम्राट जाहगीर ने पाँच सौ वर्ष पहले स्वर्ण मुद्राओं में मछली का अंकन कराया था। भारत के अतिरिक्त फिलीपिन्स, चीन, सिंगापुर, कनाड़ा, अमीरात, ओमान, संयुक्त अरब, आईसलैंड तथा अन्य अफ्रीकी देशों ने भी मछली अंकित सिक्के जारी किये हैं। भारत सरकार ने मत्स्य उद्योग को बढ़ावा देने की दृष्टि से सन् 1983 में 20 पैसे के सिक्कें तथा सन् 1986 में पचास पैसे के सिक्के पर मछली पकड़ते मछुआरे का अंकन किया है। पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के संदर्भ में भी मछली एक महत्वपूर्ण घटक के रुप में है। जलीय पर्यावरण को सन्तुलित रखने में मछली की महत्वपूर्ण भूमिका है। वैज्ञानिक दृष्टि से माना जाता है कि जिस

पानी में मछली नहीं है उस पानी की जल जैविक स्थिति सामान्य नही होती। वैज्ञानिकों द्वारा मछली को जलीय पारिस्थितिकी तन्त्र में बायोंइंडीकेटर माना गया है। विभिन्न जल स्रोतों में पानी एवं मछली एक दूसरे से काफी जुड़े हुए हैं। जैव विविधता संरक्षण की दृष्टि से भारत सरकार ने सन् 1993 में जारी दो रुपये के सिक्के पर मछली का भी अंकन किया, जोकि जलीय पारिस्थितिकी संरक्षण का सूचक है।

मछली एक उच्चकोटि का खाद्य पदार्थ है। भारत की लगभग 56% आबादी मछली खाती है। कुछ राज्यों में, जैसे-पश्चिम बंगाल, उड़ीसा, बिहार, केरल या समुन्द्र तटीय क्षेत्रों में 90% से अधिक लोग मछली खाना पसन्द करते हैं। मछलियों में लगभग 70 से 80% पानी रहता है, तथा 13 से 22% प्रोटीन, 1 से 3.5% खनिज पदार्थ एवं 0.5 से 20 प्रतिशत चर्बी पायी जाती है। मछली का आहार अत्यन्त सुपाच्य, पौष्टिकता से भरपूर तथा शरीर की रोगरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक होता है। कैल्शियम पोटेशियम, फास्फोरस, लोहा, सल्फर, मैग्नीज, तांबा जस्ता, आयोडिन जैसे खनिज पदार्थों के अलावा राइबोप्लोविन, नियासिन, पेन्टोथेनिक एसिड़, बायोटिन, थाइमिन, विटामिन बी-12, बी-6 जैसे विटामिन भी मछली में रहते हैं। मछली एक सन्तुलित आहार है। मछली की वसा में अन-सेंचुरेटेडफैट तथा ओमेगा-3 फैटी एसिड विद्यमान है। अतः मछली का सेवन उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करने के साथ-साथ हृदय रोग से बचाव, त्वचा एवं बालों को सदाबहार बनाने में सहायक, अवसाद को कम करने में सहायक तथा दृष्टि क्षमता को बढ़ाने में भी सहायक है। भारत में लगभग 2.02 मिलियन वर्ग किमी० समुन्द्री क्षेत्र, 0. 372 मिलियन वर्ग किमी० शेल्फ क्षेत्र तथा 8000 किमी० लम्बाई की तटरेखा का आंकलन किया गया है। इस ईईजेड़ पर प्रभुत्व अधिकार के साथ भारत का इस क्षेत्र के जीवंत संसाधनों का संरक्षण, विकास एवं उपलब्ध सम्पति का विवेकपूर्ण दोहन का उत्तरदायित्व भी है। लगभग 3.77 मिलियन समुद्री मछुआरों की संख्या है, जिसमें लगभग 0.93 मिलियन सक्रिय मछुआरें हैं। लगभग 0.52 मिलियन मछुआरे मछली पकड़ने तथा सम्बन्धित अन्य गतिविधियों में लगे हैं, जिसका लगभग 69% महिलाएं हैं। देश के अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी संसाधनों में 2,01,493 किमी० लम्बाई में विभिन्न सरिता तंत्र तथा उनकी सहायक नदियाँ नहरें हैं, तथा 3.52 मिलियन हे० क्षेत्रफल में लघु तथा बड़े जलाशय, 1.2 मिलियन हे० में बाढ़ पल्वित क्षेत्र हैं। अतः अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी के लिए नदियों एवं नहरों के अतिरिक्त लगभग 8.24 मिलियन जलक्षेत्र उपलब्ध है। इसके सापेक्ष अन्तर्स्थलीय मात्स्यिकी के अन्तर्गत देश में लगभग 24.29 मिलियन मछुआरों की संख्या है।

मात्स्यिकी सेक्टर वैश्विक पर्यावरण की ओर अग्रसर है। वैश्विक परिदृष्य में भारत की अद्‌भुत मत्स्य विविधता एक बहुरंगी छवि के रुप में देश के मिलियन लोगों की प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रुप के आजीविका का मुख्य आधार है। प्रारम्भिक पचास के दशक से निरन्तर विकास करते हुए वर्तमान में 14.16 मिलियन मैटिक टन (2020-21) उत्पादन प्राप्त करके चीन तथा इण्डोनेशिया के बाद भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा मत्स्य उत्पादक देश है। विगत तीन दशकों में देश की एक्वाकल्चर उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है जिससे की भारत विश्व में मत्स्य पालन उत्पादन के क्षेत्र में दूसरा बड़ा देश है। देश के लगभग 28 मिलियन मछुआरों तथा मत्स्य पालकों को जोकि देश की जनसंख्या का लगभग 2. 04 प्रतिशत है आजीविका प्रदान करते हुए, यह सेक्टर रोजगार प्राप्ति, खाद्य एवं पोषण सुरक्षा तथा विदेशी मुद्रा उपार्जन में अत्यन्त महत्वपूर्ण है जोकि विशेषतः महिला एवं युवा वर्ग के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इस सेक्टर का वर्तमान मूल्य दर के अनुसार कुल सकल मूल प्राप्ति (जीबीए) रु० 2,12915 करोड़ रही है जोकि देश के कुल जीडीपी का लगभग 1.12 प्रतिशत तथा कृषि क्षेत्र के कुल जीवीए का लगभग 7.28 प्रतिशत

आंकलन किया गया है। इस अवधि के दौरान लगभग 13.92 लाख टन समुन्द्री उत्पादको के निर्यात से लगभग 46,589 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा की प्राप्ति की गई है। इस सेक्टर की अनुमानित वार्षिक वृद्धि दर 10.87 प्रतिशत रही है, जोकि राष्ट्रीय आर्थिकी वृद्धि दर 7.16 प्रतिशत से अधिक है। अलंकारिक मत्स्य अपेक्षाकृत छोटा लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय मत्स्य उघोग का एक सक्रिय अंश है। एक्वेरियम रखना एक अत्यधिक लोकप्रिय रुची है, और अलंकारिक मछलियों का वैश्विक व्यापार 18–20 मिलियन अमेरिकी डालर का है। विविध जैविक संसाधनों के चलते भारत में अनेक किस्मों की व्यापारिक महत्व की एवं प्रभावकारी अलंकारिक मत्स्य संसाधन उपलब्ध है। इसमें लगभग 374 मीठे पानी की प्रजातियाँ एवं 300 समुद्र की प्रजातियाँ अलंकारिक मत्स्यिकी के लिए उपयोगी है। अलंकारिक मछलियों का घरेलु बाजार 500 करोड रूपयों का अनुमानित है। और यह कुछ ही राज्यों के शामिल क्षेत्रों जैसे–पश्चिमी बंगाल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, उत्तर पूर्वी राज्य एवं द्वीप समूह में स्थित है।

हर्ष का विषय है कि भारत सरकार ने मात्स्यिकी के क्षेत्र में पृथक मंत्रालय की व्यवस्था की है। भारत का मत्स्य उद्योग 5 ट्रिलियन यूएस डालर आर्थिकी के लिए प्रयासरत है। वैश्विक एवं आर्थिक महत्व को देखते हुए, शिक्षा के क्षेत्र में भी देश के विभिन्न प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों द्वारा मात्स्थिकी विज्ञान में उच्च स्तर पर शिक्षा एवं शोध किया जा रहा है। मात्स्यिकी विषय में व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त करके बहुत से लोगों ने मत्स्य वैज्ञानिक तथा शिक्षक के रुप में पद प्रतिष्ठा प्राप्त की है। बाल्यावस्था के प्रारम्भिक दिनों में जल की रानी की लोरी, तत्पश्चात् प्रारम्भिक शिक्षा में 'म' से मछली तथा मछली की करी तथा पकोड़ों के रुप में उत्तम स्वादिष्ट भोजन खाकर कालेज शिक्षा में प्रवेश करते ही इस अद्‌भुत प्रकृति की धरोहर जीव के तमाम रहस्यों से परिचय हुआ तथा पौराणिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक महत्व की जानकारी के साथ ही समझ में आया कि देश के आर्थिक विकास में मत्स्य उद्योग की अहम भूमिका है। जन मानस के लिए खाद्य सुरक्षा पोषण सुरक्षा, रोजगार प्राप्ति के लिए यह सूक्ष्म जलीय प्राणी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। साथ ही यह सूक्ष्म जलीय प्राणी मानव जीवन के प्रत्येक पहलु से जुड़ा है। इस प्रकार मछली तथा मछली का जीवन सरलता, बहुरंगी क्षवि, कल्याण, सौम्यता, बलिदान, पर्यावरण स्थिरता, पौष्टिकता तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास का रहस्यतम सूचक है। हम सब मिलकर मात्स्यिकी संरक्षण तथा उपलब्ध मत्स्य सम्पदा के विवेकपूर्ण उपयोग में अपना योगदान दे सकते हैं।

# अतीत के झरोखे से.........

**अजय रावत**
नैनीताल, उत्तराखण्ड

मानसखण्ड मे नैनीताल का उल्लेख 'त्रिऋषि सरोवर' के नाम से हुआ है। तीन कृषि–आत्रि पुलस्त्य एवं पुलह–तीर्थयात्रा करते हुए यहाँ पहुचे और पानी न मिलने पर उन्होने अपनी दैवी शक्तियों से पवित्र मानसरोवर के जल का सिंचन कर उसे 'नैनी सरोवर' का रुप दिया। यह स्थल इतना पावन हो गया कि सर्पदेव नाम करकोटक ने यह आदेश दे दिया था कि यहाँ सर्प के काटने पर किसी व्यक्ति की मृत्यु नही होगी। जनता के लिए समग्र नैनीताल मन्दिर के रुप में उभर कर आया था, इसीलिए प्राचीन समय में लोग पवित्र स्नान कर जूते आदि खोलकर ही नैनीताल में प्रवेश करते थे।

नैनीताल की धार्मिक आस्था का दूसरा पहलू है उसका 64 शक्ति पीठों में से एक होना। जब शिव भार्या सती को पिता दक्ष प्रजापति द्वारा अपने पति का अपमान सहन न हुआ और उन्होंने वहीं अग्निकुण्ड में प्रवेश कर लिया तो शंकर भगवान सती के निर्जीव शरीर को लेकर समस्त लोको में भटकने लगे, जिससे सृष्टि का सन्तुलन बिगड़ने लगा। तब सृष्टि पालक भगवान विष्णु ने संसार की सुरक्षा हेतु अपने सुदर्शन चक्र से देवी के निर्जीव शरीर को शनै:-शनै: काटना प्रारम्भ किया। जिस भी स्थान पर देवी के शरीर के कटे अंग गिरते गए वही पर एक–एक शक्ति पीठ स्थापित होता गया। यहाँ पर सती का बायाँ 'नयन' गिरा और इस प्रकार नैनीताल नाम का आविर्भाव हुआ। नैनी सरोवर का आकार भी नयन जैसा ही है।

## ब्रिटिश आधिपत्य

सन् 1815 में ब्रिटिश हाथों में कुमाऊँ एवं गढ़वाल की सत्ता आ चुकी थी। गार्डनर कुमाऊँ के कमिश्नर नियुक्त किए गए किन्तु वे अधिक समय तक इस पद पर नहीं रहे। उनके तुरन्त बाद ही उनके सहायक ट्रेल कमिश्नर के पद पर आसीन हुए जोकि अत्यधिक संवेदनशील होने के साथ ही पर्वतीय संस्कृति व धार्मिक आस्थाओं के पोषक एवं यहाँ के लोगों के हितैषी रहे। ट्रैल पहले विदेशी थे जो सर्वप्रथम नैनीताल पहुँचे। नैनीताल की ख्याति कालान्तर में बिट्रिश यात्रियों तक पहुँची और इन यात्रियों में अग्रणी रहे बैरन। 'नैनीताल' नामक पुस्तक के लेखक जे० एम० ने लिखा है कि बैरन सन् 1841 में नैनीताल के भ्रमण में थे जिसका विस्तृत विवरण तत्कालीन समाचार पत्र 'इंगलिश मैन' तथा 'आगरा अखबार' में मिलता है। क्ले ने सन् 1928 में प्रकाशित अपनी रचना में 'नैनी सरोवर' की कमनीयता व सौन्दर्य का अप्रतिम वर्णन किया है।

बैरन जब दुबारा नैनीताल पहुँचे तो कुमाऊँ के कमिश्नर लूसिंगटन ने स्वयं के लिए एक भवन का निर्माण प्रारम्भ कर लिया था जोकि आज का मल्लीताल है। बैरन ने अपने लिए एक इमारत की जिसका नाम पिलग्रिम लौज है जोकि आज के नैनीताल क्लब के समीपस्थ है। अपने नैसर्गिक सौन्दर्य स्वास्थ्य वर्द्धक वातावरण आदि के कारण नैनीताल के लिए आकर्षण का केन्द्र बनता चला गया। सन् 1847 में इसने पूर्ण पर्वतीय स्थल ले लिया, जहाँ 40 भवनों का निर्माण हो चुका था। मार्च से अगस्त के मध्य 26 यात्री भमण कर चुके थे, 61 यात्री ग्रीष्म काल में आ चुके थे। 3 अक्टूबर 1850 को नैनीताल पालिका का गठन किया गया। उत्तरी–पश्चिमी प्रान्त में इस नगर पालिका का दूसरा स्थान था। इस स्थान का नगरीकरण करने के लिए शासन ने अल्मोड़ा के धनिक साह से नैनीताल में भूमि इस शर्त पर दी कि वे यहाँ पर भवनों का निर्माण करेंगें। सन् क्रान्ति के समय नैनीताल सर्वाधिक अनुशासित व सुरक्षित स्थल के रुप में उभर के आया। यद्यपि क्रान्तिकारियों को फाँसी की सजा स्थानीय हौक्सडेल स्टेट में दी जाती थी। वह स्थान आज फाँसी गधेरे के नाम से जाना जाता है। सन् 1862 में यह नगर उत्तरी–प्रान्त का ग्रीष्मकालीन केन्द्र स्थल बन गया। यहाँ मनोरंजन के लिए क्लब, नृत्यशालाऐं गृह, बाजार, सैक्रेटेरियेट आदि की स्थापना हुई। 1857 की क्रान्ति से भयातुर ब्रिटिश ने अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए नैनीताल को सर्वोत्तम सुरक्षित स्थान माना यह नगर शिक्षा का केन्द्र भी बन गया।

## शिक्षा का केन्द्र

जुलाई सन् 1867 में स्थापित शेरवुड कालेज नैनीताल के सबसे प्राचीन विद्यालयों में से एक है, इससे पूर्व यहाँ हम्फ्री हाईस्कूल की स्थापना हो चुकी थी जो आज सी०आर०ए०एस० टी० कालेज नाम से प्रसिद्ध है। शेरवुड की स्थापना का श्रेय डाक्टर कौनडोन, एच०एस० रीड मिलमैन, डी०डी० तथा कु० ब्रेडबरी को जाता है। जुलाई, सन् 1869 में औलसेन्ट्स की स्थापना हुई। सन् 1878 में मदर सेलीसिया एवं उनकी आठ

सहयोगिनियों के अथक प्रयासो से सेन्ट मेरी कानवेन्ट की स्थापना हुई। अप्रैल 1877 में डाक्टर वौग के प्रयत्नों से स्मिथ विद्यालय की स्थापना हुई जो कालान्तर में जुलाई 1947 को बिड़ला विद्या मन्दिर के रुप में हस्तान्तरित हुआ। सन् 1882 में वैलेजली गर्ल्स स्कूल के निर्माण की योजना व क्रियान्वित हुई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् दानवीर दानसिंह बिष्ट ने इस विद्यालय को खरीद कर डी०एस०बी० कालेज बनाया। आज यह कुमाऊँ विश्वविद्यालय के डी०एस०बी० परिसर के नाम से प्रख्यात है। 22 अप्रैल 1892 में ब्रदर फेबियन, ब्रदर स्टीफेन, ब्रटर बेग मोलोनी व ब्रदर ल्यूक राइस ने सेन्ट जोसेफ कालेज की रुपरेखा तैयार की।

## पर्यटन केन्द्र

समय चक्र के बदलते-बदलते शनैः शनैः नैनीताल का विकास एक परिभ्रमण केन्द्र के रुप में भी होने लगा। विश्व विख्यात जिम कार्बेट की माँ मेरी जेन प्रथम महिला थी जिन्होने ग्रीष्म काल में घर किराए पर लगाए। इसके फलस्वरुप नैनीताल में होटल उद्योग विकसित होता गया। सम्भ्वतः ग्रैण्ड होटल यहाँ का प्रथम होटल था जिसका निर्माण टिम मुरे ने सन् 1870 से 1872 की मध्यावधि में 'मेयो होटल' के रुप मे किया, फिर इसका नाम 'एलबियन होटल' पड़ा। सन् 1898 में 'मुरे एण्ड को' के स्वामित्व में 'ग्रैण्ड होटल' पड़ा।

नैनीताल व्यापार का केन्द्र भी बन गया, क्योंकि धार्मिक स्थल होने के कारण यात्रीगण यहाँ आने लगे। हिमालय तथा गढ़वाल के तीर्थयात्री तथा सुदूर पर्वतीय अंचलों से लोग अपनी जरुरतों का सामान खरीदने यहाँ आते थे। सन् 1889 में काठगोदाम तक रेल लाइन बनने, से सन् 1889 में 'नैनीताल जिले' की रचना, सन् 1905 में ईस्टर्न कमान्ड के हैडक्वाटर बनने से तथा सन् 1915 में काठगोदाम-नैनीताल मोटर मार्ग के निर्माण ने नगर के व्यापारिक पहलू पर चार चाँद लगा दिए। इस नगरीय विकास से अन्य सहयोगी क्रिया-कलापों जैसे खेल, पालदार नावों का चलन एवं थियेटर का आविर्भाव भी हुआ।

## जिम खाना

सन् 1883 में ब्रिटिश लोगों ने खेल प्रेमियों के लिए 'जिम खाने' की स्थापना की और इसके साथ ही सन् 1890 में हाकी की टूर्नामैन्ट, सन् 1899 मे फुटबॉल की टूर्नामैन्ट प्रारम्भ हो गई। महाराजा बलरामपुर ने 'कोलविन क्रिकेट क्लब' की स्थापना कर उसे अपना बर्चस्व प्रदान कर दिया और क्रिकेट का खेल भी प्रारम्भ हो गया। अंग्रेज लोग 'पोलो' के खेल के सर्वाधिक शौकीन थे। सप्ताह में चार दिन प्लैट में यह खेल खेला जाता था। दो टूर्नामैन्ट वर्ष में होती थी- एक जून में 'रानीखेत सप्ताह' को मनाने के लिए जिसमें रानीखेत, बरेली व लखनऊ की फौजी टीमें भाग लेती थी। दूसरी प्रतियोगिता शरद काल में आई थी। सन् 1935 में कुछ अपरिहार्य कारणों से यह खेल बन्द हो गया एवं 'डिस्ट्रिक्ट स्पोर्ट्स एसोशियेशन' का उद्‌भव हुआ जिसे यू०पी० स्पोर्ट्स कन्ट्रोल बोर्ड द्वारा मान्यता प्रदान की गई। सन् 1956 में सरकार तथा नैनीताल नगरपालिका ने यहाँ एक स्टेडियम के निर्माण की पेशकश की जिसके परिणामस्वरुप मई 1959 में भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद के द्वारा स्टेडियम का शिलान्यास करवाया गया, जो सन् 1963-64 तक पूर्ण हुआ।
सच्चे अर्थो में सरोवर के नैसर्गिक सौन्दर्य से आबद्व प्लैट्स नैनीताल नगर की आत्मा है। वर्श भर विभिन्न खेलों की अनेकानेक प्रतियोगिताएँ होती रहती है। विशेश रुप से हॉकी तथा बॉक्सिंग के लिए तो नैनीताल राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक विख्यात है। कार्टून, सैयद अली तथा राजेन्द्र सिंह रावत हॉकी खेलने के लिए ओलम्पिकस के लिए तथा सुरेन्द्र सिंह विष्ट, नरेन्द्र सिंह बिष्ट तथा ललित साह ने भारत का प्रतिनिधित्व किया। बॉक्सिंग में भी नैनीताल के बालको ने एशियाई स्तर तक अपने झण्डे गाड़े। इन समग्र प्रदर्शनों का समस्त श्रेय जिम खाने के व्यवस्थापकों यथा-स्व० हरिनन्दन पांडे, एल०एम० गंगा प्रसाद साह, इन्द्रलाल साह, मुखर्जी निर्वाण, स्वर्गीय पी०डी० पन्त, महिपाल सिंह नेगी डिस्ट्रिक्ट स्पोर्ट्स एसोसियेशन के वर्तमान सचिव घनश्याम लाल साह को जाता है।

## यॉट क्लब

बैरन ने नैनी सरोवर में नौका बिहार के लिए नावों की पेशकश की थी। इन को साकार करने के लिए सन् 1910 में 'नैनीताल यॉट क्लब' की स्थापना हुई जिस रेसिंग एसोशियेशन ने मान्यता प्रदान की। इस क्लब के प्रथम कमोडोर मैलकम हेली थे। 1951 में राजा हरीचन्द राजसिंह प्रथम भारतीय थे जो इस क्लब के रेयर कोमोडोर बने। 1957 में राजकुमार गिरिराज सिंह कोमोडोर बने, जो कि प्रथम भारतीय इस पद के लिए हुए। भारत के प्राचीनतम रेलिंग क्लबों में नैनीताल यॉट क्लब तीसरी नम्बर पर आता है। में क्लब के सदस्यों को ही पालदार नौकाओं को चलाने का अधिकार था किन्तु वर्तमान में उत्तर प्रदेश सरकार एवं नगरपालिका नैनीताल के सौजन्य से सैलानियों को भी उक्त नौकाओं की अनुमति प्राप्त हो गई है।

## थियेटर

क्ले ने अपनी पुस्तक में लिखा था कि हिमालय की तलहटी में अनेक रंगमंच हुये है। शिमला के बाद नैनीताल का ही स्थान है। सन् 1921 तक कैपीटोल सिनेमा के मात्र एक ही रंगशाला उपलब्ध थी। प्रकाश की व्यवस्था मिट्टी तेल के लैम्पों से की जाती है। तब भी सन् 1910 में 'द वाइल्डरनैस' सन् 1911 में 'द लिटिल मेड्स' सन् 1913 आरकेडियन्स' आदि नाटकों का मंचन किया गया। सन् 1921 में शैले हौल में एक स्टेज गया जो आज के दिन नैनीताल का श्रेष्ठतम स्टेज एवं हौल माना जाता है। अब तक का मंचन व्यक्तिगत रुप से ही होता था। अत: इनके लिए नाटक समितियों की अपेक्षा की जाने लगी। फलस्वरुप प्रथम विश्वयुद्ध की अवधि में 'नैनीताल वौर एन्टरटेनमेन्ट कमेटी का गठन हुआ। सन् 1923 में इस कमेटी का नवीनीकरण कर 'एमेच्योर ड्रैमेटिक सोसाइटी का नाम दिया गया। इसके साथ ही नैनीताल में संगीत औपेराओं की धूम मच गई। और सलीवन ने सन् 1922 में ISolanthe, Patience, 1923 'The Yeomen of the Guaro 1924 में The Mikado, 1925 में The Pirate of Penzance तथा 1926-27 में The Gond संगीत औपरा अत्यधिक लोकप्रसिद्ध हुए। सन् 1950 से शैक्सपीरियन कम्पनी ने सेन्टर कौलेज में अनवरत रुप से आना प्रारम्भ कर दिया, जिन्होने 'हेमलेट' हेनरी v, मर्चेन्ट वेनिस नामक नाटकों का मंचन किया।

## हिन्दी थियेटर

नैनीताल में हिन्दी नाटकों का शुभारम्भ बंग निवासियों द्वारा हुआ। ग्रीष्मकालीन राजधानी के कारण हर ग्रीष्म काल में सचिवालय नैनीताल नगर में स्थानान्तरित किया जाता था। सचिवालय में बंगाली क्लर्को का बाहुल्य था जो कि स्वभाव से ही कलाप्रेमी होते हैं। इन्होंने 1884 में अमेच्योर ड्रैमेटिक क्लब की स्थापना की। इससे प्रेरित होकर स्थानीय लोगों ने 1908 में इन्डियन क्लब तथा सन् 1910 में 'फैन्ड्स अमेच्योर ड्रैमेटिक क्लब' की स्थापना तथा 'अर्जुन' 'अभिमन्यु' तथा 'महाभारत' जैसी पौराणिक कथाओं का मंचन किया।

समय ने करवट ली और 'हरिद्वार पार्टी' 'जनसेवक सभा' युवक मंडली तल्लीताल न्यू अमेच्योर क्लब आदि भी इसी दौरान स्थापित हुए। इनके द्वारा अभिनित नाटकों में पारसी का प्रभाव परिलक्षित होता है तथा आगा हश्र कश्मीरी, बेताब, जेबा तथा राधेश्याम द्वारा नाटक खेले गए। इस बीच वौकी टौकी सिनेमा की लोकप्रियता से नाटकों की दुनियाँ एक धक्का सा लगा किन्तु नैनीताल में नाटक शैली को जीवित रखने का श्रेय सन् 1933 से 1937 तक हैप्पी क्लब को जाता है। तदपश्चात् सन् 1938 से शारदा संघ ने नाटकों को जीवन का उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लिया। इस नाटक क्लब का पूर्व नाम भिक्का क्लब था। जिसके प्रथम अध्यक्ष बंसीलाल भिक्का थे। उन्होंने भिक्का और केस्ट्रा की भी नींव डाली। शनै:-शनै: नाटको की विधा अनेक सोपान चढ़ते हुए विकसित होती चली गई। एक और भारतीय कलाकारों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद शैले हौल में अपनी कला की अभिव्यक्ति के स्वर्णिम अवसर मिले तो दूसरी ओर नाटक प्रतियोगिताऐं प्रारम्भ हो गई जिससे नाटकों का चहुँमुखी विकास हुआ।

सन् 1951 में शरदोत्सव के उपलक्ष्य में शारदा संघ ने नैनीताल नगरपालिका के सौजन्य से पहली बार एक नाटक प्रतियोगिता का आयोजन किया जिसमें कुल छ: नाटक संघों ने भाग लिया था, जिसमें युनाइटेड आर्टिस्ट अल्मोड़ा द्वारा अभिनित नाटक 'चौराहे की आत्मा को प्रथम पुरस्कार मिला था- नाटक का निर्देशन बृजेन्द्र लाल साह ने तथा संगीत स्व० मोहन उप्रेती ने किया था। इन दोनों कलाकारों की ख्याति कालान्तर में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँची। सन् 1952 से 1962 तक हर वर्ष नाटक प्रतियोगिताऐं शैले हौल में सम्पन्न होती थीं और राष्ट्रीय स्तर के कलाकारों ने शरदोत्सव में होने वाली प्रतियोगिताओं में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। इस बीच कई स्थानीय कलाकारों ने दिल्ली, लखनऊ, इलाहाबाद, ग्वालियर में आयोजित प्रतियोगिताओं में भाग लिया और विजयी होकर नैनीताल का नाम रोशन किया। इन उपलब्धियों के एक प्रतीक थे स्व० बृज मोहन जो नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा, नई दिल्ली में अनेक वर्षो तक प्रोफेसर रहे।

सन् 1962 से 1975 तक नैनीताल मे थियेटर अपनी पतन के कगार पर रहा। किन्तु सन् 1975 में 'युगमंच' नामक नाट्य संस्था के जन्म से थियेटर को पुनर्जीवन मिला। धर्मवीर भारती द्वारा रचित 'अन्धा युग' का निर्देशन स्वर्गीय लेनिन पन्त तथा गिरीश तिवाड़ी द्वारा किया गया। युगमंच का यह प्रथम प्रयास बहुत सराहनीय रहा। युगमंच ने नैनीताल निवासियों को 'इन्टीमेट थियेटर' से भी परिचित कराया और 'मैन वीदाउट शैडोज' भारतेन्दु के नाटक नगरी, गिरीश तिवारी के नाटक 'नगाडे खामोश हैं, तथा ब्रेख्ट के नाटक' खडिया घेरा सफल मंचन किया। 'युगमंच' के कलाकार ललित तिवाड़ी ने सन् 1977 में नेशनल स्कूल ऑफ ड्रामा में प्रवेश लिया और इस समय वे टेलीविजन तथा चित्रपट दोनों के प्रसिद्ध कलाकार है। इस प्रकार विकास मेहरोत्राा, नीरज साह, ईशान त्रिवेदी, राजीव कटियार, निर्मल पाण्डे, सुदर्शन जुयाल राजेश साह, इदरीश मलिक आदि

भी चित्रपट और टेलीविजन दोनों में प्रसिद्दि प्राप्त की और अपना स्थान बनाया है। निर्मल पाण्डे ने तो चित्रपट में कई अन्तर्राश्ट्रीय पुरस्कार भी प्राप्त किए हैं। युगमंच का उत्तरदायित्व इस समय जहूर आलम वहन कर रहे हैं और प्रसन्नता की बात यह है कि इस समय नैनीताल में युगमंच के अलावा 'आयाम मंच' 'एकाय' और 'तराना' जैसे नाट्य क्लब भी थियेटर को अपना योगदान दे रहे हैं।

## महत्वपूर्ण भवन

नैनीताल की सबसे प्राचीनतम इमारत तब के निर्जन स्थान पर निर्मित 'सेन्ट जॉन चर्च हैं, जिसकी संस्तुति कलकत्ता के बिषप डैनियल विल्सन ने सन् 1844 में दी थी। 1846 में इसकी नींव पड़ी। 15000 रुपये की लागत से कैप्टेन यंग ने इसका ढांचा तैयार किया था। 2 अप्रैल 1848 को अपूर्ण होते हुए भी यह जनता के लिए खोल दिया गया। सन् 1856 में सरकार ने इसे सार्वजनिक इमारत के रुप में अपने अधिकृत कर लिया। इसका अपेक्षित विस्तार हुआ। इसमें अनेक स्मारक भी बनाए गए, जिसमें दो इस्मारक यथा स्थित हैं। 1880 के भूस्खलन के मृतकों एवं प्रथम विश्वयुद्ध (1914–18) में सारे गए सैनिकों तथा भारत सिविल सिर्विस के लोगों के थे।

दूसरी महत्वपूर्ण इमारत है हैनरी रैमजे के नाम पर निर्मित "रैमजे हौस्पिटल"। इसकी लागत थी लगभग सवा दो लाख, जिसको चन्दे के रुप में पूरे प्रान्त ने दिया। वर्तमान में इसका नाम गोविन्द बल्लभ पन्त औशधालय रख दिया गया है। सन् 1896 में सर चार्ल्स क्रौस्थवेट के नाम पर क्रौस्थवेट हौस्पिटल की स्थापना हुई। भूमि का टुकड़ा लाला दुर्गासाह से किया गया। मुख्यत: इसमें भारतीय लोगों का इलाज होता था। वर्तमान में पर्वतीय क्षेत्र के स्वतन्त्रता सेनानी बद्रीदत्त पाण्डे के नाम पर यह हौस्पिटल है। उन्नीसवीं सदी में नैनीताल में जो सुन्दरतम भवन निर्मित हुआ– वह है आज 'गवर्नमेन्ट हाउस'। इस भवन के बनने में अपने पीछे इतिहास की कई कड़िया छोडी है। 1865 में स्टोनले कम्पाउण्ड राजभवन के लिए छाँटा गया, फिर शेर के डाँडे में ही मैल स्टेट, जहा पर सर विलियम म्योर, सर जॉन स्ट्रैची, सर जौर्ज कूपर रहे। सन् 1880 के भूस्खलन में मैल्डन हाउस काफी अंश में ध्वस्त हो गया तो सैन्ट लू को यह गौरव प्राप्त हुआ।

इसका क्षेत्रफल 82 हैक्टेयर है। जिसका कुछ भाग डायोसेसन, आर्डमोर, ग्वौलीखेत, सेन्ट निकोलस चर्च, सेन्ट मेरी तथा सेन्ट जोसफ से खरीदा गया। बम्बई के शिल्पी स्टीवैन्स तथा ओरटेल (एक्ज्यूक्यूटिव इन्जीनियर) ने भारत का नक्शा बनाया, वाइल्डब्लड की देखरेख में भवन का निर्माण किया गया। स्वयं लेप्टीनेन्ट सर ऐन्टनी मैक डोनेल ने अनेक सुझाव इस रचना के लिए दिए।

## 19 वीं सदी के भूस्खलन

पर्वतीय स्थल के अनेकानेक लाभों के अन्तर्गत ब्रिटिश सत्ता नैनीताल के सम्भावित भूस्खलन के खतरों से अनभिज्ञ रही। इसका दुष्परिणाम सन् 1867 का प्रथम भूस्खलन हुआ। इसका कारण प्रथम बार 6 अगस्त 1867 को एक कमेटी की स्थापना नगर की सुरक्षा हेतु की गई जिससे पानी और मैले के निकास हेतु व्यवस्था पर जोर दिया। अगला भूस्खलन 18 सितम्बर 1880 में हुआ जिसमें 151 व्यक्ति गुमशुदा एवं मृतकों की सूची में शामिल थे जिसमें 43 यूरोप निवासी व शेष भारतीय थे। प्रकृति का यह ताण्डव कुछ ही सेकिण्ड्स में हो गया। सन् 1898 में बलिया नाले ने 'कैलाखन' को अपनी तबाही के आगोश में ले लिया जिसका कारण था अतिवृष्टि। इसके बाद इस समस्या के समाधान हेतु खाली स्थानों पर वृक्षारोपण हुआ, वन व्यवस्था के लिए भी निम्नांकित बिन्दु अपनाने की योजना बनी:–

(1) पर्वतीय स्थलों की भूस्खलन से सुरक्षा।
(2) वनों के हरितभाग की गहनता व गुणवत्ता को उन्नत करना।
(3) विभिन्न स्थलों पर वृक्षारोपण कर प्राकृतिक सौन्दर्य को भी द्विगुणित करना।
(4) ईंधन के उत्पादन को सुरक्षित रखना जब तक कि अन्य साधन उपलब्ध न हों। शनै: शनै: हिल स्टेशनन के रुप में नैनीताल की ख्याति दूर–दूर तक फैल गई। हर पर्यटकों की संख्या में इजाफा होता रहा। सन् 1961 में 16,080 पर्यटक आए तो 1971 में 25,167 और अब तो संख्या लाखों तक पहुँच चुकी है।

## वर्तमान स्थिति

ग्रीष्म काल में नैनीताल अधिकतम पर्यटकों का आकर्षित करता है, जिसमें 90 प्रतिशत जनता नवधनिक वर्ग की है, जिनके पास असीमित धन होता है और उसका दुष्परिणाम है इस पर्वतीय स्थली की संस्कृति का हनन और शान्त वातावरण का अनुचित रुप से दोहन व प्रदूषण। दूसरे प्रकार के पर्यटक वे होते हैं जिनके बच्चे स्थानीय पब्लिक स्कूलों में विद्याध्ययन करते हैं। इन विद्यालयों के वार्षिक क्रीड़ा दिवस एवं वार्षिक समारोह के बाद दस या बारह दिन के अवकाश पर बच्चों के माता–पिता उन्हें लेने आते हैं। मार्च व नवम्बर में भी इन विद्यालयों की प्रवेश परीक्षायें होती हैं उस समय भी नैनीताल में भीड़ हो जाती है। अपने बच्चों को इन पब्लिक स्कूलों में पढ़ाना नवधनिक वर्ग के लिए अपने सामाजिक का मापदण्ड हो गया है। पंजाब तथा कश्मीर की समस्या के कारण नैनीताल में पर्यटक बाढ़ सी आने लगी है। यहाँ तक कि दिल्ली व निकटवर्ती जनता तो दो या तीन दिन अवकाश मे भी नैनीताल पहुँच जाती है। खेद का विषय यह है कि नैनीताल

में एवं यहा होटलों में पैसे वालों के लिए तो समग्र सुविधाऐं उपलब्ध है किन्तु मध्यम एवं निर्धन वर्ग के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। धन के पीछे लोग इतने उन्मादित से हो गये हैं कि नियमो ताक पर रखकर मनमाने ढंग से भवनों का निर्माण हो रहा है। रहने वाले घर तक हो में तबदील कर दिए जा रहे हैं, जिनकी संख्या 1950 में मात्र 15 थी, 1981-82 में सात-102, 1987-88 में 134 और आज तो गिनना भी असम्भव है। इस अन्धाधुन्ध निर्माण में चारों और सर्वनाश हो रहा है। पूर्व से ही घोषित असुरक्षित स्थानों में बलात निर्माण भावी का द्योतक तो है ही और इसकी मिट्टी सीमेन्ट से निकास के नाले बन्द हो गए हैं, तथा सीवर लाइन्स का पानी सरोवर में जा रहा है, जो नैनीताल वासियों के स्वास्थ्य के लिए बहुत बड़ा प्रश्न चिन्ह है। यही नहीं नैनी सरोवर के स्त्रोत वर्षा काल में इस कचरे के कारण नष्ट होते जा रहे हैं। होटलों और भवनों के इन निर्माणों में वृक्षों का कटाव भी मनमाने ढंग से किया जा रहा है। वन विभाग के आंकड़ों के अनुसार सन् 1950 से 1975 तक चालीस हजार वृक्ष दिए गए। यद्यपि सन् 1975 में नैनीताल नगरपालिका के अधिकार क्षेत्र का वन स्थल सरकार के वन विभाग में शामिल कर लिया गया है किन्तु स्थिति अब भी वहीं बनी हुई है।

भवन निर्माण के अतिरिक्त विनाश का दूसरा कारण है वन विभाग द्वारा वनों में प्लानटेशन आदि किया जाता है उसे बकरियाँ आदि पशु नष्ट कर देते हैं। हालांकि 1954 89/XX12-26 के नियम के अनुसार नैनीताल नगर की सीमा के अन्तर्गत बिना लाइसेंस के बकरी पालना अपराध है। लाइसेन्स प्राप्त व्यक्ति अधिकतम तीन बकरियॉं पाल सकता है और एक परिवार में एक ही लाइसेन्स मिल सकता है, किन्तु बलियानाले के क्षेत्र में डिग्री कालेज के क्षेत्र में 40, रैमजे क्षेत्र में 40 बकरियाँ मौजूद हैं। वन विभाग कई बार डाल चुका है किन्तु जनता साथ ही नहीं देती।

सन् 1984 में 'पातन समिति' भी वृक्षों को कटान से बचाने हेतु गठित की गई। उनकी उपलब्धियाँ भी नगण्य ही रही। नए होटलों के निर्माण ने समस्या को और भी बदतर रुप दे दिया है। पुराने बंगले कर होटल बनाने की होड़ सी लग गई है किन्तु वहॉं आउट हाउसेज में रहने वालों की व्यवस्था का कोई भी प्रबन्ध नए होटल मालिक नहीं कर रहे हैं। जिस कारण भविष्य के लिए एक आक्रोशित जन समाज की रचना हो रही है जो नगर की शान्ति भंग कर सकते है। सुरसा की तरह मुँह फाड़ कर यहाँ की शान्ति को निगल रहा है घ्वनि प्रदूषण योजनाकर्त्ता, नौकरशाही, राजनीतिज्ञ लोग यह चाहते है कि इस नगरी के प्रत्येक बंगले में मोटरों व कारों का आवगमन रहे, वर्श भर अधिकारी वर्ग की सरकारी गाड़ियों का तॉंता तो लगा ही रहता है और ग्रीष्म काल में तो क्षत-विक्षत हो जाती है इस नगरी की शान्ति, जब पर्यटकों, राजनेताओं तथा होटलों की गाड़ियों पूरे शहर को जैसे लील लेती है। सन् 1961 से पूर्व के नैनीताल की धवलता, नीरवता, शान्ति कितनी चिरस्मरणीय थी जब 'बस स्टेशन' से आगे नगर की सीमाओं के अन्दर गाड़ियों का प्रवेश निषिद्ध था। अब तो ध्वनि प्रदूषण के साथ-साथ गाड़ियों के धुएँ से शहर में वायु प्रदूषण भी पराकाष्ठा पर है। ध्वनि प्रदूषण का दूसरा असभ्य व अनुचित मूर्त रुप है चलती हुई गाड़ियों में पूरे शोरशराबे के साथ गाने बजाना। वही हाल प्लैट में रुकी हुई गाड़ियों में भी रहता है। संगीत की सुरम्यता, मोहकता, सुन्दरता, नैसर्गिकता को इतना विकृत व विभत्स कर देना कितना बड़ा उपहास है। ब्रिटिश काल में उक्त चीजों पर तो रोक भी ही किन्तु सन् 1960 तक भी नैनीताल नगरपालिका के नियमों के अनुसार अस्पताल, शिक्षालयों, कचहरी आदि के समीप 100 मीटर तक लाउड स्पीकरों का प्रयोग पूर्णत: वर्जित था। अन्य स्थानों पर भी नगरपालिका के अधिशाशी अधिकारी (एक्जीक्यूटिव औफिसर) से अनुमति लेकर मात्र 21/2 घंटे तक ही बजाने की अनुमति दी जाती थी। किन्तु आज तो कानूनों को जैसे ताक पर रख दिया है। इसी के साथ समस्या एक और विकृत रुप सामने आता है प्लैट की पार्किंग स्थल के रुप में तब्दीली। पूरे नैनीताल में प्लैट ही एकमात्र स्थान है जो विभिन्न क्रिया-कलापों का केन्द्रस्थल था, विभिन्न पर्यटकों के पारम्परिक मेलजोल को केन्द्र बिन्दु था, बच्चों की क्रीड़ा स्थली था। प्लैट के संकुचित होने से जैसे सब कुछ नष्ट हो गया। आज की तारीख में गर्मियों में प्लैट में प्रतिदिन 260 कारें तथा 34 बसें पार्क होती है, जिनके ड्राइवरों तथा अन्य सहायकों के लिए शौचालय आदि की कोई अतिरिक्त व्यवस्था न होने के कारण सरोवर के चारों ओर का स्थल बुरी तरह गन्दा और प्रदूषित होता है। इससे और आगे नगरवासियों की सुप्त अवस्था की मिसाल है कई सीवर लाइनों का सरोवर में निकास एवं अनेक विशधारी पौधों का सरोवर में जन्म, जिससे हर वर्ष असंख्य मछलियॉं मरती हैं और दूसरी ओर औरगेनिक प्रदूषण से पूरा नगर प्रभावित है। इसमें इजाफा नैनीताल के 250 घोड़े करते है जो कि गर्मियों में सरोवर के चारों ओंर भी पर्यटकों को घुमाते हैं और इस प्रकार मोटे अन्दाज से सरोवर में 15.85 क्विंटल घोड़ों की लीद प्रतिदिन तथा 12.5 क्विंटल मनुष्यों का मल प्रतिदिन सीजन के समय सरोवर में जा रहा है। इस गन्दगी को और शह दे रही है सरोवर में चलने वाली पैडल बोट्स, जो पूर्व में 10 ही थीं अब पालिका ने 80 से अधिक नौकाओं को अनुमति दे दी है। इन पर बैठे सैलानी खाद्य, अखाद्य हर प्रकार का सामान सरोवर में फैकतें हैं, बिना यह सोचे हुए कि जल प्रदूषित करना कितना बड़ा पाप

है। फलत: सन् 1950 से पूर्व जिस सरोवर में 250 स्रोत थे, अब मात्र 30 स्रोत शेष रह गये हैं। नैनीताल वासियों की जलापूर्ति का एकमात्र साधन यह सरोवर ही है जिसकी दुर्दशा की जा रही है तभी तो नैनीताल की 90% जनता पेट के रोगों से ग्रसित हैं।

कहाँ तक गिनाई जाएँ यह समस्याएँ। सन् 1923 में जल आपूर्ति के लिए नैनीताल में मात्र 8000 की आबादी के लिए पम्प लगाए गए थे और अब भी पम्प उतने ही हैं और अधिक हो गई है लगभग 40000 और गर्मियों में तो यह संख्या लाखों तक जाती है। चीना पीक में भूरखलन के कारण गहरी दरार बन गई है। सितम्बर 1987, 1988 जुलाई 4, 5, 6 1988 को भूस्खलन हुए। 5 जुलाई के भूस्खलन में 6,30 प्रतिशत इमारतें ध्वसित हुई जिससे 450 परिवार प्रभावित हुए। इस त्रासदी का प्रमुख कारण है सूखाताल से विनाय तक मोटर रोड का निर्माण (1976 से 1984 तक)। यह सड़क नैनापीक की तल से गुजरती है और इसे बनाने के लिए चट्टानें तोड़ी गई और हजारों पेड़ काटे गए ताकि किलबरी को पिकनिक स्थल बनाने के लिए मोटर मार्ग की सुविधा हो। मात्र इस सुविधा के लिए योजना बनाने वालों का यह कार्य कितना हास्यास्पद और जानलेवा है। इस भूस्खलन का दूसरा कारण है मैलरोज कम्पाउन्ड में भवन निर्माण की बाढ़ आना। जिस स्थल में 1950 के पूर्व मात्र 2 भवन थे वहाँ अब 200 भवन बन गए हैं। वर्शा के पानी के निकासी हेतु जो नाले बनाए गये थे, लोगों ने अपने घर बनाने के लिए नालों को तोड़कर पत्थर निकाल लिए और ठेकेदार तो दो कदम और आगे हुए। उन्होंने तो चट्टानें रोकने के लिए जो दीवार बनाई गई थी उन्हें ही तोड़कर पत्थर ले आए और उन्हें अपने काम में लगा लिया।

अभी दो वर्ष पूर्व ही 24 जुलाई 1998 को डी०एस०बी० परिसर के समीप जब भूस्खलन हुआ। इसमें जान-माल की हानि तो न हुई किन्तु इसने इस बात को स्पश्ट कर दिया कि भारी निर्माण और छोटी तथा भारी वाहनों का उस क्षेत्र में अनियन्त्रित रुप से निर्माण कितना घातक हो सकता है। पानी की निकासी की उचित व्यवस्था न होना भी भूस्खलन का एक कारण बना। नैनीताल के पहाड़ कच्चे हैं इसीलिए सन् 1880 के भूस्खलन के कारण ही लोगों ने 'शेर का डंडा', स्नोव्यू' आदि स्थानों पर 'रोपवे' की इजाजत नहीं दी थी और वहा पर ही घरों के निर्माण हेतु भी कुछ क्षेत्र निषिद्ध थे किन्तु हमारी व्यवस्था तो धन्य ही है। ज्ञात है कि 'इतिहास स्वयं को दुहराता है' और उसने सन् 1986 में एक 'रोपवे' बनाने की अनुमति दे दी और स्नोव्यू की ओर तो रात ही रात में वन विभाग की भूमि में गैर कानूनी तरीके से इतने अधिक भवनों का निर्माण हो चुका है कि जिसकी गिनती नही की जा सकती है। दुखत परिणाम भुगतना पड़ा 'चेतराम साह ठुलघरिया इन्टर कालेज' को जहाँ 21 जून को विज्ञान की दो प्रयोगशालाओं तथा 10 कक्षों में मलवा ही मलवा भर गया। बलियानाला की समस्या तो इस नगर का सर्वोपरि सिरदर्द है। नैनी सरोवर में जब भी जल का का बहाव सामान्य से ऊपर हो जाता है तो इसी से उसका निकास होता है। सन् 1950 के पूर्व जल निकास के नाले एवं चट्टानें रोकने के लिए जो विशालतम दीवालें बनाई गई थी, तक देखरेख एवं रख-रखाव उच्च स्तर का होता था किन्तु अब तो स्थिति पूरी तरह विपरीत हो गई हैं विभिन्न जानवरों, बकरियों का चरागाह बन गया है बलिया नाला, उसकी सुरक्षा, कोई जिम्मेदार नही। उसके परिणाम भी भयावहता से जनता गाफिल पड़ी है और यदि उसी दिन कुछ अघटन हो गया तो कितनी बडी त्रासदी होगी, यह तो आने वाला समय ही बताएगा।

## सुरक्षा के उपाय

आज समय की पुकार है कि नैनीताल नगर का एक योजनाबद्व तरीके से वृहत्तर नैनीताल के रुप में विस्तार किया जाए। नैनीताल के सन्निकट भीमताल, सातताल, नौकुचियाताल सरोवर 25 किलोमीटर तक विस्तृत सुन्दरतम जल स्रोत है। पर्यटकों के आकर्षण हेतु वह सुविधाऐं इन सरोवर स्थलों पर उपलब्ध करवाई जाऐं जो नैनीताल नगर में उपलब्ध है इसका 'दूसरा नैनीताल' के रुप में विकास कर दिया जाए तो नैनीताल पर पर्यटको का बेशुमार भीड़ का दबाव कुछ कम हो जाएगा। साथ ही उच्च स्तर के सुरक्षित मोटर मार्ग कर रामगढ़, भवाली, मुक्तेश्वर को जोड़कर इन स्थानों का भी सुन्दर पर्यटक स्थलों के लिए विकास किया जाए अर्थात इनका उपनगरों के रुप में विकास किया जाए। हिमालय के तलहटी पर स्थित समग्र कुमाऊँ क्षेत्र को ही पर्यटक स्थल के रुप में सँवारा जा सकता है जैसे चम्पावत, बिन्सर, लोहाघाट, जलना, जागेश्वर, आदि के अतिरिक्त अनगिनत सुन्दर स्थल इस क्षेत्र में भरे पड़ें हैं जिन्हें प्रकृति ने अपने अप्रतिम सौन्दर्य से नवाजा है किन्तु भाग्य की विडम्बना ही है कि पर्यटक लोग उनके विषय में जानते तक नहीं। नैनीताल नगर की आत्मा है 'नैनी सरोवर'। यदि सरोवर नही ंतो नैनीताल शहर नहीं शाश्वत सत्य है। पूर्व में लिखा जा चुका है कि इसका विभिन्न तरीकों से क्षय एवं विनाश रहा है। उपाय यही है कि अब यदि इसे बचाना है तो नौका विहार के अलावा पैडलबोट पर सख्ती से प्रतिबन्ध लगा दिया जाए, साथ ही पर्यटको को नौका विहार के मध्य किसी प्रकार की खाद्य व अखाद्य सामग्री सरोवर में फेंकने को अपराध घोषित किया जाए और सख्त दण्ड दिया जाए। इसी प्रकार उन लोगों के लिए भी कड़े दण्ड की योजना बनाई जाए जिनके घरों की सीवर लाइन का निकास सरोवर में हो रहा है, जिनके घोड़ों की लीद ताल मे आ रही है, जिन लोगों के भवनों के नव-निर्माण से (चाहे होटल बने हों या मकान) नाले, चट्टानें या

दीवालों का नुकसान किया है उनके लिए कड़े दण्ड का प्रावधान किया जाए।

कश्मीर व कुछ समय के लिए शिमला के बन्द होने से अचानक ही नैनीताल में जैसे पर्यटको की भीड़ टूट पड़ी जिसने सदियों से चली आ रही नैनीताल की अपनी संस्कृति को विभिन्नता में एकता वाली संस्कृति को, विद्वान व चैतन्य वर्ग की आभा को, मध्यम वर्ग की शक्ति को तहस-नहस कर दिया है, जिन्होने इस शहर को 'शांन्तिकुंज' के रुप में सँजों कर रखा था। छोटे मोटे दुकानदार, छोटे होटल वाले, मजदूर वर्ग भी पिस ही रहा है गगनचुम्बी के सृजन से। एक और सामाजिक व मनोवैज्ञानिक समस्या यहा हो गई है कि नगर की अधिकतर स्थायी जनता जो यहाँ विभिन्न राजकीय व अराजकीय नौकरियों में है, छोटे-मोटे कार्य या व्यापार आदि कर रहे हैं उनके पास अपने आवास न होने के कारण किराए के मकान मे रहते हैं दूसरी और जो निर्माण हो रहा है उनका मूल्य इतना आकाश को छूता हुआ है उसे नव धनाड्य जो अपने मनोरजनार्थ एक दो माह के लिए शहर में आते हैं वहीं इन भवनों को खरीद सकते हैं और खरीद रहे हैं। स्थायी जनता जो वर्ष भर यहाँ रह रही है वह आवास के लिए अत्याधिक परेशान हैं। इस स्थिति में एक ओर तो नगर की आबादी पर जनसंख्या का अतिरिक्त दबाव पड़ता है और दूसरी ओर इतिहास साक्षी है कि शान्ति प्रिय व शोषित जनता जब जागती है तो विद्रोह का दावानल फूट जाता है। हिसा का लावा चारों और फैल जाता है। इसके दुष्परिणाम की चपेट में सभी आते है वहाँ का विकास। उस नगर की प्रगति, प्रसार, विकास, सबका अन्त हो जाता है। इस समस्या का यही समाधान है कि भवन निर्माण में वरीयता इन्हीं लोगों को दी जाये जो यहाँ के स्थायी निवासी हैं या वर्षो से यहाँ रह रहे हैं, चाहे वे किसी जाति या धर्म से है। इसके साथ ही उपनगरों की व्यवस्था भी की जा सकती है।

### भावी योजना के आवश्यक बिन्दु

(1) नैनीताल नगर मात्र एक पर्यटक स्थल ही नहीं है वरन् यह प्रशासन एवं विद्या का केन्द्र है। अस्तु योजना बनाते समय इन बिन्दुओं पर विशेश ध्यान देना बहुत जरुरी है।

(2) नैनी सरोवर यहाँ के लिए केवल जल आपूर्ति का साधन ही नहीं है वरन् वह नगर के लिए एक अमूल्य आभूषण के समान है। जिसकी आत्मा यहॉ की पर्वत श्रृंखलाओं पर आधारित है। इनके सन्तुलन में किंचित मात्र भी आलोड़न से सर्वनाश हो सकता है। इसे भी एक में रखना होगा

(3) नैनीताल को जिस प्रकार बिना सोचे समझे अन्धाधुन्ध दोहन हो रहा है उसको दृष्टिकोण रखते हुए यह एक कडुवा सत्य है कि इन परिस्थितियों में इस शहर का जीवन अवधि का ही है। अस्तु कुछ वर्श पूर्व कुमायूँ के तत्कालीन कमिश्नर डॉ० आर०एस० टोलिया ने इस बिन्दु को विशेष वरीयता देते हुए नैनीताल, खुर्पाताल, सातताल, भीमताल मे विस्तृत आख्या सम्बन्धित मन्त्रालय को भेजी थी। जिसके उत्तर में केन्द्र की ओर से सरोवर की सुरक्षा के लिए रख-रखाव के लिए 20 करोड़ रुपये की स्वीकृति मिली।

(4) आज तक जितने भी प्रयास इस ओर किये गए हैं उसकी गणना में उपलब्धियॉ अपेक्षा से बहुत कम है। इसके दो कारण हैं यथा राजनीतिज्ञों तथा स्थानीय जनता का अपार सहयोग न मिलना। अस्तु इन दोनों वर्गों के पूर्ण सहयोग लेने के लिए भरपूर करनी होगी।

(5) स्थानीय निवासियों की आवास व्यवस्था की योजनाबद्ध तरीके से तुरन्त सुलाझाया जा सकता है ताकि कोई सामाजिक जन आन्दोलन अपना वीभत्स रुप न ले ले।

(6) नैनीताल की सड़कें पैदल चलने वाले लोगों के लिए ही बनाई गई थी। इसलिए इन पर वाहनों के चलने पर कठोरता से रोक लगाई जाए।

(7) जनता को जागरुक व आने वाले खतरों से आगाह करने के लिए ठोस नागरिक अभियान चलाए जाऐ, जिन्हे मात्र दिखावे के लिए न किया जाए। इसमें स्कूलों में पढ़ने व पढ़ाने वालों की तथा विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्र एवं अध्यापकों की सौ प्रतिशत भागीदारी हो। हर माह अपने अपने क्षेत्र में गोष्ठियाँ आयोजित की जाएँ जिसमें मासिक उपलब्धियाँ एवं भावी मासिक योजना पर भी रचनात्मक कार्य हो। इन संदर्भ में व्यापार मंडल ने पहल की तथा पौलीथीन पर जन सहयोग द्वारा प्रतिबन्ध लगा दिया।

(8) पर्यटक स्थल के रुप में नैनीताल के समीपस्थ स्थित भवाली, भीमताल, मुक्तेश्वर, सातताल, खुर्पाताल, नौकुचियाताल, रामगढ़ आदि को उपनगरों का रुप देकर विकेन्द्रित किया जाए।

(9) माल रोड और सरोवर के चारों और बनी सड़कों पर वाहनों की आवाजाही पर पूर्णत नियन्त्रण लगाया जाए।

(10) पार्किंग के लिए तल्लीताल बस स्टेशन, मैट्रोपोल होटल परिसर तथा सूखाताल हो, जो कि यहाँ के निवासियों की भी राय है और एक बायपास बल्दियाखान से खुर्पाताल के बीच बना दिया जाए ताकि शहर के बीच में वाहन न चलें। साथ ही अल्मोड़ा और हल्द्वानी के मध्य कहीं पर गाड़ियों में पेट्रोल व डीजल भरवाने की व्यवस्था भी की जाए ताकि अलमोड़ा और हल्द्वानी के बीच चलने वाली गाडियाँ

डीजल भरने के लिए बेकार मे नैनीताल में प्रवेश न करें।

(11) बलियानाला के खतरे को तुरन्त समाप्त किया जाए क्योंकि इसकी विभीषिका से तल्लीताल को ही नहीं ज्योलीकोट, हल्द्वानी, पूरे भाबर को खतरा है। इसके लिए सरकार ने 12.38 करोड़ रुपये की मंजूरी दे दी है।

(12) भूस्खलन को रोकने के लिए वर्षा के पानी एवं घरेलू उपयोग के पानी के निकास हेतु नालियों एवं नालों की व्यवस्था की जाए-पुरानों का जीर्णोद्वार हो एवं जनसंख्या के हिसाब से नई नालियॉ एवं नाले बनाए जाएँ, साथ ही चट्टानों को रोकने के लिए दीवारें भी बनाई जाऐं।

(13) चीना पहाड़ के टूटने पर अथाह मलवा जो गिरा है उससे उस क्षेत्र में रहने वाले लोगों की जान व माल को बहुत बड़ा खतरा है। उसे हटवाना योजना के अन्तर्गत होना चाहिए और साथ ही मध्य चीना माल मोटर सड़क-जिसके बनाने के लिए चट्टानें तोडी गई, वृक्षों का कटाव हुआ-वह भी कारण है उक्त मलवे का। इसलिए उस सड़क पर ट्रक, बड़ी गाड़ियों का चलाना प्रतिबन्धित हो जाना चाहिए और इन स्थानों पर निर्माण भी पूर्ण बन्द कर देना चाहिए।

(14) नैनी सरोवर की सुरक्षा हेतु सार्वजनिक शौचालयों का अधिकतम मात्रा में निर्माण करना चाहिए और उनका रख-रखाव भी सुनियोजित ढ़ग से होना चाहिए। सरोवर मे मनोरंजन के लिए प्रवेश पाने के लिए पर्यटकों पर कर लगाना चाहिए और इस प्रकार से एकत्रित धन को सरोवर हितार्थ ही व्यय करना चाहिए।

(15) अयारपाटा की ओर बाज वृक्षों के कटाव के कारण प्राकृतिक स्रोत बन्द हो गए हैं। पुनर्जीवित करना अतीव आवश्यक है। इस क्षेत्र में भी निर्माण पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए।

(16) कुछ समय पूर्व तक सरोवर को जल की आपूर्ति करने वाले स्रोत यथेष्ट समझे थे किन्तु तीन सितारा होटलों के बनने से, पर्यटन स्थल बन जाने के कारण जल आपूर्ति आवश्यकता के अनुसार सम्भव नहीं है। इसलिए अब जल की आपूर्ति के कुछ नवीन उपाय भी सोच कर काम मे लाने चाहिए।

(17) ध्वनि प्रदूषण को खत्म करने के लिए नैनीताल नगरपालिका द्वारा 31 जनवरी 1957 पारित नियम नम्बर 1356/XXII-43 को पूर्णत: लागू करना चाहिए।

(18) अवैधानिक निर्माण जिन जिनसे भूस्खलन का खतरा मंडरा रहा है, पर भी रोक आवश्यकता है।

योजनायें बनती हैं विकास के लिए किन्तु उनको सफलता तभी मिलती है जब उस स्थान का जनमानस जागृत हो, चैतन्य हो। विशाल जनमानस को अनवरत मन्थन करना चाहिए, अपने विचारों का, अपनी चेतना का। अहसास करना होगा कि यह उनक अपना नगर नितान्त अपना, इसका चप्पा-चप्पा उनका अपना है। जिए है इसके ऊपर, साँस ली है यहाँ। यही भाव शाश्वत रहे, अमिट रहे, अटूट रहे तभी यह नगर जीवित रह सकता है।

# शीतजल मत्स्य पालन के द्वारा रोजगार का सृजन

एस अली, एम.एस. अख़्तर एवं डिम्पल ठकुरिया
भा.कृ.अनु.परि.–शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय, भीमताल

स्वतंत्रता के पश्चात देश ने मछली पालन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति की है। मत्स्य उत्पादन के क्षेत्र में चीन के बाद भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। इस संदर्भ में मत्स्य पालन के क्षेत्र में भारत ने निरन्तर प्रगति की है । समुचित मत्स्य उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है कि जिन क्षेत्रों की ओर ध्यान नही दिया गया है उनकी ओर विशेष ध्यान देना होगा। इस दिशा में हमारे शीतजलीय क्षेत्रों के संसाधनों में बहुत अधिक संभावनाएं हैं किन्तु उनके लिए विभिन्न तकनीकी पद्धतियों एवं सहायक सुविधाओं की आवश्यकता है। एक ओर जहां शीतजल क्षेत्रों की पारिस्थितिकी बहुत संवेदनशील है वहीं दूसरी ओर बहुत कम अवसर होने के कारण स्थानीय लोगो द्वारा अपने आर्थिक लाभ के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से पारिस्थिति के पतन के लिए उत्तरदायी है।

भारत में मीठे पानी की मछलियों में शीतजल क्षेत्रों की मात्स्यिकी को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। मीठे पानी की मत्स्य प्रजातियों में मुख्यत: रोहू, कतला अर्थात् भारतीय कार्प, मृगल, महाशीर, हिल्सा, बाम, रेन्बो ट्राउट, पब्दा आदि कुछ महत्वूपर्ण मछलियां हैं जो भारत के मीठे पानी के क्षेत्रों जैसे उत्तराखण्ड, उत्तरप्रदेश, पश्चिम बंगाल, त्रिपुरा, असम, आन्ध्रपदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र आदि राज्यों की नदियों में बहुतायत से पायी जाती है। इन क्षेत्रों में जहाँ भोजन और शिकार की दृष्टि से शीतजल मत्स्य प्रजातियों ने अपने आप को स्थापित कर लिया है वहाँ इसका बहुत अधिक महत्व है। हमारे देश में अनेक जल संसाधन हैं जिनमें पर्वतीय नदियां, नाले, प्राकृतिक झीलें,तथा हिमालय एवं पश्चिमी घाट दोनों क्षेत्रों में मानव द्वारा निर्मित बांध आदि मुख्य हैं। इनमें बहुत अधिक मात्रा में खाद्य तथा अखाद्य, देशी तथा विदेशी दोनों प्रकार की मत्स्य प्रजातियाँ पायी जाती हैं।

पृथ्वी की सबसे बड़ी नदी पर्वत श्रृंखलाएं और पारिस्थितिक तंत्र हिमालय की हैं। इसमें बर्फ से ढ़के पहाड़ एवं ग्लेशियर हैं जो हमारे ग्रह पर ताजे ठण्डे पानी की आपूर्ति का स्रोत हैं। भारत के शीतजल मात्स्यिकी संसाधनों का एक महत्वपूर्ण वितरण देश के उत्तर–पूर्व में पश्चिमी हिमालय तक व्याप्त हैं। हिमालय का विस्तृत क्षेत्र पश्चिम में जम्मू कश्मीर से लेकर पूर्व में अरूणाचल प्रदेश तक 2500 किमी. तक तथा उत्तर से दक्षिण तक 200–400 किमी. तक व्याप्त हैं जिसमें 533604 वर्ग किमी. का क्षेत्र सम्मिलित है। देश के पर्वतीय राज्यों में स्थित जल संसाधनों में मुख्य रूप से पर्वतीय नदियों, धाराओं, उच्च और निम्न ऊँचाई वाली झीलों व जलाशयों में विभिन्न प्रकार की 258 शीतजल की मत्स्य प्रजातियाँ पायी जाती है। शीतजल की मछली भारतीय पर्वतीय क्षेत्र की आबादी के आहार का मुख्य हिस्सा है तथा यह उनकी पौषणिक सुरक्षा को काफी हद तक सुनिश्चित करती है।

## शीतजल मत्स्य पालन के संसाधन

विभिन्न प्रकार की चट्टानों और संरचनाओं के परिणामस्वरूप ढलान, जल–प्रपात एवं झरने आदि होते हैं जो पहाड़ों की हिमालय श्रृंखला में आम हैं।

भारत में ठण्डे पानी की नदियां, धाराऐं, झीलें, जलाशय मौजूद हैं। भारतीय हिमालय से 19 प्रमुख नदी प्रणालियाँ निकलती हैं जिसमें सिंधु, गंगा, ब्रहमपुत्र नदी प्रणाली भी सम्मिलित है। प्रमुख उपरी नदियों की अनुमानित लंबाई लगभग 10000 कि.मी. है। भारत में ठण्डे पानी की नदियों, झीलों एवं जलाशयों के अनुमानित संसाधन इस प्रकार हैं:

| क्र.सं. | जल संसाधन का नाम | नदी/धाराओं की लम्बाई |
|---|---|---|
| 1. | **नदी प्रणाली** | |
| | सिन्धु | 939 कि.मी. अनुमानित |
| | झेलम | 1248 कि.मी. अनुमानित |
| | चिनाब | 1535 कि.मी. अनुमानित |
| | रावि | 494 कि.मी. अनुमानित |
| | व्यास | 923 कि.मी. अनुमानित |
| | सतलुज | 963 कि.मी. अनुमानित |
| | यमुना | 940 कि.मी. अनुमानित |
| | भागिरथी | 315 कि.मी. अनुमानित |
| | लनंदा | 405 कि.मी. अनुमानित |
| | धौलिगंगा | 135 कि.मी. अनुमानित |
| | पिंडर | 135 कि.मी. अनुमानित |
| 2. | **प्राकृतिक जल स्रोत** | |
| | नैनीताल | 73 कि.मी. अनुमानित |
| | भीमताल | 86 कि.मी. अनुमानित |
| | साततालl | 93 कि.मी. अनुमानित |
| | नौकुचियाताल | 65 कि.मी. अनुमानित |
| | डल | 1170 कि.मी. अनुमानित |

**भारतीय पर्वतीय क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के जलीय संसाधन**

| जल संसाधन | लम्बाई/क्षेत्रफल |
|---|---|
| हिमालयी तथा दक्कन का पठारी नदी तंत्र | 8300 किमी. लगभग |
| खारे पानी की झीलें | 2300 हैक्टे. लगभग |
| ताजे पानी की प्राकृतिक झीलें | 1850 हैक्टे. लगभग |
| शिवालिक हिमालयन झीलें | 73 हैक्टे. लगभग |
| हिमालय क्षेत्र की कृत्रिम झीलें एवं जलाशय | 4400 हैक्टे. लगभग |
| पठारी क्षेत्र की प्राकृतिक झीलें | 85 हैक्टे. लगभग |

## शीतजल मत्स्य जैव विविधता

हिमालयी क्षेत्र के जल स्रोतों में विविध प्रकार के मत्स्य जीवों का वास है। भारत में पर्वतीय परिस्थितिकी तंत्र से उपलब्ध कुल मत्स्य जीवों में से मूल और उद्‌भव के केन्द्र के रूप में 17% मछलियां ही प्रलेखित है। भारत के विशाल पर्वतीय क्षेत्र में लगभग 258 मछलियों की प्रजातियों का वास स्थल है, जो कि 21 परिवार एवं 76 वंशों से सम्बन्धित हैं। सर्वाधिक 255 प्रजातियां उत्तर-पूर्वी हिमालय से, 203 पश्चिमी हिमालय तथा 91 मध्य हिमालय व दक्षिण के पठार से दर्ज हैं।

भारत के उपरी क्षेत्रों से दर्ज की गयी लगभग 258 शीतजल की प्रजातियों (देशी एवं विदेशी दोनों) में से स्नो ट्राउट की 17 सदस्य प्रजातियों को उत्तराखण्ड में असेला, सेला अथवा रसेला के रूप से जाना जाता है। हिमाचल में गुलगली और कश्मीर में कौशरगढ़ के रूप में जाना जाता है। इनमें से 10 प्रजातियां-(नाइजर, एसोसिनस, कर्विफ्रॉन, लाँगीफिपिनियस, माइक्रोपोगोन, प्लैनिफ्रॉन, ह्यूगेली, लेबियेटस, नासस, प्रोगेस्टस) शाइजोथोराक्थिज वंश से सम्बन्धित हैं (दो शाइजोथोरैक्स वंश (रिचार्डसोनी व कुमाउंन्सिज) और एक-एक प्रत्येक डिप्टिकस (मैक्यूलेट्स) जिम्नोसाइप्रिस (बिस्वामी) एपिडोपाइगोप्सिज (टाइपस), पाइकोबारबस (कोनिरोस्टिज), स्किजोपाइगोप्सिज (स्टोलिजका) केवल लैपिडोपाइगोप्सिज (टाइपस) पेरियार झील (पश्चिमी घाट) केरल तक ही सीमित है। अन्य सभी प्रजातियां जम्मू एवं कश्मीर क्षेत्र में उपलब्ध हैं।

देशी महाशीर, स्नो ट्राउट, विदेशी ट्राउट और सामान्य कार्प व्यावसायिक रूप से महत्वपूर्ण हैं। मीठे पानी की मछलियों की लगभग 36 प्रजातियाँ (1,300 में से) हिमालय क्षेत्र के लिए स्थानीय हैं। पूरे हिमालय के लिए 218 प्रजातियां सूचीब) हैं। शीतजल हिमालयी धाराओं में मत्स्य प्रजातियों का वितरण प्रवाह दर, सब्सट्रेटम की प्रकृति, पानी के तापमान और भोजन की उपलब्धता पर निर्भर करता है।

प्राकृतिक झीलों और जलाशयों से सम्पन्न पहाड़ी राज्यों को संवर्द्धन के आधार पर 'कैप्चर फिशरीज' कार्यक्रम के तहत मछली उत्पादन के लिए उपयोग किया जा सकता है। मध्य ऊँचाई के लिए चीनी कार्प का उपयोग करके मिश्रित मछली पालन का परिचय पहाड़ी क्षेत्रों से मछली उत्पादन बढ़ाने में एक बड़ी सफलता है। जलवायु परिवर्तन के कारण हिमालयी क्षेत्र की उत्तराखण्ड, हिमांचल प्रदेश, जम्मू कश्मीर एवं अरूणांचल प्रदेश सहित 150 देशीय मत्स्य प्रजातियां प्रभावित हुयी हैं। हिमालय क्षेत्र में पायी जाने वाली कामन कार्प, स्नो ट्राउट एक खाद्य मछली के रूप में काफी पसंद की जाती है। मानवीय गतिविधियों के कारण हिमालयी क्षेत्रों में इनके वास स्थलों को काफी क्षति पहुंची है। अन्य कारको में प्रदूषण, वैश्विक ऊष्णता, नदियों पर बनने वाले बांध, डायनामाइट का प्रयोग, करंट तथा विदेशी प्रजातियों का प्रवेश इत्यादि के कारण भी इस क्षेत्र की मत्स्य सम्पदा को काफी क्षति पहुंची है।

भौगोलिक संरचना एवं जलवायु की विविधता पर्वतीय क्षेत्र में अनेक सूक्ष्म आवास प्रक्षेत्रों को जन्म देती है, जिस कारण क्षेत्र में प्रचुर पादप एवं जन्तु विविधता दिखायी देती है। उपरोक्त विभिन्नता के कारण ही इन क्षेत्रों में अनेक मत्स्य प्रजतियाँ पायी जाती हैं। अभी तक हुए विभिन्न मात्स्यिकी सर्वेक्षणों एवं अनुसंधानों के आधार पर राज्य के पर्वतीय जल स्रोतों से लगभग 80 मत्स्य प्रजातियों की उपलब्धता का पता चला है, जिसमें से 70 प्रजातियां पूर्णत: स्थानीय एवं पर्वतीय हैं तथा शेष मैदानी भागों अथवा विदेशों से मत्स्य पालन के प्रयोजनार्थ लायी हुयी हैं।

### 1. स्थानीय प्रजातियाँ

प्रमुख स्थानीय मत्स्य प्रजातियां निम्नवत हैं :

| | |
|---|---|
| माहशीर वर्ग | : सुनहरी माहसीर या हिमालयी माहसीर (टौर पुटिटौरा, टौर टोर) |
| बर्फानी ट्राउट वर्ग | : असेला ट्राउट (साइजोथोरैक्स रिचार्डसोनी) |
| कार्प वर्ग | : कलौंछ (लेबियो डीरो) व (लेबियो डायोचिलस) |
| | लटिया (क्रोसोकिलस लेटियस) |
| | गोटाइला (गारा गोटाइला) |
| | चगुनी (चगुनियस चगुनियो) |
| बेरिल वर्ग | : भारतीय ट्राउट (रायमास बोला) |
| | हैमिल्टन बेरिल (बेरिलियस बेंडेलिसिस) |
| | बरना बेरिल (बेरिललियस बारना) |
| | परसी (बेरिलियस बेरिला) |

| | | |
|---|---|---|
| विडाल वर्ग | : | पत्थर चट्टा (ग्लिप्टोथौरैक्स पेक्टिनोप्टेरसए स्यडोकेनिस सल्केटस) |
| गडेरा वर्ग | : | नीमैकिलस बोटिया, निमेकिलस भिवानी, नीमेकिलस रूपिकोला निमेकिलस मल्टीसियेटस, |
| बाम वर्ग | : | मेस्टेसिम्बेलस आरमेट्स जेनेन्टोडोन केन्सिला |
| सोया | : | चन्ना ओरियेन्टलिस |
| अन्य | : | पथूरा (ब्वानियां आस्ट्रेलिस) बिल्ली (एम्बलीसेप्स मैन्गोइस) |

2. मत्स्य पालन में उपयोगी देशी प्रजातियां

| | | |
|---|---|---|
| रोहू | : | लेबियो रोहिता |
| कतला | : | कतला कतला |
| नैन | : | सिराइनस मृगाला |

3. मत्स्य पालन में उपयोगी विदेशी प्रजातियाँ

| | | |
|---|---|---|
| कामन कार्प | : | साइप्रिनस कार्पिओ |
| ग्रास कार्प | : | टिनोफेरिंगोडोन इडेला |
| सिल्वर कार्प | : | हाइपोफथेलमिक्थिस मोलिट्रिक्स |
| इन्द्रधनुषी ट्राउट | : | आन्कोरिन्कस माइकिस |
| भूरी ट्राउट | : | साल्मो ट्रूटा फेरियो |
| सुनहरी कार्प | : | कैरेसियस आरेटस, कैरेसियस कैरेसियस |
| लार्वा भक्षी | : | गम्बूसिया एफिनिस |

उपरोक्त पर्वतीय प्रजातियों के अतिरिक्त राज्य के मैदानी भागों में अन्य प्रजातियां भी पायी जाती हैं। जिनमें लेबियो, सौल, मांगूर, सिंघी, गूंछ, चीतल आदि मुख्य प्रजातियाँ हैं।

शीतजल की इन मत्स्य प्रजातियों में आवश्यक अमीनो एसिड, खनिज और ट्रांस ऐलिमेंट व कम वसा वाले पदार्थो की बहूलता होने के कारण मछली को व्यापक रूप से एक स्वास्थ्य वर्धक भोजन के रूप में मान्यता दी जाती है। इन मत्स्य प्रजातियों में हृदय सम्बन्धी विकारों को दूर करने की पोशणिक क्षमताएं होती हैं। ये मत्स्य प्रजातियाँ कई अन्य पोशक तत्वों के भी प्रसिद्ध स्रोत हैं जिस कारण इनको एक स्वस्थ्य भोजन के रूप में अंगीकार किया जाता है। पशु प्रोटीन के रूप में मछली को एक उत्तम स्रोत के रूप में माना जाता है। ठण्डे पानी की मछली मानव के लिए अत्यधिक असंतृप्त वसीय अम्लों जैसे इकोसापेटेनोइक अम्ल तथा डोकोसाहेक्सैनोइक अम्ल का प्रमुख आहार स्रोत है। इसके अतिरिक्त मछली के तेल में ओमेगा-3 फैटी ऐसिड कई स्वास्थ्य स्थितियों के लक्षणों पर लाभकारी प्रभाव डालता है जिसमें प्रतिरक्षा और उत्तेजक तंत्र सम्मिलित है। यह ब्लड प्रैशर के उतार-चढ़ाव को नियन्त्रित करता है जिससें हार्ट अटैक का खतरा कम होता है। इन प्रजातियों में कैल्शियम, फॉस्फोरस व दूसरे अन्य सूक्ष्म पोशक तत्व भी विद्यमान होते हैं।

## शीतजल की आखेट योग्य प्रजातियाँ

महासीर को विश्व भर के मत्स्य आखेटकों की प्रथम वरीयता प्राप्त है। आकर्शक रंग, बड़े-बड़े सुंदर शल्क, बड़ा सिर, विशाल आकार, विशिष्ट स्वाद, देर तक खराब न होने वाला मांस तथा आखेटकों के चारे से विशेष लगाव व फंसने के बाद चरम सीमा तक संघर्षशील प्रकृति के कारण महासीर की गणना विश्व की प्रमुख आखेट योग्य मछलियों में की जाती है। भारतीय ट्राउट भी अन्य आखेटकों की पसंदीदा प्रजाति है। ताम्र महासीर एवं गहरे रंग की महासीर आदि अन्य आखेट योग्य प्रजाति हैं। इसकों बढ़ावा देकर पारिस्थितिकी प्रणाली को विकसित किया जा सकता है तथा किसानों की आमदनी को बढ़ाया जा सकता है।

## प्रमुख भोज्य प्रजातियाँ

उपरोक्त प्रजातियां आखेट के साथ-साथ भोजन हेतु सर्वथा उपयुक्त व स्वादिष्ट मानी जाती है, इनके अतिरिक्त बर्फानी ट्राउट, छोटी कार्प व बेरिल की भी क्षेत्र मे अच्छी माँग है।

## अलंकारी मत्स्य प्रजातियाँ

पर्वतीय क्षेत्र में विदेशी-चीनी कार्प वर्ग की मत्स्य प्रजातियाँ (ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प) कुछ स्थानों पर छोटे आकार की बहुत आकर्षक, रंग-बिरंगी प्रजातियाँ भी पायी जाती हैं, जिनका प्रयोग एक्वेरियम प्रजातियों के रूप में किया जा सकता है। चीतल (बोटिया अल्मोड़ी), लाल या गुलाबी बार्बी (पंटियस कोनकोनियस), टिक्टो बार्बी (पंटियस टिक्टो), सुनहरी बार्बी (पंटियस जेलियस) आदि प्रजातियों की एक्वेरियम मछली के रूप में बहुत मांग है।

भारत के हिमालय क्षेत्रों में 258 मछलियों की प्रजातियाँ उपलब्ध हैं जिनमें से 187 (14%) मछलियां अपनी सजावटी आकृति व रंगरूप के कारण प्रसिद्ध हैं। सजावटी मछलियों को उनके सुंदर रंग, आकृति और स्वभाव के अनुसार "जीवित जेवर" कहा जाता हैं हालांकि सभी मछलियाँ जिनका आकार विचित्र होता है उनको को भी सजावटी मछलियों की तरह पाला जाता है।

आजकल सजावटी मछलियों का पालन फोटोग्राफी के बाद दूसरा महत्वपूर्ण शौक बन गया है। प्राचीन काल से ही इन सजावटी मछलियों का पालन एक शौक माना जाता है। ये हमारे सामाजिक व धार्मिक जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखते है। वास्तुशास्त्र के अनुसार भी मछलियों को घर में पालने से सुख, धन, स्वास्थ्य व भाग्य में वृद्धि होती है तथा घर के सदस्यों के बीच घनात्मक ऊर्जा का संचार होता है। कई धार्मिक ग्रन्थों से पता चला है कि सभी धर्मों में मछलियाँ एक विशिष्ट स्थान रखती है। हिन्दुओं में महत्वपूर्ण देवता विष्णु के 10 अवतारों में से पहला अवतार मत्स्य रूप ही था। बंगाली समाज में इसे प्रजनन का प्रतीक माना जाता है तथा इसाई व बौध समाज में इसका धार्मिक महत्व है। अब तक पर्वतीय नदियों में किये गये सर्वेक्षण के अनुसार ये निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत का ऊपरी भू-भाग सजावटी मछलियों से परिपूर्ण है। पर्वतीय क्षेत्र में मिलने वाली कुछ सजावटी मछलियों की सूची निम्नलिखित है:

1. पुन्टियस चिलिनोयड्स
2. पी.कॉन चोनियस
3. पी. डुकैई डे
4. पी. टिक्टो
5. पी. जेलियस
6. बेरिलियस बरना
7. बेरिलियस बउना
8. बेरिलियस बेन्डिलिसिज
9. बेरिलियस वागरा
10. रायमस बोला
11. गारा गोट्याला
12. गारा इरनाटा
13. कोई कार्प
14. गोल्ड फिश
15. नामाचियस बिवानी
16. नामाचियस बोटिआ
17. नामाचियस कोरिका
18. नामाचियस रूपिओला

### शीतजल मात्स्यिकी का भविष्य

शीतजल क्षेत्रों की उपलब्धि इन क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के संतुलित प्रयोग से जुड़ी है। इन संसाधनों के अवैज्ञानिक दोहन से न सिर्फ पर्वतीय क्षेत्रों को खतरा उत्पन्न हुआ है अपितु मैदानी भागों को भी इससे नुकसान हुआ है। इसलिए पर्वतीय क्षेत्रों की उन्नति का कार्यक्रम तैयार करते समय इन संसाधनों के संरक्षण तथा उचित व कुशल प्रयोग पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिससे स्थानीय जनता को आर्थिक लाभ प्राप्त हो सके। जनसंख्या दबाव के कारण पर्यावरण में परिवर्तन आया है। जैसे-झीलों में प्रदूषण से पानी की मात्रा तथा गुणवत्ता दोनों का ह्रास हुआ है जिसके फलस्वरूप स्वेदशी मछलियों को खतरा उत्पन्न हो गया है तथा कुछ प्रजातियाँ या तो लुप्त हो गयी हैं या फिर कुछ लुप्त होने के कगार पर हैं। मछली पकड़ने में अधिक यत्न करना पड़ रहा है तथा प्राकृति जल स्रोतों में मछलियों की संख्या घट गयी है। पहाड़ों तथा उसकी तलहटी में शहरीकरण तेजी से बड़ रहा है। इसके कारण भी जल-संसाधनों पर दबाव पड़ रहा है। गुणवत्ता युक्त पानी की मात्रा में कमी के कारण मत्स्य प्रक्षेत्रों की संख्या भी समिति हो जाएगी, इसलिए प्रदूशण से होने वाले इस विनाश को रोककर मत्स्य प्रक्षेत्र को बढ़ाना आने वाले वर्षों में एक प्रमुख चुनौति भरा कार्य होगा।

इस स्थिति में पर्वतीय क्षेत्रों में शीतजल मात्स्यिकी के विकास हेतु दो रास्ते हैं- संसाधनों का संरक्षण तथा महत्वपूर्ण स्वेदशी एवं विदेशी शीतजल मत्स्य प्रजातियों की पैदावार को बढ़ावा देना। शिशु मत्स्य की उचित देखभाल, हैचरी का उचित प्रबन्धन, मछलियों को उचित पोषक तत्व तथा जैव तकनीक द्वारा मत्स्य अंकुरण में उन्नति के माध्यम से ही यह संभव हो सकेगा। इस संदर्भ में निम्न कार्यक्रम सुझाए गए हैं जिन्हे समयबद्ध रूप से कार्यान्वित करने की आवश्यकता है:-

- जी.आई.एस. तथा दूर संवेदी तकनीक द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों के जल संसाधनों का व्यापक पैमाने पर सर्वेक्षण होना चाहिए ताकि शीतजल मात्स्यिकी के सम्भावित संसाधनों को निर्दिष्ट किया जा सके
- हिमालय में विद्यमान विभिन्न नदियों, धाराओं तथा झीलों आदि में शाइजोथोराक्थसीड व महासीर मत्स्य संसाधनों का आंकलन होना चाहिए जिससे उनकी संख्या में ह्रास तथा अन्य खतरों के विषय में पता चल सके
- उनके प्राकृतिक प्रजनन क्षेत्रों के विशय में भी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए ताकि उनके संरक्षण हेतु उनहे 'सेन्चुरी' घोषित किया जा सके
- इन जल संसाधनों के उन पारिस्थितिकीय घटकों की पहचान होनी चाहिए जो 'शाइजोथोराक्थसीड' तथा 'महासीर' मछलियों की संख्या में कमी के लिए उत्तरदायी है।
- पर्वतीय क्षेत्रों की झीलों तथा धाराओं में मछली पकड़ने के लिए प्रयुक्त होने वाले उचित साधनों, जाल आदि की उन्नति के लिए अन्वेशण होना चाहिए।

- खुले पानी में मछलियों की संख्या में उत्पत्ति सम्बन्धी विभिन्नता का आंकलन होना चाहिए जिससे यदि इसमें कोई दोश आ रहे हों तो उसका पता लगाया जा सके।
- महासीर तथा दूसरी अन्य मछलियों के बीज को व्यावसायिक उत्पादन हेतु हैचरी की स्थापना उचित स्थानों पर की जानी चाहिए।
- आवश्यक पोशक आहार के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी चाहिए तथा इस विषय में शीतजल मत्स्य आहार तैयार करना चाहिए।
- मत्स्य प्रक्षेत्र प्रबन्धन तकनीक को उन्नत करना चाहिए ताकि शिशु अवस्था से किशोरावस्था तक मछलियां नियन्त्रित वातावरण में पल सके तथा उनकी प्रकृति पर निर्भरता कम सके।
- महत्वपूर्ण देशी प्रजातियों की पैदावार को बढ़ावा देने के अलावा विदेशी प्रजातियों के पालन पोषण को भी प्राथमिकता देने की आवश्यकता है।

# निदेशालय में हिन्दी सम्बन्धी गतिविधिया

भा.कृ.अनु.प.-शीतजल मात्स्यिकी अनुसंधान निदेशालय

भीमताल-263 136, नैनीताल, उत्तराखंड, भारत

E.mail: dcfrin@gmail.com, director.dcfr.dcfr@icar.gov.in

Website: www.dcfr.res.in